प्रकाशक

मन्त्री-श्री जवाहर विद्यापीठ,
भीनासर-३३४४०३
बीकानेर (राजस्थान)

❀

संस्करण—प्रथम संवत् २००४
द्वितीय संवत् २०२२
तृतीय संवत् २०२५
चतुर्थ संवत् २०३६
पंचम संवत् २ ४३
षष्ठम संवत् २०४९
सप्तम् संवत् २०५२

❀

❀ मूल्य 18) रुपये

❀ आवरण अमित भारती बीकानेर

❀

❀ मुद्रक—

जैन आर्ट प्रेस
(श्री अ भा साधुमार्गी जैन संघ द्वारा संचालित)
समता भवन बीकानेर (राजस्थान)
पिन—३३४ ५

प्रकाशकीय

महान् युगद्दष्टा, वैचारिक क्रान्ति के सूत्रधार युग प्रवर्तक ज्योर्तिधर जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा के लोकोपकारी व्याख्यानो को 'जवाहर किरणावली' के रूप मे प्रकाशित कराने का प्रमुख श्रेय भीनासर के कर्मनिष्ठ, आदर्श समाजसेवी श्रावक रत्न स्वर्गीय सेठ श्रीमान् चम्पालालजी वाठिया को है। विराट व्यक्तित्व की वाणी को कालजयी वनाने मे आपने अनुपम दूरदर्शिता एव अभूतपूर्व सूझ-बूझ का परिचय दिया है। इस चिन्तनशील प्रवचन साहित्य से अध्यात्म का अमृत पान कर अवगाहन का शुभ अवसर ही नही मिलता, जीवन के अन्तर्मुखी विकास मे भी महत्वपूर्ण प्रभाव पडता है।

ज्ञातव्य है कि विक्रम सवत् २००० मे श्रीमद् जवाहराचार्य का भीनासर मे स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् उनकी स्मृति को अक्षुण्ण वनाने हेतु स्वर्गीय सेठ श्रीमान् चम्पालाल जी वाठिया के अथक प्रयासो एव समाज के उदार सहयोग से श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर की स्थापना की गई। सस्था की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य जवाहर साहित्य को लागत मूल्य पर प्रकाशित कर इसका अधिकाधिक प्रचार-प्रसार करना रहा है और अव तक सस्था ने पडित शोभाचन्द्र जी भारिल्ल के सम्पादकत्व मे जवाहर किरणावली की ३५ किरणो का प्रकाशन कर एक उल्लेखनीय कार्य किया है।

विश्व–साहित्य में अनेक महापुरुषों की गौरव-गाथाएं अंकित हैं उनमें शालिभद्र के चरित का अनूठा स्थान है। प्रस्तुत पुस्तक का चरित्रनायक शालिभद्र ही है।

शालिभद्र-चरित को देखें तो शालिभद्र का जन्मस्थान और निवास–स्थान कहां थे उसके माता–पिता कौन थे उसने अपना जीवन-यापन कैसे किया आदि जीवन-व्यवहार की परम्पराओं का एक विस्तृत क्रम सामने आता है। परन्तु इन ऊपरी बातों को जान लेने मात्र से काम नहीं चल सकता। प्रत्येक वस्तु का मूल्य उसमें रहे हुए सार–भूत गुण के कारण होता है। कथानक के सम्बन्ध में भी यही बात चरितार्थ होती है। अतः कथानक के सार-तत्त्व को ग्रहण करने की ओर हमारा लक्ष्य होना चाहिये तभी हम जीवन के अभ्युदय को सिद्ध कर सकेंगे।

शालिभद्र का चरित्र एक विकासशील पुण्य-पुरुष के जीवन की गौरव गाथा है। इसमें गर्भित आदर्श को अपने जीवन में घटित करने वाला प्रत्येक व्यक्ति शालिभद्र के समान कीर्तिशाली और पुण्य-पुरुष बन सकता है।

शालिभद्र की ऋद्धि प्रसिद्ध है। हम में से प्रत्येक वैसी ऋद्धि की कामना करता है और कल्पना करके प्रसन्नता का अनुभव करता है। इस ऋद्धि की प्राप्ति के मूल स्रोत अर्थात् दान का फल सर्वत्र हितकारी होता है। इसी विषय का विशद विवेचन शालिभद्र चरित की कथावस्तु है।

शालिभद्र चरित विषयक ये प्रवचन पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा ने बीकानेर में फरमाए थे। उन्हीं

के आधार से संकलित और सम्पादित होकर ये जवाहर-किरणावली—किरण २० के अन्तर्गत प्रकाशित हुए और फिर उक्त सस्करण के अप्राप्य होने की स्थिति मे श्री गणेश स्मृति ग्रथमाला की ओर से पुन प्रकाशित किए गए। प्रस्तुत प्रकाशन उसी सस्करण का पुनर्मुद्रण है।

शालिभद्र चरित का पचम सस्करण धर्मनिष्ठ सुश्राविका वहिन श्रीमती **राजकुंवर बाई मालू**, बीकानेर द्वारा श्री जवाहर साहित्य समिति, भीनासर को साहित्य-प्रकाशन के लिए प्रदत्त धनराशि से प्रकाशित हुआ था। सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए वहिन श्री की अनन्य निष्ठा चिर-स्मरणीय रहेगी।

दक्षिण दीप श्री धर्मेश मुनिजी म सा, कविरत्न श्री गौतम मुनिजी म सा, विद्वद्वर्य श्री प्रशम मुनिजी म सा ठाणा ३ ने दीर्घकाल तक दक्षिण भारत मे व्यापक भ्रमण किया एव धर्म का उद्योत किया। आपके प्रेरक प्रवचनो से मद्रास मे युवा—क्रान्ति फूट पडी। फलस्वरूप "श्री दक्षिण भारतीय समता युवा सघ" का व्यापक स्तर पर वि स २०४० श्रावण कृष्णा तृतीया पूज्य गणेशाचार्य जन्म-जयन्ती पर गठन हुआ।

युवा सघ के विभिन्न उद्देश्यो मे एक उद्देश्य है साहित्य प्रकाशन का। इसी उद्देश्य के अन्तर्गत प्रस्तुत शालिभद्र चरित का छठवा सस्करण प्रकाशित करने के लिए युवा सघ ने श्री मेघराज जी सुगनी वाई चोरडिया—निधि से आर्थिक सहयोग प्रदान किया है तथा प्रस्तुत सातवा सस्करण उसी राशि से प्रकाशित किया गया है।

युवा संघ ने अपने स्तर पर छोटी-मोटी लगभग १२ पुस्तकें प्रकाशित कर अमूल्य वितरित करके ज्ञान प्रचार के कार्य को महत्त्वपूर्ण बढ़ाया जो वस्तुत अनुकरणीय है।

युवा संघ को प्रस्तुत संस्करण के प्रकाशनार्थ प्रदत्त आर्थिक सहयोग के लिए संस्था साधुवाद एवं आभार प्रकट करती है।

संस्था के पुस्तकाध्यक्ष श्री खेमचन्द जी छल्लाणी के प्रयासों से इनका अर्थ सहयोग प्राप्त हुआ है तथा जवाहर किरणावली प्रकाशन में इनकी सक्रिय भूमिका के लिए संस्था आभारी है।

प्रकाशन कार्य में श्री अ भा साधुमार्गी जैन संघ और उसके द्वारा संचालित जैन आर्ट प्रेस का समिति को पूर्ण सहयोग रहा है एतदर्थ समिति उनके प्रति आभार प्रकट करती है।

चम्पालाल सेठिया	सुमतिलाल बांठिया
अध्यक्ष	मंत्री

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर

अनुक्रमणिका

शालिभद्र-चरित

१ : आमुख

सभी जानते हैं कि बिजली का बटन दबाते ही प्रकाश जगमगा उठता है। दरअसल उस प्रकाश का सम्बन्ध बिजलीघर (पावर हाउस) के साथ है। बिजली का बटन दबाकर बच्चा भी प्रकाश कर सकता है, लेकिन पावर-हाउस बन्द हो तो प्रकाश नही होता। इससे यह बात प्रकट होती है कि असली महत्व बटन का नही, पावर-हाउस का है और असली काम बटन दबाना नही, पावर (शक्ति) पैदा करना है।

शालिभद्र की ऋद्धि प्रसिद्ध है। प्रत्येक जैन व्यापारी वैसी ऋद्धि की कामना करता है। उसकी ऋद्धि की कल्पना करके प्रसन्नता का अनुभव करता है। मगर देखना चाहिए कि ऋद्धि कहा से आई है ?

शालिभद्र की ऋद्धि का मूल स्रोत-उद्गम स्थान बतलाना ही इस कथा का उद्देश्य है।

प्रस्थान

जाति से यह गूजरी थी। उसके गांव का पता नही क्या नाम था। पति के नाम को भी हम नही जानते। सिर्फ यही मालूम है कि वह किसी छोटे-से ग्राम मे रहती थी और वह गाव मगध की राजधानी राजगृह के आस-पास ही कही था। उसका नाम धन्ना था।

एक समय था जब उसका भरा-पूरा परिवार था वह खुशहाल थी। उसके घर में दूध की नदियाँ बहती थीं और अनाज के ढेर लगे रहते थे। वह कितने ही दीन-हीनों को भोजन कराने के बाद भोजन करती थी।

लेकिन काल-गति बड़ी ही विचित्र है। न जाने कौन सी मूसी बीमारी का आक्रमण हुआ और उसका सारा परिवार उसका शिकार बन गया। उस बीमारी से न केवल उसका मानव-परिवार ही वरन् पशु-परिवार भी समाप्त हो गया। रह गया एक पुत्र जिसका नाम था संगम।

धन्ना धन-धान्यहीन हो गई। यहाँ तक कि भरपेट भोजन भी उसके लिये कठिन तपस्या बन गई। कड़ी मेहनत मजूरी करके कठिनाई से अपना पेट पालती और संगम का संरक्षण करती थी।

धन्ना की बाह्य सम्पत्ति समाप्त हो गई थी फिर भी वह एकान्त दरिद्र न थी। सद्विचार और धर्म भावना की आंतरिक सम्पत्ति उसके पास पर्याप्त थी। स्त्री जाति में स्वभावत दृढ़ता और धीरज की कमी देखी जाती है पर धन्ना इसके लिये अपवाद थी। उसमें कूट-कूटकर दृढ़ता भरी थी। इसका कारण उसकी धर्म भावना थी। धर्मभावना मनुष्य को घबराने से रोकती है और कठोर से कठोर प्रसंग पर भी शांत चित्त रहने की प्रेरणा करती है। धर्ममय भावना का आंतरिक आदेश प्रत्येक परिस्थिति को समभाव से स्वीकार करने की क्षमता प्रदान करता है।

साधारण स्त्री होती तो ऐसे विकट प्रसंग पर कौन जाने क्या कर बैठती? पर नहीं यह धन्ना थी, असाधारण नारी।

उसने सोचा -'चिन्ता किसी भी मुसीबत का इलाज नही, वल्कि वह तो स्वय एक बडी मुसीबत है जो सैकडो दूसरी मुसीबतो को घेर कर ले आती है । चिन्ता करने से कोई लाभ नही होगा । चिन्ता मेरे प्राण ले लेगी और वालक सगम अनाथ हो जाएगा । सम्भव है, मेरे न रहने पर सगम का भी जीवन खतरे मे पड जाए। घर का सभी कुछ तो चला ही गया है, अव तो चिन्ता छोड कर धर्म की रक्षा करना ही उचित है । धर्म की रक्षा करने से ही सब रहेगा ।'

लोग समझते हैं—सध्या या प्रात काल सामायिक कर लेना या धर्म का उपदेश सुन लेना ही धर्म है। लेकिन धर्म की व्याख्या इतनी सकीर्ण नही है । धर्म की समाप्ति इतने मे ही नही हो जाती । वास्तव मे धर्म का दायरा बहुत विशाल है और गूजरी धन्ना के चरित्र से उसका यहा दिग्दर्शन होगा ।

धना सोचती है—मेरा पहला धर्म यह है कि जब तक शरीर मे शक्ति है तब तक मांग कर नही खाना चाहिये । वाहर वालो से न मागना यही नही बल्कि कुटुम्ब या सज्जन से भी याचना नहीं करनी चाहिये कि आप मुझे कुछ दीजिए । भगवान् मेरी प्रतिज्ञा की रक्षा करे ।

लज्जा भीख माग कर खाने मे है । मेहनत-मजदूरी करके उदर पोषण करने मे न लज्जा है, न कोई बुराई है। अतएव मेरे लिए यही मार्ग हितकर है । मैं मजदूरी करूगी और जो कुछ पाऊगी उसी से अपना और अपने वालक का पेट पालूगी ।

धन्ना ने मेहनत-मजदूरी करके उदर पोषण करने का निश्चय कर लिया। अब उसके सामने यह प्रश्न उपस्थित

हुआ कि किस जगह रह कर मजूरी करना उचित होगा ? दुष्काल के कारण यहां तो मजूरी मिलती ही नहीं है फिर कहां जाना चाहिए ? अन्त में उसने राजगृह जाने का निश्चय कर लिया। वह अपने लड़के सगम से कहने लगी- बेटा चलो राजगृह। वहां नागरिकों के जीवन में अपना जीवन मिला कर दुःख के दिन काटें।

नागरिक जीवन और ग्राम्य जीवन में क्या अन्तर है इस संबंध में बहुत कुछ विचार विमर्श हो सकता है नागरिक लोग ग्रामीणों को गंवार कहकर उनकी अवहेलना करते हैं और आप सुसंस्कारी बुद्धिमान् तथा अमीर होने का दावा करते हैं। मगर सोचना होगा कि ग्रामीणों की सहायता के बिना नागरिक जीवन का निभना क्या संभव भी है ? नागरिक बड़ी-बड़ी हवेलियों में निवास करते हैं यह ठीक है मगर वे हवेलियां किसके परिश्रम के प्रताप से बनी हैं ? नागरिक सुन्दर और बारीक वस्त्र पहन कर मानों आसमान से बातें करते हैं पर किसकी कड़ी मेहनत ने कपास और रूई पैदा की है ? नागरिक भांति भांति के व्यंजन खाते हैं और अपनी चटोरी जीभ को तृप्त करते हैं लेकिन उनकी सामग्री कहां से आती है ? कौन अन्न पैदा करता है ? अन्न नगर की विलास हवेलियों में या बाजार की चौपड़ में नहीं पैदा होता और न नागरिक उसके लिए पसीना बहाते हैं। यह सब चीजें 'गंवार' समझे जाने वाले लोग ही उत्पन्न करते हैं और इस प्रकार नागरिक का जीवन गवारों की ही मुट्ठी में है।

आज अमीरी का चिन्ह यह है कि इधर का लोटा उधर न रखा जाय। ऐसे कर्तव्य-कायर' अमीर अपने आपको ससार की शोभा समझते हैं और दिन रात कठोर परिश्रम

करने वाले कर्त्तव्यपरायणा ग्रामीणो को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। मगर यह अमीर नागरिक एक दिन के लिये ही यह प्रतिज्ञा कर देखें कि वे ग्रामीणो के हाथ से बनी अथवा उनके परिश्रम से पैदा हुई किसी भी वस्तु का उपभोग न करेंगे, तो उन्हे पता लग जायेगा कि उनकी अमीरी की नीव कितनी मजबूत है ?

- नगर की सडाध से भरी हुई गलियो मे दुर्गन्ध पैदा होती है, अरुचि पैदा होती है, नाना प्रकार की हैजा, प्लेग आदि बीमारिया पैदा हो सकती हैं, मगर अन्न नही पैदा हो सकता। उन गलियो मे विषाक्त वायु का सचार होता है, प्राणवायु का प्रवेश भी नही होता। वहा वनावटीपन का राज्य है, नैसर्गिक सौन्दर्य के दर्शन तक नही होते।

और ग्रामो मे ? ग्राम अन्न के अक्षय भडार हैं। वहा प्राणो का अनवरत सचार है, प्रकृति के सौन्दर्य की अनोखी वहार है।

धन्ना अपने ग्राम को प्राणो की तरह चाहती थी। पर कभी-कभी जीवन मे ऐसे प्रसग उपस्थित हो जाते कि मनुष्य को विवश होकर मन को हारना पडता है और अपनी इच्छा के प्रतिकूल ही वर्ताव करना पडता है। धन्ना की यही स्थिति थी। वह अपने ग्राम्य-जीवन की इतिश्री करके नागरिक-जीवन के साथ सम्बन्ध जोडने जा रही है।

आज के नगरो की स्थिति जैसी निन्दनीय है, उस समय का राजगृह वैसा नही था। वहा धन तो था मगर धर्म के साथ ही था। वहा जो वडे आदमी थे, वे अपने से छोटो को निभाते थे। वहां के पण्डित, मूर्खों को समझा कर अपने नगर

को आदर्श नगर बनाये रखने के लिये यत्नशील रहते थे। भला जो नगर भगवान महावीर के चरणारविन्दों से अनेक बार पावन हुआ हो कैसे सम्भव है कि वहाँ के नागरिकों में कोई न कोई विशेषता न हो ?

राजगृह नगर भले ही स्वर्ग के समान हो फिर भी धन्ना के लिए तो अपना गाँव ही स्वर्ग था। वह उसे त्यागना नहीं चाहती थी। यही कारण है कि धन्ना जब गाँव छोड़ कर रवाना होने लगी तो अतीतकाल की अनेक स्मृतियाँ उसके दिमाग में चक्कर काटने लगीं। उसके हृदय में अपने गाँव और छोटे-से मकान के प्रति पड़ोसियों के प्रति और ग्राम की इंच-इंच भूमि के प्रति अपूर्व ममता उमड़ पड़ी जिसका उसने पहले कभी अनुभव ही नहीं किया था। वियोग के समय ममता अतिशय बलीभूत हो जाती है।

धन्ना के हृदय में जो विचारमंथन हुआ वह कहा नहीं जा सकता। उसे अपना ग्रामीण घर पवित्र पवन देने वाले हरे-हरे वृक्ष निर्मल और पावन जल देने वाले जलाशय और सुख-दुःख में सहानुभूति दिखाने वाले भोले भाले ग्रामीणजन सब याद आने लगे। आज मेरी स्थिति अगर बालक को पालने योग्य भी होती तो मैं इन सबको कदापि न छोड़ती।

अन्त में धन्ना ने अपना हृदय कठिन बनाया और परिचित जनों से विनम्रतापूर्वक विदा ली।

२ कर्त्तव्यनिष्ठा

दो बटोही राजगृह की ओर बढ़े चले जा रहे हैं। उनकी चाल में स्फूर्ति नजर नहीं आती। बदन थकित है।

उनमे एक स्त्री है, एक बालक है। बालक अबोध है। उसमे समझ नाम की चीज अभी पैदा नही है। मा के बताये काम को कर देने के सिवाय उसे अधिक ज्ञान नही है।

स्त्री की चाल साफ बतला रही है कि वह अनमने भाव से चली जा रही है। मानो वह स्वय नही चल रही है, उसका कलेवर ही चला जा रहा है। वह बार-बार मुंह फेर कर पीछे की ओर देख लेती है, जैसे उसका कोई अपना पीछे रह गया है। कभी-कभी वह साथ के बालक पर वात्सल्यभरी नजर डालती जाती है। फिर भी वह निरन्तर चल रही है। स्त्री धन्ना है और बालक सगम है।

धन्ना के गाव और राजगृह मे बहुत ज्यादा फासला नही था। लेकिन दोनो के बीच मे, कुछ दूरी तक वन था। धन्ना वन को पार कर जब कुछ आगे बढी तो उसे राजगृह नगर नजर आने लगा।

जगली पशु जब जगल मे से पकड़ कर नगर मे लाया जाता है तो उसकी दशा विचित्र हो जाती है। धन्ना की भी कुछ-कुछ ऐसी ही स्थिति हो गई। जब तक नगर नजर नही आया था, उसका मन अपने गाव मे और अपने घर मे ही भटक रहा था। नगर दिखाई देते ही झपट कर राजगृह जा पहुची और अनेक कल्पनाओ की सृष्टि करने लगी।

धन्ना सीधे-सादे स्वभाव की ग्रामीण स्त्री है। वह पढ़ना-लिखना नही जानती। वह सोचने लगी—मैं गवार कहलाने वाली स्त्री हू। इस नगर मे मेरी लाज कैसे रहेगी? मैं युवती हू और विधवा हू। मेरे पति परलोक चले गये हैं। बालक अभी अबोध है। सिवाय दीनबन्धु भगवान् के और

किसी का मुझे सहारा नहीं है। प्रभो! मेरी आत्मा में ऐसा बल प्रकट हो कि मैं अपने सतीत्व की भली भांति रक्षा कर सकूं। दीनबन्धु! बिना काम किये हराम का खाने का विचार तक मेरे मन में न आवे। अधिक काम करके थोड़ा लेने की ही भावना बनी रहे। सब लोग मुझे प्रामाणिक मानेंगे तभी मेरे ग्राम की लाज रहेगी।

एक मनुष्य के कृत्य से भी सारे गांव को यहाँ तक कि देश को भी भलाई और बुराई मिल सकती है।

धन्ना के पास एक धूम खाने को भी नहीं था। उसके शरीर पर जो कपड़े थे बस वही साथ में कपड़े थे। हुँडे कुडे अगर उसके घर में रहे होंगे तो चाहे वह टोकरे में भर कर साथ लाई होगी।

धन्ना राजगृह में दाखिल हुई। उसने सोचा—बाजार की ओर जाने से कोई लाभ नहीं है। पास में एक पैसा भी नहीं है कि कुछ खरीद कर बच्चे को दिया जा सके! भूखा बालक खाने की कोई चीज देखकर मचल गया तो क्या होगा? बाजार तो पैसे वालों के लिए है।

यह सोचकर उसने धनिकों की गलियों का रास्ता पकड़ा। इस विचार से कि वहाँ जल्दी कोई मजदूरी मिल जाय तो बच्चे के खाने-पीने का प्रबन्ध कर सकूं।

पुण्य करुणा में है। जो पुण्यवान् होगा वह करुणा वान् होगा और जो करुणावान् होगा वह दीन—दुखियों से प्रेम करेगा। दरिद्र को देख कर वह नफरत नहीं करेगा।

धन्ना एक गली में घुसी। वहा की पुण्यवती स्त्रियों ने धन्ना को देख कर सोचा—यह कोई दुखिया स्त्री है। काम

पडता है, इसका घर-द्वार छूट गया है ।

उनमे से एक ने पूछ लिया—'कहो बाई, तुम कौन हो ? कहा जा रही हो ?'

घन्ना ने विनम्र स्वर मे कहा—'मैं एक विपद्ग्रस्त ग्रामीण स्त्री हू और मुसीबतो की मारी आपके नगर मे आश्रय लेने आई हू ।'

एक तो घन्ना के कहने का ढंग ही कुछ ऐसा था, फिर वे स्त्रिया भी दयावती थी । अतएव घन्ना की बात सुन कर उनका हृदय पसीज उठा । उन्होंने उसे प्रेम के साथ बिठलाकर कहा—तुम भूखी होओगी । दूर से आ रही हो । पहले कुछ खा-पी लो ।

घन्ना—आप दया की मूर्ति हैं और आपके यहा का भोजन भी अच्छा ही होगा । मुझे भूख भी लग रही है फिर भी आपके यहा का भोजन नही कर सकती ।

एक स्त्री—क्यो ?

घन्ना—आज मैं बिना मेहनत का खा लूगी तो मेरी जिन्दगी बिगड जायगी । फिर मुझसे काम न होगा और मैं सीधा भोजन मिलने की ही इच्छा करने लगूगी ।

घन्ना के इस उत्तर से नागरिक स्त्रियो को अपने कर्त्तव्य का भान हुआ और इस बात से वे काप उठी ।

उन्होने कहा—हम तुम्हे काम बताएगी । पहले भोजन तो कर लो ।

घन्ना—कृपा करके पहले मुझे काम बता दीजिए । आप

जितनी जल्दी मुझे काम बताएगी उतनी ही जल्दी मानो भोजन देगी ।

स्त्रियां – तुम्हारे साथ यह बालक भी तो भूखा होगा । तुम भोजन नहीं करती तो इसे करा दो ।

धन्ना—यह बालक भी मेरे जैसा ही है । यह मेरे उद्यम द्वारा लाये हुए सामान में से ही भोजन करता है । किसी का दिया हुआ भोजन नहीं करता ।

धन्ना की इस बात ने स्त्रियों को और ज्यादा प्रभावित किया । वह कहने लगी—ठीक है । जिसके माता पिता निष्ठा वाले होते हैं, वे बालक भी वैसे ही निष्ठावान् होते हैं ।

नागरिक स्त्रियों में से एक ने कहा - अब बातें करना छोड़ो ! बेचारी खुद भूखी है और बालक तो भूख से कुम्हला रहा है । इसे जल्दी कोई काम बता दो ।

तब दूसरी ने पूछा—अच्छा बहिन तुम क्या काम करना जानती हो ?

धन्ना—मैं पीसना–कूटना पानी लाना पशुओं की सार-सम्भाल करना दुहना दूध–दही की व्यवस्था करना और ग्रामीण भोजन बनाना आदि जानती हू ।

एक स्त्री ने कहा – तो ठीक है । मैं तुम्हें भोजन–कपड़ा दू गी । ऊपरी खर्च के लिए भी कुछ दे दिया करू गी । तुम हमारे यहां रहकर काम किया करो । किसी प्रकार तकलीफ नहीं पाओगी ।

धन्ना–धन्यवाद ! मगर मैं इस प्रकार नहीं रह सकू गी ।

मुझे एक अलग कोठरी मिलनी चाहिए, जहा घर बनाकर रह सकू और अपना भोजन आप बनाकर खा सकू । आपके यहा का भोजन करने से मेरा काम नही चलेगा। आपका भोजन दूसरी तरह का होगा, मेरा दूसरी तरह का । मुझे गरीबी मे गुजर करनी है। रईसी भोजन मैं नही कर सकू गी। अपनी मजूरी में ही मुझे निर्वाह करना पडेगा ।

आखिर धन्ना को एक कोठरी मिल गई। उसने लडके को वहा बिठलाया और आप काम मे लग गई। काम समाप्त करके उसे जो मजदूरी मिली, उससे वह बाजार जाकर भोजन सामग्री खरीद लाई। भोजन बनाकर पहले बालक को खिलाया और फिर खुद ने खाया। इसके बाद रास्ते की थकावट मिटाने के लिए वह विश्राम करने लगी।

धन्ना के पास न धन है, न ओढने-बिछाने के लिए वस्त्र ही हैं ।केवल मिट्टी के ही कुछ बर्तन हैं। शृङ्गार की वस्तुओ का तो प्रश्न ही नही उठता। उसे अपने दो हाथो का ही बल है। ससार मे उसका कोई नही है, जो उसके सुख-दुःख का साथी हो, उसे सान्त्वना के दो शब्द कहे। बस वह है और उसका धर्म है। एक नन्हा-सा बालक अवश्य है, जिसे देख-कर वह जी रही है। वह सब तरह से असहाय है, अनाथ है।

धन्ना इस हालत मे भाग्यशालिनी है या अभागिनी ?

प्रश्न अटपटा है। कौन धन्ना को भाग्यशालिनी कह सकता है ? इस दुनिया मे सौभाग्य जिस गज से नापा जाता है, उसे देखते तो उपर्युक्त प्रश्न ही असगत है। लेकिन इस दुनिया से परे भी एक और दुनिया है, जहा के नाप वही नही हैं, जो इस दुनिया के हैं। उसी दूर की दुनिया के नाप से

अगर धन्ना के सौभाग्य को नापा जाय तो निस्सन्देह कहना पड़ेगा कि धन्ना वास्तव में भाग्यशालिनी है ।

धन्ना गरीब है इसलिए पुण्यशालिनी है । गरीब ही पुण्य शाली हो सकता है और धनी नहीं हो सकता यह बात नहीं है । असल में पुण्यवान् कौन है और कैसे है यह बात धन्ना के चरित्र से प्रकट होगी । जिसके चित्त में दया का वास है वही पुण्यवान् है । जो आप-पोषी हैं आप बढ़िया खाते-पीते पहनते ओढ़ते हैं लेकिन आस-पड़ौस के दुःखियों की ओर दृष्टि भी नहीं करते उन्हें पुण्यवान कैसे कहा जा सकता है ?

धन्ना असहाय है फिर भी उसमें दीनता नहीं है । धन्ना दरिद्र है फिर भी बिना मेहनत किये किसी से कुछ नहीं चाहती । वह दूसरे के घर में रहती है फिर भी स्वावलम्बन को नहीं त्यागती । वह युवती है फिर भी उसने पुरुषमात्र को पिता और भाई के समान समझने का सकल्प किया है और उसे निभाने के लिए दृढ़चित्त है । वह अपने कार्य में व्यस्त रहती है फिर भी जब विश्राम करती है तो यही सोचती है कि मैंने जो व्रत लिया है वह जाने न पावे । ग्राम में रहते हुए जिस शील-धन की अब तक रक्षा की है वह कहीं लुट न जावे । मेरे जीवन रूपी स्वच्छ चादर पर कलंक का धब्बा न लगने पावे । वह अपनी हालत को भलीभांति समझती है परन्तु असंतोष की ज्वालाओं में कभी दग्ध नहीं होती । जब जितना पाती है उसी में संतोष मान लेती है ।

अब आप सोचिए कि धन्ना पुण्यवती है या नहीं ?

आज लोग फैशन में डूबे हैं । बम्बई और कलकत्ता के नये-नये फैशनों से भी उन्हें सतोष नहीं

फैशनो का अनुकरण कर रहे हैं। लोगो को आधुनिक नगरो की हवा लग गई है। लेकिन धन्य है वह धन्ना, जो नगर मे निवास करती हुई भी नागरिक रहन-सहन से अछूती ही रही। इस प्रकार जिसे अपनी कुलमर्यादाओ का ध्यान है, जिसके दिल मे दया है, जो अपने धर्म का विचार रखती है, उस धन्ना को अगर पुण्यशालिनी न कहा जाय तो फिर क्या कहा जाय ?

धन्ना जिन सेठानियो के घर मजूरी करने जाती थी, उनके यहा प्राय नये-नये पकवान बनते रहते थे। मगर धन्ना कभी किसी चीज के लिए 'दे कहना तो जानती ही नही थी। कभी कोई सेठानी कोई नई चीज देती हुई उसे कहती—'धन्ना लो, यह ले जाओ, बहुत स्वादिष्ट चीज है। तुम भी खाना और बच्चे को भी खिलाना' तो धन्ना सेठानी की दयालुता और उदारता के लिए उसे धन्यवाद देती हुई कहती—'सेठानी जी ! यह भोजन आपके ही योग्य है। हमारे योग्य नही है। एक बार इसका स्वाद ले लूगी तो दोबारा खाने की इच्छा होगी और चाह बनी रहेगी कि कोई फिर दे दे। यह चाह धीरे-धीरे इतनी बढ जायगी कि मैं मागने भी लगूगी। इसके अतिरिक्त मेरा बालक भी कभी मचल जाएगा तो मैं कहा से लाऊगी ?

इस प्रकार धन्ना उत्तम भोजन पर कभी न ललचाई। वह अपनी मेहनत-मजदूरी से कमाई हुई रूखी-सूखी रोटियो पर ही अपना निर्वाह करती और सन्तुष्ट रहती थी। सेठानियो के पकवानो को वह परतन्त्रता के जाल मे फसाने वाला प्रलोभन समझती थी। वह जानती थी कि अगर मैं जीभ की गुलामी मे फस गई तो मेरी सारी जिन्दगी गुलामी

अगर धन्ना के सौभाग्य को मापा जाय तो निस्सन्देह कहना पड़ेगा कि धन्ना वास्तव में भाग्यशालिनी है ।

धन्ना गरीब है इसलिए पुण्यशालिनी है। गरीब ही पुण्य शाली हो सकता है और धनी नहीं हो सकता यह बात नहीं है। असल में पुण्यवान् कौन है और कैसे है यह बात धन्ना के चरित्र से प्रकट होगी। जिसके दिल में दया का वास है वही पुण्यवान् है। जो खापा-पोपी हैं आप बढ़िया खाते-पीते पहनते ओढ़ते हैं लेकिन आस-पड़ौस के दुखियों की ओर दृष्टि भी नहीं करते उन्हें पुण्यवान् कैसे कहा जा सकता है ?

धन्ना असहाय है फिर भी उसमें दीनता नहीं है। धन्ना दरिद्र है, फिर भी बिना मेहनत किये किसी से कुछ नहीं चाहती। वह दूसरे के घर में रहती है फिर भी स्वावलम्बन को नहीं त्यागती। वह युवती है फिर भी उसने पुरुषमात्र को पिता और भाई के समान समझने का संकल्प किया है और उसे निभाने के लिए दृढ़चित्त है। वह अपने कार्य में व्यस्त रहती है फिर भी जब विश्राम करती है तो यही सोचती है कि मैंने जो व्रत लिया है वह जाने न पावे। ग्राम में रहते हुए जिस शील-धन की अब तक रक्षा की है वह कहीं लुट न जावे। मेरे जीवन रूपी स्वच्छ चादर पर कलंक का धब्बा न लगने पावे। वह अपनी हालत को भलीभांति समझती है परन्तु असंतोष की ज्वालाओं में कभी दग्ध नहीं होती। जब जितना पाती है उसी में संतोष मान लेती है ।

अब आप सोचिए कि धन्ना पुण्यवती है या नहीं ?

आज लोग फैशन में डूबे हैं। बम्बई और कलकत्ता के नये-नये फैशनों से भी उन्हें सन्तोष नहीं होता तो विदेशी

लेकिन ऐसी बातो पर विचार करने वाले आज बहुत कम हैं। लोग तात्कालिक सुख और सुविधा का ही विचार करते हैं। उससे निकलने वाले अन्तिम परिणामो की ओर ध्यान नही देते। कॉड-लोवर-ऑयल, जो मछलियो के कलेजे का तेल हैं, कई-एक दूध मे मिलाकर पीते हैं। ऐसे लोगो मे दया कहा रहेगी ? कपडो मे, दवाइयो मे तथा अन्य वस्तुओ मे चर्बी मिला-मिला कर आपका धर्म नष्ट किया जाता है। आप इन बातो को जानते भी हैं। लेकिन कितने हैं, जो इनका त्याग करते हैं ?

अमुक वस्तु का सेवन मेरे धर्म के अनुकूल है या नही ? इस वस्तु का व्यवहार करने से मेरे कुल की मर्यादा भग होती है या नही ? इत्यादि प्रश्न किसके हृदय मे उठते हैं ? अधिकाश लोग मजा मौज मे पडे हैं ? उन्हें इन बातो से जैसे कोई मतलब ही नही है ?

मगर धन्यवाद है उस धन्ना को, जिसने मुफ्त मे मिलने वाली वस्तुओ का उपयोग नही किया, जो उसके धर्म मे तथा व्रत मे बाधक हो सकती थी। धन्ना ऐसी विवेकवती थी तभी तो उसका पुत्र शालिभद्र हुआ।

धन्ना मोटा और सादा वस्त्र ही पहनती थी। उदारता पूर्वक अपना उतारा हुआ या नया वस्त्र कई स्त्रिया उसे कभी देने लगती थी। पर—

धन्ना तो वस्त्र नही लेवे,
जामे काम जरा नहि होवे।
ज्या से व्रत म्हारा नष्ट होवे,
नहि लेऊ धन्ना इम केवे ॥

के बंधनों में जकड़ जाएगी। इस समय तो मैं सिर्फ काम काज की गुलामी कर रही हूं किन्तु फिर भोजन की भी गुलामी करनी पड़ेगी। भोजन की गुलामी से निस्तार होना कठिन हो जाएगा।

पुण्य की रक्षा इस प्रकार की जाती है! बढ़िया खाना और पहनना एवं जीभ का गुलाम बन जाना पुण्य-शील का लक्ष्य नहीं है। पुण्यवान बनने के लिए जीभ पर अंकुश रखना पड़ता है।

आज की भारतीय प्रजा अगर धन्ना के आदर्श का अनुसरण करती और विदेशी वस्त्रों आदि के प्रलोभन में न पड़ती तथा स्वावलम्बी बनी रहती तो उसे सदियों तक गुलामी न सहन करनी पड़ती। लेकिन विदेशी वस्त्रों और अन्य वस्तुओं ने भारतीय जनता को गुलाम बना रखा है।

राजगृह नगर की उदार-हृदया सेठानियां धन्ना को मुफ्त में और अच्छी नीयत से भोजन देती थी फिर भी धन्ना उसे स्वीकार नहीं करती थी। परन्तु आपको चौगुना अठगुना मूल्य लेकर ऐसी चीजें दी जाती हैं जिनका सेवन करके आप आर्थिक गुलामी के बन्धनों से छूट ही न सकें। फिर भी आप विचार नहीं करते ?

जो वस्तु आपके देश की सम्पत्ति में बाधा पहुंचाती हो अथवा जिसके सेवन से आपके धर्म को आघात लगता हो आपकी कुल-मर्यादा भंग होती हो वह वस्तु अगर मुफ्त में भी मिल रही हो तो भी यदि आप विवेकवान् हैं तो उसे स्वीकार नहीं करेंगे। कौन बुद्धिमान् पुरुष बिना पैसे मिलने के कारण विष खाने को तैयार होगा ?

पर मेरी नियत न बिगडे और मुझ पर किसी दूसरे की नियत न बिगडे । जिन कपड़ो से मेरा व्रत टूटता हो, आगे चलकर जिनके लिये भीख मागने की सम्भावना होती हो, वे कपडे मेरे काम के नही हैं । सेठानी जी ! आपकी उदारता के लिये मैं कृतज्ञ हू । आपने मेरे प्रति जैसी उदारता प्रदर्शित की है, वैसी ही दया भी दिखाइए । आपकी दया इसी मे है कि आप मुझे किसी ऐसी चीज का प्रलोभन न दें, जिससे आगे चल कर मैं खराब हो जाऊ ।

धन्ना की ऐसी-ऐसी ज्ञान भरी बातें सुन कर सेठानिया आश्चर्य मे डूब जाती थी । वे सोचने लगती—'धन्ना को कौन ऐसा गुरु मिला है, जिसने इसे यह उपदेश दिया है ? यह गांवडे की रहने वाली भोली औरत ज्ञान की बातें कहा से सीख सकी होगी ?'

नैसर्गिक गुण के सामने उपदेश की कोई बिसात नही है । नैसर्गिक गुण के होने पर मनुष्य की भावना जितनी ऊची होती है, उपदेश से उतनी ऊची नही हो सकती । वास्तव मे धन्ना बडी पुण्यवती थी । अगर भारतवर्ष की प्रजा धन्ना के कार्यों को पहचान ले और उनका महत्व भली-भाति समझ ले तो थोडे ही दिनो मे अनेक बडे-बडे पाप धुल जाए ।

धन्ना काम-काज से निपट कर आराम करने लगती तो सोचा करती थी—'ससार की विलासवर्धक वस्तुए ही विषय-वासना को उत्पन्न करती हैं । यह सब जीवन को अपवित्र बनाने वाली है । प्रभो ! मुझे इन वस्तुओ से बचाना । मेरा जीवन तेरे ही चरणो मे समर्पित है ।'

धन्ना वस्त्रों को स्वीकार नहीं करती थी। वह नम्रता पूर्वक उत्तर देती— ये वस्त्र मेरे योग्य नहीं हैं। मैं पहना हुआ वस्त्र लेती ही नहीं हू कदाचित् आप बिना पहना वस्त्र द तो भी मैं नहीं ले सकती। मुझे आपकी उदारता और सद्भावना का दुरुपयोग करने का क्या अधिकार है? मैं तो अपनी आय में से ही अपने योग्य वस्त्र खरीद लू गी।

धन्ना का उत्तर सुनकर सेठानियां कहतीं—तू हमारे यहां काम करती है और दरिद्र-सी दिखाई देती है। यह हमारे लिए लज्जा की बात है। कोई क्या कहेगा कि इनकी नौकरानी ऐसी फटी हालत में रहती है। जरा अच्छे कपड़े पहना कर। इसमें तेरी भी इज्जत है और हमारी भी।

धन्ना उत्तर देती—'मैं किसी की नौकरानी नहीं हू केवल काम-काज की नौकरानी हू। आपने बढ़िया कपड़े पहने हैं मैंने सादे और मोटे। मगर इसमें अन्तर क्या हुआ? जैसे आप सन्तुष्ट हैं, वैसे मैं भी सन्तुष्ट हू। आपके सुदिन सदा बने रहें। फिर भी कल्पना कीजिये कि कदाचित् आपके ऊपर मेरी जसी मुसीबत आ पड़ी तो आप क्या करेंगी? आप उस मुसीबत को शांति के साथ सहन करेंगी या हाय हाय करके विकल हो जाएंगी? संसार में सबके दिन सदा समान नहीं बीतते। अतएव मनुष्य को प्रत्येक परिस्थिति के लिये तैयार रहना चाहिये। यह बढ़िया समझे जाने वाले वस्त्र गुलामी के बन्धन में बांधने वाले हैं। अतएव आप अनु-ग्रह करके इन्हें पहनने का आग्रह न कीजिये। मेरे लिये वही कपड़े अच्छे हैं जिन्हें पहन कर मैं अपना काम भलीभांति कर सकू अपना पेट पाल सकू और विलासिता की दुर्गन्ध से बच सकू। मेरे लिये वही कपड़े अच्छे है जिन्हें पहन लेने

पर मेरी नियत न बिगडे और मुझ पर किसी दूसरे की नियत न बिगडे। जिन कपड़ो से मेरा व्रत टूटता हो, आगे चलकर जिनके लिये भीख मागने की सम्भावना होती हो, वे कपडे मेरे काम के नही हैं। सेठानी जी! आपकी उदारता के लिये मैं कृतज्ञ हू। आपने मेरे प्रति जैसी उदारता प्रदर्शित की है, वैसी ही दया भी दिखाइए। आपकी दया इसी मे है कि आप मुझे किसी ऐसी चीज का प्रलोभन न दें, जिससे आगे चल कर मैं खराब हो जाऊ।

धन्ना की ऐसी-ऐसी ज्ञान भरी बातें सुन कर सेठानिया आश्चर्य मे डूब जाती थी। वे सोचने लगती—'धन्ना को कौन ऐसा गुरु मिला है, जिसने इसे यह उपदेश दिया है? यह गांवडे की रहने वाली भोली औरत ज्ञान की बातें कहा से सीख सकी होगी?'

नैसर्गिक गुण के सामने उपदेश की कोई बिसात नही है। नैसर्गिक गुण के होने पर मनुष्य की भावना जितनी ऊची होती है, उपदेश से उतनी ऊची नही हो सकती। वास्तव मे धन्ना बडी पुण्यवती थी। अगर भारतवर्ष की प्रजा धन्ना के कार्यों को पहचान ले और उनका महत्व भलीभाति समझ ले तो थोडे ही दिनो मे अनेक बडे-बडे पाप धुल जाए।

धन्ना काम-काज से निपट कर आराम करने लगती तो सोचा करती थी—'ससार की विलासवर्धक वस्तुए ही विषय-वासना को उत्पन्न करती हैं। यह सब जीवन को अपवित्र बनाने वाली है। प्रभो! मुझे इन वस्तुओ से बचाना। मेरा जीवन तेरे ही चरणो मे समर्पित है।'

धन्ना न जाने किस गहरे विचार में डूबी है कि देने वाले तो खुशी-खुशी उसे देते हैं मगर वह नही लेना चाहती। वह विवेकवती है इसी कारण नहीं लेती है। सचमुच ऐसे विवेकवान व्यक्ति ही अपने जीवन में दाग नही लगने देते। धन्ना अपने पुण्य के कारण सदैव विकारजनक वस्तुओं से बचती रही। 卐

३ सगम का शिक्षण सस्कार

धन्ना बड़े विचार और विवेक के साथ अपना और अपने बालक का निर्वाह कर रही थी। उसकी आकांक्षाओं का दायरा बहुत छोटा था। यही कारण है कि उसे असं तोष और तृष्णा ने कभी पराजित नहीं किया। वह थोड़े में ही सुखी थी।

धीरे-धीरे धन्ना का नन्हा बालक बड़ा हो गया। अब उसे बालक के सम्बन्ध मे विचार करना पड़ा। एक दिन उसने सोचा— यह ग्रामीण लड़का है। यह अमीरों के लड़कों के साथ खेलता रहता है। इसके भी संस्कार अमीरो जैसे हो जाना स्वाभाविक है। इधर मैं गरीबिनी और ग्राम्य-जीवन बिताने वाली असहाय स्त्री हूं। लड़का बिगड़ जाएगा तो मेरे सारे मन्सूबे मिट्टी में मिल जावेंगे। लोग कहेंगे— इसने लड़के को बिगाड़ा है। मेहनत-मजदूरी करके मैं इसका पेट पाल सकती हू मगर इसका बिगड़ना नहीं देख सकती।

'तो उपाय क्या है ? यही कि अमीर लड़कों की संगति से बचाया जाय। जिस प्रकार भी मैं स्वतन्त्र और

सादा ग्राम्य-जीवन बीता रही हू, उसी प्रकार का जीवन बिताने के लिये इसे प्रेरित किया जाय।'

बिना कुछ कराये लाड लडाते रहने मे लडके का सुधार नहीं होता। बहुत से लोग समझते हैं कि लडके से कुछ काम न लेना और उसे बेकार भटकने देना ही उससे प्यार करना है। मगर यह विचार बडा घातक है। ऐसा करने से बालक के जीवन मे तरह-तरह के अवगुण प्रवेश कर जाते हैं। आगे चल कर बालक कभी समझदार हो गया और ठीक रास्ते पर आ गया तो वह अपने माता-पिता की लापरवाही का विचार करके उनके प्रति कृतज्ञ नही रहता।

धन्ना रात भर इसी विचार मे डूबी रही। उसने बालक के विषय मे अपना कर्त्तव्य तय कर लिया। प्रात काल वालक से कहा—'बेटा! तू दिन भर गन्दी हवा वाली गलियो मे घूमता—फिरता है। इस हवा मे घूमने से तेरा स्वास्थ्य खराब हो जायेगा।'

वालक-गलियो मे न जाया करू तो कहा जाऊ? कोठरी मे ही बैठा रहू? मगर वहा भी तो वही गलियो की हवा पहुचती है।

धन्ना—नही बेटा, मैं कोठरी मे वैठे रहने को नही कहती हू तुझे नगर से वाहर की साफ-सुथरी ताजा हवा लेनी चाहिए।

वालक—लेकिन विना काम जगल मे कैसे फिरता रहूगा?

धन्ना - काम की क्या कमी है वेटा! तेरी इच्छा हो तो

सेठों के ५-७ बछड़े मेरे सुपुर्द करा दू । तू उन्हें जङ्गल मे खेतों में चरा लाया कर । बछड़ों के साथ जंगल में जाने से काम भी होगा और स्वच्छ हवा भी मिलेगी । शाम को बछड़े लेकर लौट आया करना । तुझे मालूम ही है कि हम गरीब आदमी हैं । मगर तू सेठों के बछड़े चरा लायेगा तो अपनी मजूरी की आमदनी भी बढ़ जायेगी ।

धन्ना का प्रस्ताव सुनकर बालक जिसका नाम संगम था प्रसन्न हुआ । उसने कहा—तुमने अच्छा सोचा माँ ! मेरा मन भी ऐसा ही कहता है । मैं अपने गाँव में रहता था तो आनन्द में रहता था । यहां के लड़के मुझ प्रेम करते थे । यहां के गहने पहनने वाले लड़के मेरी अवज्ञा करते रहते हैं । मैं बछड़ों के साथ अपना समय व्यतीत करना अच्छा समझता हूं । इन घृणा करने वाले लड़कों के साथ खेलना पसन्द नहीं करता । बछड़े मुझे प्रेम करेंगे और मेरी अवज्ञा नहीं करेंगे । इन लड़कों की अपेक्षा मेरे लिये बछड़े बड़े अच्छे रहेंगे ।

संगम की स्वीकृति पाकर धन्ना प्रसन्न हुई । तब वह सेठानियों के पास पहुंची । उनसे उसने कहा—'आपके बछड़े स्वच्छ जंगल की हवा न मिलने के कारण कितने दुर्बल और निर्जीव से हो रहे हैं । इन्हें साफ हवा मिले तो इनमें चेतना फूट पड़ेगी । आप इन्हें मुझे सौंप दीजिए । मेरा बालक इन्हें जंगल में चरा लायेगा और शाम को घर लौटा लायेगा । बांधने और खोलने की जिम्मेवारी मुझ पर रहेगी । मैं इन्हें खोल दिया करूंगी बांध आया करूंगी और समय-समय पर जगल मे भी सम्भाल लिया करूंगी । इसके लिये आपकी जो इच्छा मजदूरी दे दिया कीजिये ।

आप इतनी कृपा करेगी तो मेरे लडके के लिये भी काम हो जायेगा और आपके बछडे भी बढिया हो जाएगे ।

धन्ना के कथन मे पसन्द न आने लायक कोई बात ही नही थी। सेठानियो ने प्रसन्नतापूर्वक उसकी बात स्वीकार कर ली ।

धन्ना ने इस प्रकार कुछ बछड़े इकट्ठे किये और सगम को सौप दिए। सगम उन्हे चराने ले गया। धन्ना ने पहले पहल स्वय बछडो की सम्भाल की । थोडे ही दिनो मे सगम जगल से परिचित हो गया और बछड़े चराने मे अभ्यस्त हो गया।

अमीरो के लडके मदरसे मे जाकर शिक्षा लेते हैं, मगर गरीबिनी धन्ना का बालक जगल मे भी शिक्षा पा रहा है । वह वहा क्या सीखता है और उसके हृदय मे उस सीख का असर कितना गहरा होता है, यह समय पर ही मालूम होगा ।

बालक सगम वन के शातिदायक प्राकृतिक दृश्य देख कर आनदित हो उठा । न मालूम उसके हृदय के किस अन्तरतम प्रदेश से यह अव्यक्त ध्वनि गू जने लगी कि मेरी मा धन्य है जिसने शहर की गन्दी और विषैली हवा से निकाल कर इस पवित्र और आनन्ददायिनी हवा मे मुझे भेज दिया । सगम मन ही मन अपने साथी अमीरो के लडको को सम्बोधन करके कहने लगा—ओ मेरे साथियो ! तुम लोग तो पाठशाला मे पुस्तको से शिक्षा प्राप्त कर रहे होगे, तुम्हें क्या पता है कि यहा कैसी शिक्षा मिलती है ?

एक समय की बात है। सूर्य तेजी से चमक रहा था ।

मध्याह्न का समय था। कड़ी धूप पड़ रही थी। संगम कड़ी धूप से घबरा कर एक वृक्ष के नीचे आकर खड़ा हो गया। उसे शांति मिली। वह आँखें घुमाकर पेड़ की ओर बड़े ध्यान से देखने लगा। पेड़ के प्रति उसे एक विचित्र प्रकार का आकर्षण हुआ मानों पेड़ उसका कोई आत्मीय हो। मन ही मन कहने लगा—तरुवर ! तुम कितने पवित्र और उदार हो। तुम्हें अजातशत्रु का महत्त्वपूर्ण नाम दिया गया है अजातशत्रु की उपाधि या तो धर्मराज की है या तुम्हें है। चाहे कोई पत्थर मारे या काटे तुम उसे भी वही फल देते हो जो पूजने वाले को देते हो। मैं मनुष्य हूं और यह मेरे साथी पशु हैं। परन्तु तुम बिना किसी भेदभाव के जैसी छाया मुझ पर रखते हो वैसी ही इन पर भी। किसी के आने पर और बैठने पर जैसी छाया रखते हो उसके चले जाने पर भी वैसी ही रखते हो। दिखावट की भावना तुम्हें छू भी नहीं सकी। तुम्हारे भीतर जैसा समभाव है वैसा समभाव अगर हम मनुष्यों में भी उत्पन्न हो जाए हम भी अगर सत्कार और तिरस्कार करने वालों पर समान भाव रखना सीख लें तो मनुष्य समाज कितना उन्नत हो जाए ! सचमुच अपने उच्च गुणों के कारण ही तुम ऊँचे हो। साधारण मनुष्य तुम्हारी ऊँचाई तक नहीं पहुंच सकता है और इसी कारण वह सुमन वाला भी नहीं बनता और सफल भी नहीं हो पाता है। हे शाखिन् ! तुम्हारी सब क्रियाएं मनुष्य को अद्वितीय बोध देने वाली हैं।

संगम इस प्रकार सोच ही रहा था कि उस वृक्ष की डालियों पर बैठे हुए पक्षियों का संगीत उसके कानों में पड़ा। संगम का ध्यान उस संगीत की ओर खिंच गया।

सगीत सुन कर वह पुलकित हो उठा। उसने सोचा – 'पक्षियो का यह गान, वीणा आदि वाद्यो को लज्जित करने वाला है। इन पक्षियो के स्वर के सामने अच्छे से अच्छे गवैया का स्वर भी नाचीज है। गवैया लोभ से या किसी को रिझाने के लिये गाता है परन्तु पक्षीगण स्वाभाविक सरलता से, अपने अन्त करण की सहज प्रेरणा से गाते हैं। कोकिला ! तेरे पञ्चम स्वर को सुन कर मुझे अपनी माता की याद आ जाती है। तू भी मेरी माता की तरह मधुर स्वर सुना रही है।'

भगवान के वचन को शास्त्र मे कोयल के पचम स्वर की उपमा दी गई है। जिस प्रकार कोयल बिल्कुल नि स्वार्थ भाव से अपना स्वर सुनाती है, उसी तरह भगवान ने भी नि स्वार्थ भाव से अपने वचन सुनाये हैं।

धूप कुछ ढल गई तो सगम अपने साथी बछड़ो को चराने के लिये चल दिया। बछडे अब प्यासे हो गये थे। सगम उन्हें झरने के पास ले गया। बछडे अपनी–अपनी पू छ उठा कर पानी पीने लगे। सगम ने पानी पीया। पानी पीकर और मु ह पर ठडा पानी फेर कर वह झरने की ओर भावभरी निगाह से देखने लगा। झरने के कलकल नाद ने उसे मुग्ध बना दिया। वह मानो झरने से कहने लगा— झरना ! तेरा नाद कितना मधुर है ! तू एक ही धारा से प्रवाहित हो रहा है। मेरे आने से पहले भी तू इसी प्रकार नाद करता हुआ एक धारा से बह रहा था और मेरे आने के बाद भी तू वही कलकल नाद करता हुआ उसी प्रकार बह रहा है। अगर मानव-जीवन सुख-दु ख मे, अनुकूल— प्रतिकूल अवस्थाओ मे, सदा एक ही धारा से समान रूप

से बहता रहे तो कितना उत्तम हो ।

अगर मनुष्य के जीवन की धारा निर्झर की जीवन धारा के समान सदा शांत निरन्तर अग्रगामी मार्ग में आने वाली चट्टानों से भी टकरा कर कभी न रुकने वाली, विश्व को संगीत के माधुर्य से पूरित कर देने वाली और निरपेक्षता से बहने वाली बन जाय तो क्या कहना है ।

झरना मनुष्य को अनोखा पाठ सिखलाता है । वह अनवरत गति से अनन्त सागर में मिल जाने के लिये बहता रहता है इसी प्रकार मनुष्य भी अगर अनन्त परमात्मा में मिलने के लिये निरन्तर गतिशील रहे तो कृतकृत्य हो जाए । झरना हमें सिखलाता है कि निरन्तर प्रगति करना ही जीवन का चिह्न है और जड़ता मृत्यु की निशानी है।

बालक संगम को धीरे-धीरे वन-जीवन बहुत प्रिय लगने लगा । वन के वृक्ष और लताएं उसे अपने परिचित साथियों जैसे जान पड़ते थे । उसने उनके साथ आत्मीयता का सम्बन्ध स्थापित कर लिया था । वह वन में पहुंच कर खूब प्रसन्न था ।

संगम को नगर-जीवन से घबराहट होती थी । जब वह नगर में आता तो ऊब जाता और सोचता कब सुबह हो और मैं अपने साथियों के साथ वन में विहार करने रवाना होऊं ।

वन का जीवन वास्तव में प्रशंसनीय है । भगवान् महावीर को महलों की अपेक्षा वन ही प्रिय लगा । बुद्ध ने जिस समय बुद्ध गया' में प्रवेश किया तब वहां के जंगल को देख कर उन्होंने कहा—गोमिया के भाग्य अच्छे हैं जो

यह जगल नही कटा है । भारतवर्ष के महान् साधको ने वन के सजीव, शात, स्वच्छ एव पवित्र वातावरण मे ही अपनी महान् साधनाए सम्पन्न की थी ।

वन के साथ योगियो का क्या सम्बन्ध है, यह बात तो योगी ही जागते हैं । दूसरो को इसका क्या पता ?

इस प्रकार वन मे आनन्दपूर्वक रह कर सगम मुनि को अपने घर लाने की आकर्षण शक्ति प्राप्त कर रहा है । वे मुनि जो मासखमण के पारणा के निमित्त आने वाले हैं, उन्हे लखपतियो के घर के बदले सगम जैसे गरीब के घर लाने मे कैसी शक्ति की आवश्यकता है, इस पर जरा विचार कीजिये । आध्यात्मिक शक्ति के प्रभाव के बिना ऐसे मुनि सगम के घर नही पहुच सकते थे ।

बालक सगम मे कैसी आत्मिक शक्ति होगी, यह विचारणीय है । एक गरीब मजदूरिन का बालक होकर भी सगम ऐसी शक्ति कैसे पा सका ? और अपने बालको मे यह शक्ति क्यो नही है ? आप अपने बालको को खूब खिलाते हैं, पिलाते हैं, बढिया मन-चाहा कपडा पहनाते हैं और गहनो से सजाते हैं । फिर भी उनमे सगम जैसी शक्ति नही उत्पन्न होती । कही यह सब बातें ही तो शक्ति नष्ट नही कर देती ? यह आपके सामने विचारणीय प्रश्न है ।

बालक सगम मे अच्छे गुण थे, तभी तो वह तपस्वी मुनि को अपनी ओर आकर्षित कर सकता था । शरीर पर फोडा या घाव होने पर मक्खिया भिनभिनाती आती हैं, लेकिन सुगन्धित द्रव्य का लेप करने पर मक्खिया नहीं आती, भ्रमर भले ही आ जाते हैं । मक्खिया दुर्गन्ध पर

ही आती हैं और भ्रमर सुगन्ध पर ही आते हैं । अगर आप सद्गुण रूपी सुगन्ध करोगे तो कभी ऐसे मुनि भी आपके पास चले आएँगे । उनके आने पर उनका आदर-सत्कार करोगे तो अपना कल्याण कर लोगे । □

४ खीर

वन में जाते और बछड़े चराते संगम को काफी समय हो गया । साधारणतया मनुष्य एक ही प्रकार का जीवन बिताते-बिताते ऊब जाता है । उसके हृदय में किसी प्रकार की नवीनता की चाह उत्पन्न नहीं होती है । कहावत भी है— लोको हि अभिनवप्रिय अर्थात् प्रत्येक मनुष्य नूतनता चाहता है । मनुष्य की यह स्वभावसिद्ध प्रकृति है । ऐसी स्थिति मे संगम को भी अगर वन-जीवन से विरक्ति हो गई होती तो कोई आश्चर्य की बात नही थी बल्कि ऐसा होना ही स्वाभाविक था । मगर नही उसे अपने नियमबद्ध जीवन के प्रति कोई विराग नही है असन्तोष नही है । वह पहले की ही तरह अब भी नियत समय पर अपने साथी बछड़ों को लेकर वन चल देता है और वहाँ प्रसन्न भी रहता है । इस कारण यही जान पड़ता है कि उसने वन्य प्रकृति के साथ गहरी आत्मीयता स्थापित कर ली है । वन के पेड़ पौधे बेलें झरने और टीले उसके सुहृद बन गये हैं और उनका नित्य नया सन्देश उसका जी नहीं ऊबने देता ।

एक दिन न मालूम कौन-सा त्यौहार था । उस दिन घर-घर खीर बनाई गई थी । बालक संगम को अन्य बालकों से इस बात का पता चला । संगम में इतना धैर्य तो था कि

वह किसी से खीर नही ले सकता था और न किसी के घर भोजन ही कर सकता था, लेकिन आखिर बालक ही ठहरा। घर-घर खीर बनने का समाचार सुनकर उसने सोचा— जब सभी के घर खीर बनी है तो मेरे घर भी बनी होगी। मैं भी आज खीर खाऊंगा।

खीर की आशा लिये सगम अपने घर आया। उसे आया देख धन्ना ने कहा - बेटा आ, राबडी-रोटी खा ले। फिर बछडे ले जाने का समय हुआ जाता है।

सगम ने कहा—मा, क्या आज तुमने राबड़ी-रोटी ही बनाई है? जिसे खीर कहते हैं, वह नही बनाई?

सगम ने अपनी समझ मे कभी खीर नही खाई। उसे खीर का अनुभव नही है। धन्ना चाहती तो किसी और वस्तु को खीर बता कर सगम को धोखा दे सकती थी। मगर उसने ऐसा नही किया। वह जाति की गुजरी है। उसने खीर खाई है। आज मुसीबत के दिन हैं तो क्या हुआ? वह अपने पुत्र को खीर जैसी चीज के लिये धोखा नही दे सकती। जिसकी माता मायाविनी नही होती उसकी सन्तान भी मायाचार से मुक्त होती है। इसके विपरीत जो माता अपनी सन्तान के साथ कपट करती है, झूठ बोलती है, वह अपनी सन्तान को कपट और झूठ की शिक्षा देती है।

धन्ना को सगम की बात सुनकर कितनी गहरी वेदना हुई होगी, यह तो माता का हृदय ही ठीक तरह अनुभव कर सकता है। लेकिन धन्ना धीरज वाली स्त्री थी। उसने अपनी वेदना प्रकट नही होने दी। उसके हृदय मे जो ज्वाला भडक उठी थी, उसकी लपटो से वह कोमल हृदय

बालक को नहीं मुलसाना चाहती थी। उसने शान्त और प्यार भरे स्वर में कहा—बेटा तू खीर की बात कहां सुन आया है? अपने घर तो छाछ भी नहीं है! छाछ मांगने से मिलती है और मैंने मांगना सीखा ही नहीं! खीर तो दूध आदि से बनती है। खीर का सामान तो अपने यहां नहीं है। फिर कहां से आयेगी?

धन्ना प्राय प्रतिदिन मजदूरी करती है। फिर उसने अपने पास क्या इतने पैसे भी संग्रह न किये होंगे कि एक बार बेटे को खीर खिला सके? कहा जा सकता है कि पैसे तो होंगे लेकिन कृपणता के कारण उसने ऐसा कहा होगा। यह समाधान सही नहा मालूम होता। धन्ना कपट करना नहीं जानती। वह सीधी और सच्ची स्त्री है। जो सत्य होता है वह निश्छल भाव से साफ कह देती है। इसके अति रिक्त वह कपट करती तो किससे? और किसके लिए? संगम ही उसका इकलौता बेटा है। संसार में अपना कहने लायक दूसरा कोई नहीं है। भला धन्ना जैसी स्त्री उससे क्या कपट करती।

धन्ना ने संग्रह करना नहीं सीखा। धन का संग्रह करना उसे पाप मालूम होता है। संग्रहपरायणता दूसरे सब पापों का मूल है। वह जानती है कि अगर मैंने चार पैसे जोड़े नहीं कि मैं निन्यानवे के फेर में पड़ जाऊंगी। फिर पैसों के लोभ में पड़कर मैं दूसरे काम बिगाड़ने लगूंगी और न्याय अन्याय का विचार भी न करूंगी। वास्तव में संसार के अधिकांश पाप परिग्रह-संग्रह के निमित्त से उत्पन्न होते हैं। कहा भी है—

अर्थमनर्थं भावय नित्यम्!

अर्थात् सदा ध्यान रखो कि अर्थ वास्तव मे अनर्थ है।

धन्ना कहती है—बेटा, न मेरे पास खीर की सामग्री है और न पैसे ही हैं, जो तुझे खीर बना कर खिला सकू । इसलिए जो घर मे है, सो खा ले और काम मे लग जा ।

सगम—मा, आज तक तो मैंने तुम से कोई चीज मागी नही है । आज एक खाने की चीज मागी और उसके लिये भी तुमने मना कर दिया । आज सब लडके खीर खा रहे हैं । सबकी माताओ ने उनके लिये खीर बना दी है । और तू कैसी माता है जो अपने बेटे को एक दिन खीर भी नही खिला सकती ? मैं आज या तो खीर खाऊगा या फिर भूखा ही चला जाऊंगा ।

अपने पुत्र का यह हठ देखकर धन्ना को अपना अतीत काल स्मरण हो आया । एक-एक करके बहुत-सी तस्वीरें उसके मस्तिष्क मे खिची और विलीन हो गई । एक समय था जब उसके यहा गायें थी, भैसे थी । दूध-दही की कमी नही थी । उस समय मागने वाला कोई बालक नही था । और आज खीर के लिये हठ करने वाला बालक है तो एक बार खीर बनाने के लिये दूध ही नही है! सरल बालक सगम का विचार कर उसका हृदय भर आया । बेचारा कभी कुछ मागता नही है। आज ही उसने खीर मागी है। अब इसे क्या दू ?

बालक सगम का उदास मुख देखकर धैर्यवती धन्ना स्थिर नही रह सकी । अपनी विवशता का विचार कर उसकी आखें सजल हो गई ।

मा की आखो मे आसू देखना सगम के लिये नवीन

बात थी। इससे पहले भद्रा कभी न घबराई थी न रोई थी। गाढ़े से गाढ़े समय में भी उसने अपना कलेजा चट्टान बना कर रखा था। इसी कारण संगम अपनी मां की आंखें गीली देख कर घबरा उठा। उसने सोचा—मेरे खीर मांगने से ही मां रो रही है। संगम भी रो पड़ा। रोते-रोते उसने कहा—मां तू मत रो। मैं खीर अब नहीं मांगूगा। जो तू देगी वही खाकर बछड़े चराने चला जाऊंगा।

संगम की इस सान्त्वना से भद्रा का हृदय मानों फट गया। उसे अपनी स्थिति असह्य हो उठी। मन ही मन उसने कहा—ओ भद्रा अगर तुझमें इतनी भी शक्ति नहीं थी कि एक बार तू अपने लाल को खीर भी न खिला सके तो तूने बेटे को जन्म ही क्यों दिया ?

भद्रा अपनी हीनता और विवशता पर रो रही थी और संगम अपनी माता की व्याकुलता देख कर रो रहा था। दोनों का रोना सुनकर आस-पड़ौस की स्त्रियां भद्रा की कोठरी की ओर झपट आईं। भद्रा और सगम की सज्जनता और ईमानदारी सभी पर प्रकट थी। उनके प्रति सभी की हार्दिक सहानुभूति थी। अतएव मां-बेटे को रोते देख उनमें से एक ने पूछा—भद्रा क्यों रो रही हो ? और इस बालक को क्यों रुला रही हो ? क्या कारण है ? बताओ तो सही।

भद्रा अपनी व्यथा किसी पर प्रकट नहीं होने देती थी। स्त्रियां इकट्ठी हुई कि उसने अपने आंसू पोंछने की चेष्टा की इस विचार से कि मेरी दीन-दशा इस पर प्रकट न होने पावे। मगर आज उसकी चेष्टा सफल नहीं हुई।

वह पकड ली गई । तथापि उसने कहा—कोई खास बात नही है बहिन, चिन्ता मत करो ।

धन्ना वास्तव मे कितनी धैर्यवती है। तुलसीदास जी ने कहा है—

तुलसी पर घर जायके, दु ख न कहिये रोय ।
भरम गमावे आपनो, बाटि सके न कोय ।।

धन्ना की बात सुन कर एक ने कहा—नही, कुछ तो अवश्य है। तुम बात छिपा रही हो, किन्तु बिना कहे काम न चलेगा। हम मानने वाली नही। नि सकोच होकर कहो, असल बात क्या है ? तुम और सगम दु खी क्यो दिखाई देती हो ।

धन्ना ने कहा—मैं झूठ बोलना तो जानती नही, इसलिये आपसे प्रार्थना करती हू कि आप कुछ न पूछिये ।

झु ड मे से आवाज आई—'नही, कहना पडेगा, कहना पडेगा ।'

धन्ना ने यह आग्रह देख कर कहा—तो सुन लीजिये । आज यह बालक एक ऐसी वस्तु मागता है, जो मेरे घर मे नही है। मैं इसे वह चीज कैसे दू, इस दु ख से मुझे रोना आ गया और मुझे रोती देख सगम भी रो उठा ।

एक सेठानी तुम्हारा बालक किसी वस्तु के लिये रोवे और हम पडौसी देखा करें तो हम पडौसी किस काम के ? बेचारा बालक अधिक से अधिक खाने को मागता होगा, और क्या मागेगा ?

धन्ना—कुछ भी मागे, परन्तु वही वस्तु तो दी जा

सकती है जो घर में हो। जो वस्तु घर मे है ही नहीं, वह कहां से दी जाय?

सेठानी—आखिर बताओ तो सही संगम क्या मांगता है?

बहुत कहने-सुनने पर धन्ना कहने लगी—यह आज आप लोगों के घर घर बालकों को खीर खाते देख आया है। सो यहां आकर मुझसे खीर मांगने लगा है। मेरे घर छाछ भी नहीं है तो खीर कहां से दू?

सेठानी—बस इतनी-सी बात है! जरा-सी बात के लिये तुमने बालक को रुलाया और स्वयं रोई। मेरे घर अब भी बहुत-सी खीर रखी है। चलो मैं खीर देती हूं।

धन्ना—आप सबकी दया तो मुझ पर खूब है लेकिन मैं पहले ही आपसे प्रार्थना कर चुकी हू कि मैं या मेरा बालक पराये घर का अन्न नही खाते। घर मे जो कुछ होता है वही खाकर सन्तोष कर लेते हैं। इसलिए मैं आपकी सहानुभूति के लिये तो आभारी हू मगर खीर नहीं ले सकती। संगम भी अब समझ गया है और कहता है कि अब मैं खीर नहीं मांगूगा। मुझे अपने पहले समय का स्मरण हो आया इसी कारण दु ख हुआ।

धन्ना का उत्तर सुनकर दूसरी सेठानी कहने लगी—धन्ना ठीक कहती है। एक दिन दूसरे के यहा अन्न खाने में भला नहीं होता। चलो धन्ना मैं तुम्हें दूध चावल आदि सामग्री देती हू सो अपने ही घर में खीर बनाओ।

धन्ना—आप मुझ पर यह बोझ मत डालिये। मागना

ही होता तो खीर ही नही ले लेती ?

तब तीसरी सेठानी ने कहा—घन्ना ठीक ही तो कह रही है। वास्तव मे आपका देना, देना नही, दूसरे की इज्जत लेना है। घन्ना जा कर तुम्हारे घर पर खडी रहे और तुम इसे दो। लोग देखे कि सेठानी ने दिया। यह तो देना नही, आबरू लेना है। घन्ना गरीबिनी है तो क्या हुआ ? आखिर वह अपनी इज्जत समझती है और उसकी रक्षा करने का पूरा ध्यान रखती है। यदि आपको देना ही है तो घर से लाकर क्यो नही दे जाती !

ठीक है, ठीक है कहती हुई सेठानी दौडी गई और अपने-अपने घर मे से कोई दूध, कोई चावल और कोई शक्कर लेकर घन्ना के घर आ गईं। इस प्रकार खीर की सामग्री इकट्ठी हो गई।

आजकल अधिकाश दानी, दानी बनने के साथ मानी भी बनते हैं। मान, दान की पवित्रता को भग कर देता है। किसी की इज्जत भी रह जाय और दुःख भी दूर हो जाय इस प्रकार देने वाले विरले ही मिलेंगे। वास्तव मे सच्चा दाता वह है, जो देने वाले की आबरू नही लेता और फिर भी वह उसे दे देता है।

सेठानियो ने खीर की सामग्री घन्ना के सामने रख दी। घन्ना उनसे कहने लगी—आपने मेरे सिर पर बडा वोझ लाद दिया।

मित्रो ! बारहवा अतिथि सविभाग व्रत किस प्रकार पालन किया जाता है, यह देखो। बाजार के दौने चाटने वाले

लोग बारहवें व्रत का पालन नहीं कर सकते । कई लोग समझते हैं कि बाजार से सीधा लेकर लाने में आरम्भ नहीं होता मगर उन्हें पता नहीं है कि बाजारू चीजें किस प्रकार भ्रष्ट करने वाली होती हैं । स्वास्थ्य की दृष्टि से भी वे त्याज्य हैं और धर्म की दृष्टि से भी । उन धर्म भ्रष्ट करने वाली वस्तुओं को खाकर कोई अपनी क्रिया कैसे शुद्ध रख सकता है ।

खीर की आई हुई सामग्री को स्वीकार करने के सिवाय धन्ना के पास और कोई मार्ग नहीं था । उसने कृतज्ञता के साथ वह सामग्री स्वीकार कर ली । फिर उसने खीर बनाई । संगम के लिये परोस कर उसे देती हुई कहने लगी—आज तेरे कारण मैंने अपने जीवन की एक कठोर मर्यादा का त्याग किया है । आज सेठानियों के उपकार का बोझ मेरे सिर पर आ गया है । ले अब तू खा । मुझे अत्यन्त आवश्यक काम से बाहर जाना है । जब तक तू खाता है मैं काम निपटा कर जल्दी आती हूं ।

संगम खाने के लिये बैठा । खीर का स्वभाव कुछ देर तक गर्म रहने का होता है । संगम खीर के ठण्डा होने की प्रतीक्षा कर रहा था और साथ ही अपनी माता के धीरज की तथा सेठानियों की सहृदयता की मन ही मन बड़ाई कर रहा था । खीर की थाली उसके सामने रखी थी । ❀

५ अपूर्व दान

संगम के लिये खीर अपूर्व वस्तु है । उसे खीर के लिये रोना पड़ा है माँ को रुलाना पड़ा है । माता ने अपनी

टेक रख कर सेठानियो की कृपा से प्राप्त हुई सामग्री द्वारा खीर तैयार की है ।

धन्ना और सगम ने खीर के लिये आपा नही गवाया है । सम्मानपूर्वक मामग्री घर पर आई है, तब उसने स्वी–कार की है । टेक पर अडे रहने वाले की टेक पूरी होती ही है, लेकिन सन्तोष रखना आवश्यक है । धर्म और पर-मात्मा पर जिसे विश्वास हो, वही अपनी टेक पर टिका रह सकता है ।

सगम को क्या पता है कि आज उसका भाग्य खुलने वाला है ? वह सोच रहा है कि कब खीर ठण्डी हो और कब इसे पेट मे सम्भाल कर रख लू । वह लालचभरी निगाह से खीर की तरफ देख रहा है और देख-देख कर प्रसन्न हो रहा है । उसे आज अपूर्व वस्तु जो मिली है ।

सगम ने खीर की ओर से दृष्टि हटाकर सामने की ओर देखा तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । उसने देखा—एक महापुरुष मुनिराज उसके घर की ओर धीरे–धीरे कदम बढाते हुए चले आ रहे हैं । मुनिराज की दृष्टि नीचे की ओर है—ईर्यासमिति का पालन करते हुए चल रहे हैं । काया उनकी क्षीण है पर तप के अद्भुत तेज से उनके चेहरे पर एक अनोखी आभा विराजमान है । विस्तीर्ण ललाट है । सौम्य वदन है । उनके नेत्रो मे सयम की शाति है । धीमी चाल से मुनिराज सगम की ओर ही, बढे चले आ रहे हैं ।

मन मरा माया मरी, मर मर जाय शरीर ।
आशा तृष्णा ना मरी, कह गये दास कबीर ।।

तृष्णा को जीत लेना आसान काम नहीं है बहुत कठिन है। परन्तु इन मुनि ने तृष्णा को जीत लिया है। इनकी पहली शूरवीरता तो यही है। राजगृह जैसे विशाल नगर और प्रतापशाली मगध की राजधानी में धनवानों की कमी नहीं है। और ऐसे मुनिराज का अपने प्रांगण में पदार्पण देख कर कौन कृतार्थ नहीं हो जाता? ऐसे-ऐसे सम्पन्न और भावनाशील धनवानों के घर को छोड़ कर संगम के घर आना जिसके यहां एक बार खीर बनाने की भी सामग्री नही है यह मुनि की दूसरी शूरवीरता है।

संगम वन में रह कर जो भावना भाता था वह भावना कितनी शक्तिशाली होगी उसमें कितना तीव्र आकर्षण होगा इस बात पर जरा विचार कीजिये। संगम जंगल मे बछड़े चराता था। उसने नगर का झूठ-कपट नही सीखा और न पराये घर के अन्न पर अपना गुजर किया है। वास्तव में धर्म स्वतन्त्र के लिये ही है परतन्त्र के लिये नहीं। जो जितनी मात्रा मे स्वतन्त्र है वह उतनी ही मात्रा में धर्म का पालन कर सकता है। जो शक्ति स्वतन्त्र होने में है परतन्त्र होने में नहीं। संगम की पवित्र भावना और स्वतन्त्रता की शक्ति ही मुनि को अपनी ओर खींच कर लिये जा रही है।

संगम बैठा-बैठा खीर ठंडी कर रहा था। उसे दान का अपूर्व अवसर अनायास ही मिल गया। उसने मुनि को आते देखा। देखकर वह खड़ा हो गया और हाथ जोड़ कर कहने लगा—महाराज भले पधारे। आपने अनुग्रह करके मेरे यहां पधार कर मुझे मनवांछित फल दिया। आज का दिन धन्य है कि चलता-फिरता कल्पवृक्ष मेरे घर आया।

आज मेरी भाग्यदशा अनुकूल हुई है, जो मेरे घर पारस प्रकट हुआ ।

मुनि को देख कर सगम का हृदय प्रसन्नता से पूर्ण हो गया । उसका धर्मस्नेह जाग उठा । मुनि पर उसकी प्रीति उमड पडी ।

सगम नगर के गन्दे वातावरण मे नही पला है । उसने वन के स्वच्छ वातावरण मे सासें ली हैं । पराये घर से आई हुई सामग्री से खीर बनी है, आज पहली बार ही उसे खीर मिल रही है, फिर भी मुनि के घर आने पर उसे हर्ष हो रहा है । यह औरो के लिये आश्चर्य की बात हो सकती है क्योकि साधारण तौर पर यह समझा जाता है कि दरिद्र के लिये दान देना दुष्कर है । लेकिन गरीब की आत्मा मे शुद्ध भावना की जो समृद्धि होती है, वह अमीर की आत्मा मे शायद ही कही पाई जाती है । प्राय अमीर की आत्मा दरिद्र होती है और दरिद्र की आत्मा अमीर होती है ।

जब कोई सुपात्र घर पर आता है तो भक्त या दातार की भावना यह नही होती कि यह रोटियो के लिये मेरे यहां आये हैं । वह समझता है कि ये मेरा भाग्य जगाने के लिये आये । यही कारण है, कि सुपात्र को पाकर वह उसी प्रकार हर्षित होता है जैसे किसी अद्भुत वस्तु को देख कर बालक ।

प्रश्न हो सकता है कि जगल मे अपना अधिक समय बिताने वाले और पशुओ की सगति मे रहने वाले सगम मे यह सभ्यता कहा से आई ? इस प्रश्न का उत्तर एक कथा द्वारा समझना चाहिये ।

महमदाबाद में एक बादशाह राज्य करता था। उसके सेनापति ने बहुत-सी लड़ाइयां जीती थीं। अतएव बादशाह उस पर बहुत प्रसन्न रहता था।

एक बार वही सेनापति लड़ाई के लिए कच्छ की ओर गया। उसने मोरबी के आस-पास कहीं से आगे कूच किया और रेतीला प्रदेश पार किया। वह किसी हरे-भरे स्थान पर पहुंचा। सेनापति का घोड़ा बांध दिया गया। सेनापति अपने डेरे में सो गया। सेना का पड़ाव वहीं था। सैनिकों ने जब देखा कि सेनापति सो गया है तो उन्होंने अपने घोड़े पास के ज्वार के खेत में छोड़ दिये। भूखे घोड़े ज्वार के खेत में पिल पड़े। अचानक सेनापति की नींद खुल गई। उसने घोड़ों को खेत में चरते देख कर सैनिकों से कहा—क्यों इस प्रकार गरीबों को सताते हो? क्या तुम नहीं जानते कि एक ही रात में बेचारे गरीबों की साल भर की रोटी बर्बाद हो जाती है? तुम्हें उस परवरदिगार का जरा भी खौफ नहीं है?

सैनिकों ने कहा—हुजूर हम तो परवरदिगार को समझते हैं पर ये तीन दिन के भूखे घोड़े नहीं समझते हैं।

सेनापति—झूठ बोलते हो। पहले तुम्हारे दिल में बेईमानी आई होगी तभी घोड़ों के दिल में आई है। अगर ऐसा नहीं है तो देखो मेरा घोड़ा क्यों नहीं जाता है?

यह कह कर सेनापति ने अपना घोड़ा खोल दिया। सैनिकों ने उस घोड़े को हरा खेत दिखलाकर बहुत ललचाया परन्तु घोड़ा वहां से नहीं हटा। यह देखकर सैनिक समझ गये कि वास्तव में हमारा ही ईमान बिगड़ा है। उसके बाद

ही घोडो का ईमान विगडा।

मतलव यह है कि जब तक असाधारण वने हुए व्यक्ति की नीयत अच्छी है तव तक उसके आश्रित रहने वालो की नीयत भी अच्छी रहती है। जिसकी माता धन्ना ऐसी है कि पराये खाने-पीने को हेय समझती है, उसका पुत्र वन मे रहता हुआ भी अगर ऐसी ऊची सभ्यता सीख सका और उत्कृष्ट भावना वाला वन सका तो आश्चर्य की वात ही क्या है ?

मुनिराज को अपने घर की ओर आते देख कर सगम खडा हो गया। वह सोचने लगा—किसी दूसरे दिन मुनि मेरे यहा पधारते तो ऐसी सामग्री कहा थी जो इनको वहराता। आज कौन जाने,किस प्रकार के अदृष्ट की प्रेरणा से मुझे खीर खाने की वलवती इच्छा हुई और सेठानियो ने खीर की सामग्री लाकर दे दी। मेरा वडा भाग्य हैं कि मैंने अभी तक खीर नही खाई है। ऐसी सामग्री का होना और मुनि का आना एक अपूर्व सयोग है। वास्तव मे मेरा भाग्य वहुत सराहनीय है।

सगम के दिल मे क्षण भर के लिए भी यह विचार उत्पन्न नही हुआ कि यह अपूर्व खीर मुनि को दे दूगा तो मैं क्या खाऊगा ? उसने यह भी नही सोचा कि कही माता खीर दे देने से नाराज तो नही होगी ?

इसी समय मुनि उसके द्वार पर पधार गये। सगम का हृदय हर्ष से उछलने लगा। भक्तिभाव से भरा हुआ सगम थाल हाथ मे लिए मुनि के समीप आया और विनीत-भाव से कहने लगा—महाराज, लीजिये। कृपा कीजिये।

संगम का उत्साह और भक्तिभाव देखकर मुनि को संतोष हुआ। वे सोचने लगे—मैं सादे भोजन के लिए यहां आया था। सोचा था कि गरीब के घर सादा आहार मिल जायगा। लेकिन यहां भी वही खीर है। पर इस गरीब बालक की भावना इतनी ऊंची है कि शायद ही किसी सेठ की भी ऐसी हो। मैं अगर खीर नहीं लेता हूं तो बालक को घोर निराशा होगी और बेचारा दान के फल से भी प्रायः वंचित रह जायेगा। इसे इस दान का जो फल मिलने वाला है उसमें अन्तराय पड़ जाएगा।

मुनि को किसी प्रकार का लालच नहीं था। लालच होता तो साहूकारों के घर छोड़कर वे इस गरीब के घर आते ही क्यों? लेकिन दान के फल में अन्तराय न पड़े इस उद्देश्य से मुनि ने आहार लेना अस्वीकार नहीं किया। उन्होंने अपना पात्र बालक के सामने रख दिया।

खीर नाम की चीज बालक संगम ने अपनी जिन्दगी में पहले कभी नहीं चखी थी। आज वही खीर उसे प्राप्त हुई है बड़ी कठिनाई से मा-बेटे के रोने के बाद और सेठानियों की दयालुता से ! फिर भी संगम को खीर खाने का लोभ नहीं है। वह यही सोचता है—आज सौभाग्य से इतने अच्छे पात्र आए तो देने से चूकना नहीं चाहिये।

मुनि का स्वभाव और आचार होता है कि वे दातार से कहते हैं कि थोड़ा दे।

देता भावे भावना लेता करे संतोष।
कहे वीर सुण गोयमा ! दोनों जासी मोक्ष ॥

मुनि थोड़ी दो थोड़ी दो कहते रहे लेकिन संगम

ने थाली की सारी खीर उनके पात्र मे डाल दी। सगम के हाथ मे खाली थाली ही शेष रह गई। उस समय सगम का हृदय हर्ष से विभोर हो गया। उसके चेहरे पर आनन्द का स्मित खेल रहा था, मानो उसे अचानक तीन लोको की सम्पदा प्राप्त हो गई है।

खीर लेकर मुनि चलने लगे। सगम गुणगान करता हुआ सात-आठ कदम उन्हे पहुचाने गया। अन्त मे मुनि को भावभरी वन्दना करके वह लौट आया और मुनि जिस ओर से आये थे, उसी ओर मन्द गति से रवाना हुए।

सगम ने किस अपूर्व आह्लाद के साथ मुनि को आहार दिया! किस प्रसन्नता के साथ उन्हे पहुचाने गया! लौटने के बाद मे भी उसके हृदय मे अपूर्व प्रीति है। फिर भी खेद है कि कई लोग उसे मिथ्यात्वी कहने से नही चूकते।

सगम लौट कर भोजन करने की जगह बैठ गया और थाली मे लगी हुई खीर चाटने लगा।

इतने मे धन्ना अपना काम समाप्त करके लौट आई। सगम को थाली चाटते देख कर उसने सोचा कि इसने खीर खा ली है। माता के स्वभाव के अनुसार धन्ना ने और खीर लेने के लिये कहा। सगम तो भूखा ही बैठा था। उसने खीर ले ली और खाकर तृप्त हुआ।

यो तो सगम छोटा बालक ही था, फिर भी उसमे बडी गभीरता थी। अपनी थाली की तमाम खीर मुनि को दान करके उसने अपनी माता से भी इस घटना का जिक्र न किया। गुलिश्ता मे कहा है—अगर तू दाहिने हाथ से दे तो बाए हाथ को भी मालूम न होने दे। तात्पर्य यह है

कि दान देकर ढिंढोरा पीटना उचित नहीं है। जो लोग अपने दान का ढिंढोरा पीटते हैं वे दान के असली फल से वंचित हो जाते हैं। अतएव न तो दान की प्रसिद्धि चाहो और न दान देकर अभिमान करो।

संगम की यह गंभीरता और उत्कृष्टता प्रत्येक दाता के लिये अनुकरणीय है। उसके यही गुण मुनि को अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ हो सके थे। जिनमें ये गुण आ जाएंगे उन्हें कभी महापुरुष की भेंट हो जाएगी और उनके कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

संगम के पड़ौस में सेठानियां रहती थी। वे सभी सम्पन्न और समझदार थी भक्ति वाली थी। उस समय के प्रायः सभी लोग अतिथि-सत्कार को बहुत अच्छा समझते थे और जब कोई अतिथि द्वार पर आ जाता तो बुरा नहीं मानते थे बरन् अपना सौभाग्य समझते थे। उस समय अतिथि किसी के द्वार से खाली हाथ नहीं लौटता था। संगम की पड़ौस वाली सेठानियां भी मुनि को आहार-दान देना चाहती थी।

संगम के घर पर मुनि का आना और संगम का उन्हें खीर दान देना सेठानियों ने देखा था। संगम को यह सुयोग मिला और हमें न मिला इस विचार से उन्हें ईर्ष्या न हुई। जिन सेठानियों ने धन्ना को खीर की सामग्री दी थी वे सब एकत्र होकर आपस में कहने लगी—

पहली सेठानी—'आज धन्ना का भाग्य धन्य हुआ कि इसके घर मुनि आये। और मुनि भी मासखमण के पारना वाले। ऐसे मुनि के दरश मिलने कठिन हैं। वे मुनि दया

के भंडार थे जो बडी-बडी हवेलियो और बडे-बडे दातारो को छोड कर इस गरीबिनी के घर आये।'

दूसरी सेठानी—'धन्ना भाग्यशालिनी है, मगर मैं तो उसके बालक को धन्य कहती हू। वह जगल मे बछडे चराने जाता है। वहा की पवित्र वायु से उसकी भावनाए भी न जाने कितनी पवित्र हो गई हैं। वह मुनि को आते देख उसी प्रकार उनके सामने लपका, जैसे अपने बालक किसी अच्छी वस्तु को देख कर उसके लिए दौड़ते हैं। उसने भक्ति के साथ मुनि को वन्दना की, नमस्कार किया और अत्यन्त भक्तिभावपूर्वक खीर बहराई।'

तीसरी सेठानी—'सगम की भावना वास्तव मे बहुत ऊची है। मैं कई बार बडी मनुहार करके उसे कोई चीज देना चाहती हू, लेकिन वह कभी नही लेता। वह हाथ फैलाने मे ही शर्माता है। उससे कारण पूछती हू तो कहने लगता है—मेरी मा की यही शिक्षा है कि कभी किसी के आगे हाथ न फैलाना। एक बार मैंने उससे कहा - तू ले ले और यहा खा ले। मा से कहने कौन जाता है ? उसे पता ही नही चलने पायेगा। तब उसने कहा—मैं अपनी मा से कपट नही करता। मैं मा से कोई बात नही छिपाता। सभी बात मा से कह देता हू।'

बालक को किस प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिये, यह बात सगम को देख कर विदित हो जाती है। आज के बालको को अनेक विषयो का गम्भीर और बारीक ज्ञान भले ही दिया जाता हो मगर जीवन को उन्नत बनाने वाली बातें कौन सिखाता है ? जो बातें मामूली और छोटी समझी

जाती हैं उनका जीवन-विकास में बहुत महत्व होता है। उनकी ओर उपेक्षाभाव रखने से शिक्षा का महत्व घट जाता है या मारा जाता है। वास्तव में छोटी-छोटी बातों पर भी ध्यान दिये बिना जीवन ऊंचा नहीं होता।

मगनलाल नामक एक सज्जन ने कहा है —

मेरा घर ऊंचा धमीराना है। मेरे घर के समीप ही एक पुराना टूटा-फूटा मकान है। वह मकान बहुत अंश में तो गिर गया है और कुछ अंश में बना हुआ है। परन्तु है वह भी टूटा-फूटा। उस टूटे मकान में एक विधवा अपने बालकों सहित आकर रही। उसके चार लड़के और दो लड़कियां थी। इन बालकों में से दस वर्ष से अधिक की उम्र किसी की न थी।

उस विधवा से मैंने उसका वृत्तान्त पूछा तो वह कहने लगी—'मेरे पति १०)रु० मासिक के नौकर थे। इन दस रुपयों में मेरा घर का गुजर न होता था इसलिये मैं भी उद्योग द्वारा कुछ कमा कर इन्हीं रुपयों में मिलाती तब काम चलता। कुछ दिन हुए, मेरे पति मर गये। वे दस रुपये भी अब नहीं मिलते। अब अपने और इन बालकों के भरण-पोषण का भार मुझ पर ही पड़ा। पहले १) रु मासिक किराये के मकान में रहती थी परन्तु वह किराया कहां से दू? इसलिये अब तीन आना मासिक किराये पर इस मकान में रहने आई हूं।

इस विधवा के विषय में मगनलाल लिखते हैं कि वह बड़ी उद्योगिनी थी। उसने उस टूटे-फूटे मकान को भी साफ-सुथरा कर दिया। वह मेरे तथा पड़ौस के और घरों में काम करने आया करती और उस मजूरी से ही अपना

निर्वाह करती। वह कभी विश्राम भी लेती थी या नही, यह नही कह सकता। वह प्रामाणिक ऐसी थी कि मेरे यहां से जो पीसना ले जाती, उसमें एक चुटकी आटा भी कम न होता। इसके सिवाय मेरी स्त्री उससे जिस काम को जैसा करने के लिये कहती, वह वैसा ही कर देती थी। बोलने मे वह बडी मीठी थी। बातें भी बडी अच्छी तरह किया करती थी।

एक दिन मेरी स्त्री ने उससे कुछ देर तक बैठ कर बातें करने को कहा। उस विधवा ने—जिसका नाम गगा-गोदावरी था—उत्तर दिया-- यदि आपका कोई काम हो, तब तो मैं महर्ष बैठने को तैयार हूं लेकिन बिना काम बैठ कर बातें करने का मुझे अवकाश नही है। कृपा करके अब आप बिना काम बैठने के लिये मुझे न कहा कीजिये।

गगा–गोदावरी के इस उत्तर से व उसके न बैठने से मेरी स्त्री का मुह चढ गया अर्थात् वह क्रुद्ध हो गई। मैंने अपनी स्त्री के मुह चढे होने का कारण पूछा, तब उसने गगा-गोदावरी का घमण्ड बतलाते हुए उसके न बैठने का हाल मुझसे कहा। मैंने अपने स्त्री को समझाया कि उसके सिर छह बालको के पालन-पोषण का भार है। यदि वह इसी प्रकार घर-घर बिना काम बैठती फिरे तो उसके बालक कैसे पलें?

मेरे समझाने पर मेरी स्त्री का क्रोध शात हुआ और वह गगा-गोदावरी पर कृपा रखने लगी।

गगा-गोदावरी को हम या दूसरे जो मजूरी देते, वह उतनी ही ले लेती। इस विषय मे उसने कभी झगडा नही

किया। वह किसी के सामने न देख कर अपना ध्यान काम में ही रखती। घर का सब काम वह हाथ से करती। बच्चों के कपड़े हाथ से धोकर साफ कर देती। उसके बालक सदा साफ कपड़े पहिने रहते। लड़कों और लड़कियों से भी वह कुछ न कुछ काम लेती।

एक दिन लगभग १० बजे रात को एकाएक मेरी स्त्री का पेट दुखने लगा। मेरी स्त्री गर्भवती थी प्रसव का समय अभी दूर था इससे मैं घबराया। मैं चिन्तित हुआ कि दाई का घर दूर है। अब इस समय मैं किसे बुलाऊं? अमीर घर के पड़ोसी इस समय क्यों आने लगे थे? इतने में मुझे गंगा-गोदावरी की याद आई। मैं दौड़ा हुआ उसके घर गया। उसे मैंने बाहर से ही आवाज दी। गंगा-गोदावरी सोई न थी। इसलिये उसने मुझे घर में चले आने का कहा। मैंने घर में जाकर देखा कि घर में चिराग टिमटिमा रहा है और उसी के प्रकाश में पुस्तक लिये गंगा-गोदावरी अपने बालकों को शिक्षा दे रही है। उसका घर मैंने बड़ा स्वच्छ देखा।

मैंने इस समय आने का कारण गंगा-गोदावरी को कह सुनाया। गंगा गोदावरी उसी समय अपने बालकों को सुलाकर मेरे घर आई। उसने आकर तेल आदि गरम करके मेरी स्त्री को सेंक किया जिससे वह उसी समय ठीक हो गई। मेरी स्त्री के ठीक होते ही गंगा-गोदावरी अपने घर चल दी। वह मेरे घर न सोई किन्तु अपने घर ही जाकर सोई।

मैं उसके बालकों से प्रेम करने लगा और अपने बालकों के साथ उनके भी पढ़ने का इन्तजाम कर दिया।

उसके बालक मेरे बालको के साथ पढते, परन्तु मेरे बालको के पास कोई अच्छी चीज देख कर वे कभी न ललचाते। एक दिन मेरी स्त्री ने कुछ मिठाई बालको को बाटने के लिये दी। मैं गगा-गोदावरी के लडको को देने लगा, परन्तु उन्होने न ली। मेरे पूछने पर उन्होंने कहा कि हमारी मा ने कहा है कि पराये घर जाओ तो कोई चीज न लेना। मैंने कहा—तुम्हारी मा से कहने कौन जाता है? उत्तर मिला—हमारी मा हम से दिन भर का काम पूछती है, तब हमी सब बतलाते हैं। यह कहते-कहते वे सब लडके चल दिये। मैंने अपने हृदय से कहा कि मैं इन्हे क्या कहू देव-पुत्र या मनुष्यपुत्र? गगा-गोदावरी की बडी लडकी ने भी यही उत्तर दिया। छोटी लडकी २-३ वर्ष की ही थी। मैं उसे मिठाई देने लगा तो वह मिठाई की तरफ देखे तो जरूर परन्तु हाथ न फैलावे। मैंने उससे पूछा—तू क्यो नही लेती है? तब उसने उत्तर दिया कि मा लडेगी। मैंने पूछा—क्या वह मारती है? उसने कहा मारती तो कभी नही, परन्तु जब और जिससे नाराज होती है, तब उससे बोलती नही है। यह न बोलना हमे बहुत दु खदायी मालूम होता है।

उन बालको का सतोष देख कर मेरा प्रेम उन पर बहुत बढ गया। धीरे-धीरे इस गगा-गोदावरी ने अपने दु.ख के दिन बिता दिये। बड़ा लडका चतुर निकला। उसे पहले ही पहल ३०) रु० की नौकरी लगी। परन्तु उसने नही की। थोडे दिनो मे वह १२५)रु० मासिक पर नौकर हो गया। उसने अपने दूसरे भाई को भी काम पर लगा लिया और शेष दो भाइयो को भी काम सिखाने लगा।

वह निन्दा मिट ही पाई थी कि उस पर एक निन्दा और आ खड़ी हुई। बड़ी बहिन ब्याहने लायक हो गई थी। पास पैसा न था जो ब्याह करे। मैंने उस लड़की से अपने लड़के का विवाह करना विचारा। मेरे विचारों को सुन कर मेरी स्त्री इस बात का विरोध करने लगी और कहने लगी कि क्या दूसरे के घर का आटा पीसने वाली की लड़की लाओगे? मेरी स्त्री समझदार थी। मैंने उसे समझाया तो वह समझ गई और उसने विरोध करना छोड़ दिया। वह जान गई कि रत्न देखना चाहिये न कि अंगूठी।

गंगा गोदावरी को मेरी बात जंच गई। मैंने सादगी के साथ अपने लड़के का विवाह उसकी लड़की से कर लिया। बहू जब ब्याह कर मेरे घर आई तब थोड़े दिन तो उसे सास तथा अड़ौसी-पड़ौसी की बातें सुननी पड़ी, परन्तु थोड़े ही दिनों में वे बन्द हो गईं। ग्राम में इस विवाह से मेरी भी निन्दा होने लगी परन्तु निन्दा करने वालों का मुख भी थोड़े ही दिनों में बन्द हो गया। उसकी कार्यदक्षता और पारस्परिक प्रेम से सब चकित हो गये। थोड़े ही दिनों में उस बहू ने मेरे घर को स्वर्ग-सा बना दिया।

मैं जब गंगा-गोदावरी को उसके दुःख की बात सुन कर उन्हें सहन करने के लिये धन्यवाद देता तो वह मुझे धन्यवाद देकर कहती मुझ गरीबिनी की लड़की आपने लेकर मुझे दुःखमुक्त किया।

अब वह विधवा मेरी सगी बहिन बन गई है। यदि भारत में घर घर ऐसी स्त्रियां निकलें अपने दुःख के दिन

इस तरह पार करें, वालको को ऐसी शिक्षा दें और इतनी उद्योगिनी हो तो भारत का कल्याण होने मे देर न लगे ।

आज के लोग अपने वालको को खाने–पहिनने का ढोग तो खूव सिखाते, परन्तु सादगी नही सिखाते ।

मगनलाल की लिखी हुई वात ऐतिहासिक रूप लिये हुए है । मैं जो सगम की कथा कह रहा हू वह प्राचीन है । लेकिन दोनो की घटनाओ को मिलाओ तो मालूम हो कि धन्ना की शिक्षा कैसी अच्छी थी ।

धन्ना की पड़ोसिनें सगम की प्रशसा करती हुई कहती है कि यह सगम वालक नही, अपना शिक्षक है । इसे देख कर हमे समझना चाहिये कि हम अपने वालको को ऐसा वनावें ।

वास्तव मे पुण्यात्मापन का लक्षण सादगी मे है, लालच मे नही । जिसकी रग-रग मे सादगी का वास होगा उसी के दिल मे दया का वास होगा । सादगी सीखकर दया का पालन करते हुए पवित्र जीवन विताने मे ही वास्तविक कल्याण रहा हुआ है ।

बालक सगम को उसकी माता ने ऐसी सुशिक्षा दी थी कि वह सतोषी, सादा और गम्भीर था । अगर कोई कभी उसे कुछ देने लगता तो वह कभी स्वीकार नहीं करता था ।

दु ख मे दिन निकालते हुए सादे भोजन पर सतोष करना और पराये मीठे भोजन पर न ललचाना कोई साधारण बात नही है ।

वह चिन्ता मिट ही पाई थी कि उन पर एक चिन्ता और आ खड़ी हुई। बड़ी बहिन ब्याहने लायक हो गई थी। पास पैसा न था जो ब्याह करे। मैंने उस लड़की से अपने लड़के का विवाह करना विचारा। मेरे विचारों को सुन कर मेरी स्त्री इस बात का विरोध करने लगी और कहने लगी कि क्या दूसरे के घर का आटा पीसने वाली की लड़की लाओगे? मेरी स्त्री समझदार थी। मैंने उसे समझाया तो वह समझ गई और उसने विरोध करना छोड़ दिया। वह जान गई कि रत्न देखना चाहिये, न कि अंगूठी।

गंगा गोदावरी को मेरी बात जंच गई। मैंने सादगी के साथ अपने लड़के का विवाह उसकी लड़की से कर लिया। वह जब ब्याह कर मेरे घर आई तब थोड़े दिन तो उसे सास तथा अड़ौसी-पड़ौसी की बातें सुननी पड़ी, परन्तु थोड़े ही दिनों में वे बन्द हो गईं। ग्राम में इस विवाह से मेरी भी निन्दा होने लगी परन्तु निन्दा करने वालों का मुख भी थोड़े ही दिनों में बन्द हो गया। उसकी कार्यदक्षता और पारस्परिक प्रेम से सब चकित हो गये। थोड़े ही दिनों में उस बहू ने मेरे घर को स्वर्ग-सा बना दिया।

मैं जब गंगा-गोदावरी को उसके दुःख की बात सुन कर उन्हें सहन करने के लिये धन्यवाद देता तो वह मुझे धन्यवाद देकर कहती – मुझ गरीबिनी की लड़की अपने लेकर मुझे दुःखमुक्त किया।

अब वह विधवा मेरी सगी बहिन बन गई है। यदि भारत में घर घर ऐसी स्त्रियां निकलें अपने दुःख के दिन

इस तरह पार करे, बालको को ऐसी शिक्षा दें और इतनी उद्योगिनी हो तो भारत का कल्याण होने मे देर न लगे ।

आज के लोग अपने बालको को खाने-पहिनने का ढोग तो खूब सिखाते, परन्तु सादगी नही सिखाते ।

मगनलाल की लिखी हुई बात ऐतिहासिक रूप लिये हुए है । मैं जो सगम की कथा कह रहा हू वह प्राचीन है । लेकिन दोनो की घटनाओ को मिलाओ तो मालूम हो कि धन्ना की शिक्षा कैसी अच्छी थी ।

धन्ना की पडोसिनें सगम की प्रशसा करती हुई कहती है कि यह सगम बालक नही, अपना शिक्षक है । इसे देख कर हमे समझना चाहिये कि हम अपने बालको को ऐसा बनावें ।

वास्तव मे पुण्यात्मापन का लक्षण सादगी मे है, लालच मे नही । जिसकी रग-रग मे सादगी का वास होगा उसी के दिल मे दया का वास होगा । सादगी सीखकर दया का पालन करते हुए पवित्र जीवन बिताने मे ही वास्तविक कल्याण रहा हुआ है ।

बालक सगम को उसकी माता ने ऐसी सुशिक्षा दी थी कि वह सतोषी, सादा और गम्भीर था । अगर कोई कभी उसे कुछ देने लगता तो वह कभी स्वीकार नहीं करता था ।

दु ख मे दिन निकालते हुए सादे भोजन पर सतोष करना और पराये मीठे भोजन पर न ललचाना कोई साधारण बात नही है ।

इधर बालक संगम खीर खा रहा है, भद्रा पास ही बैठी हुई है और उधर सेठानियाँ बालक की चर्चा कर रही हैं। भद्रा को नहीं मालूम कि मेरे घर क्या घटना घटी है?

संगम को खीर खाते देखकर भद्रा सोचने लगी—मेरा बालक रोज सूखा रहता जान पड़ता है। अगर इसे आज के समान प्रतिदिन स्वादिष्ट भोजन मिले तो यह आज के बराबर ही खाया करे। मगर रुचिकर भोजन न मिलने से यह नित्य ही सूखा रह जाता है और इसी से दुबला दिखाई देता है। हाय अभागिन भद्रा! तू अपने इकलौते बेटे को पेट भर भोजन देने में भी समर्थ नहीं है।

६ . देह-त्याग

कई लोग कहते हैं—संगम को अपनी माता की नजर लग गई थी। वास्तव में जिन लोगों को नजर और भूत का वहम होता है उन्हें अपनी छाया में भी भूत नजर आता है। मेरी जिन्दगी में मेरा बालकपन इसी वहम में बीता। बाल्यावस्था के वह संस्कार बारीक-बारीक रूप में आज भी मुझमें विद्यमान हैं। बालकों में इसी प्रकार के संस्कार हमारे यहाँ डाले जाते हैं।

एक बार मैं जब अहमदनगर में था तब मुझे बुखार आने लगा। उस समय मेरी आध्यात्मिक वृत्ति आज से कुछ अच्छी थी। एकायक मेरे शरीर में व्याधि हो गई, इस कारण आध्यात्मिक क्रिया की साधना में कुछ कमी हो गई। अहमदनगर से मैं घोड़नदी गया। ज्वर मैं वहाँ भी पीछा न छोड़ा। वहाँ एक वृद्धा कहने लगी—महाराज व्याख्यान

अच्छा देते हैं इससे अहमदनगर की स्त्रियो की नजर लग गई है। मतलब यह है कि बहम के भूत बहुत चला करते हैं। ऐसी बहमी लोगो ने इस कथा मे नजर लगने की बात घुसेड़ दी।

मेस्मेरिज्म मे दृष्टि की साधना है। पॉवर डालने वाले की पॉवर (शक्ति) जिस पर असर कर जाती है, वह उससे जैसा चाहे वैसा काम करा सकता है। लेकिन अगर कोई दृढता धारण कर ले और कहे कि तुम्हारी शक्ति मुझ पर नही चल सकती तो वास्तव मे ही उस पर शक्ति असर नही करेगी।

अब विचार कीजिये, कि अपने ऊपर मेस्मेरिज्म की शक्ति का असर होने देना अच्छा है या न होने देना अच्छा है ?

'न होने देना।'

आप यदि दृढ बन जावें कि हमारे सामने भय नही आ सकता, मैं निर्भय हू, कोई मेरा कुछ नही बिगाड़ सकता, तो वास्तव मे ही कोई भूत–पिशाच आपका कुछ भी नही बिगाड सकेगा। खास कर श्रावक को तो अरिहन्त के वचन पर विश्वास करके ऐसे भयो को पास भी नहीं फटकने देना चाहिए।

राक्षस–भूत पिशाच डाकिनी,
शाकिनी भय न आवे नेरो।
दृष्टि मुष्टि छल छिद्र न लागे,
जो प्रभु ! नाम भजे तेरो॥

इधर बालक संगम खीर खा रहा है धन्ना पास ही बैठी हुई है और उधर सेठानियां बालक की चर्चा कर रही हैं। धन्ना को नहीं मालूम कि मेरे घर क्या घटना घटी है?

संगम को खीर खाते देखकर धन्ना सोचने लगी—मेरा बालक रोज भूखा रहता जान पड़ता है। अगर इसे आज के समान प्रतिदिन स्वादिष्ट भोजन मिले तो यह आज के बराबर ही खाया करे। मगर रुचिकर भोजन न मिलने से यह नित्य ही भूखा रह जाता है और इसी से दुबला दिखाई देता है। हाय अभागिन धन्ना! तू अपने इकलौते बेटे को पेट भर भोजन देने में भी समर्थ नहीं है।

६ देह-त्याग

कई लोग कहते हैं—संगम को अपनी माता की नजर लग गई थी। वास्तव में जिन लोगों को नजर और भूत का वहम होता है उन्हें अपनी छाया में भी भूत नजर आता है। मेरी जिन्दगी में मेरा बालकपन इसी वहम में बीता। बाल्यावस्था के वह संस्कार बारीक-बारीक रूप में आज भी मुझमें विद्यमान हैं। बालकों में इसी प्रकार के संस्कार हमारे यहां डाले जाते हैं।

एक बार मैं जब अहमदनगर में था तब मुझे बुखार आने लगा। उस समय मेरी आध्यात्मिक वृत्ति आज से कुछ अच्छी थी। यकायक मेरे शरीर में व्याधि हो गई, इस कारण आध्यात्मिक क्रिया की साधना में कुछ कमी हो गई। अहमदनगर से मैं घोड़नदी गया। ज्वर ने वहां भी पीछा न छोड़ा। वहां एक वृद्धा कहने लगी—महाराज व्याख्यान

करते हैं, वे मुनि पर भी दोषारोपण कर सकते हैं कि मुनि के आने से ही सगम को विशूचिका की व्याधि हुई और परिणाम यह हुआ कि उसे प्राण त्यागने पडे ! जो लोग माता के लिए नही चूके, वे मुनि के लिए क्यो चूकेंगे ?

दान का महत्व सुवर्ण-मुहरो की वर्षा मे नहीं है। देवता तीन ज्ञान के धनी होते हैं। सगम के भाग्य का हाल उनसे छिपा नही रह सकता था। इसके अतिरिक्त देव किसी काम को किसी जगह करते हैं और किसी जगह नही भी करते। उदाहरणार्थ—भगवान महावीर के उपसर्ग कही देवो ने मिटाये हैं और कही नही भी मिटाये हैं। चन्दनबाला पर वेश्या ने हाथ डाला तब तो देवो ने सहायता की, परन्तु जब उसकी मा जीभ खीच कर मरी थी, तब उन्होने सहायता नही की। इन सब बातो पर विचार करने से विवेकशील पुरुष इसी परिणाम पर पहुचता है कि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से जैसा अवसर देखा, देवो ने वैसा ही किया होगा। दोनो हाथो से ताली बजती है, एक हाथ से नही। देवो के और दाता पुरुष के उपादान–निमित्त अनुकूल रूप से मिलते हैं तो सुवर्ण मोहरो की वर्षा होती है, अनुकूल कारणकलाप अगर न मिलें और मोहरो की वर्षा न हो तो इसी कारण से दान मे कमी नही हो जाती।

दान का फल सगम के लिए आगामी भव मे परिवर्तित हो रहा है। इस गरीबी के भव मे देवता अगर सुवर्ण–मोहरो की वर्षा सगम के घर कर देते तो वही मोहरें सुख के बदले दु ख का कारण बन जाती। वह इस भव के सस्कारो मे मोहरें नही सभाल सकता था और न उनसे

राक्षस, भूत, डाकिनी और शाकिनी अमर्याद भी तो क्या भगवान का नाम सत्य नहीं है। भगवान् के नाम में कोई शक्ति है या नहीं? आप इस स्तुति को सच्ची समझ कर गाते हैं या झूठी समझ कर? अगर सच्ची समझ कर गाते हैं तो फिर भय क्यों खाते हैं। महावीर के पहले के भक्त साक्षात् यक्ष से भी नहीं डरे और आजकल के लोग यक्ष के नाम से ही डरते हैं।

संगम को नजर लग गई थी इस कथन का आधार यही है कि उसे विशूचिका की बीमारी हो गई थी। मगर ऐसा कहने वालों ने आयुर्वेद का तनिक भी अध्ययन नहीं किया जान पड़ता है। आयुर्वेद का थोड़ा-सा ज्ञान रखने वाला भी ऐसा नहीं कहेगा। संगम की विशूचिका बीमारी का कारण नजर लगना नहीं किन्तु और ही था। संगम हमेशा हल्का खाना खाने वाला ही था और इस बार उसने खीर खाई थी। कहां हल्की राबड़ी और कहां बड़ी-बड़ी सेठानियों के घर से आये हुए सामान की-मेवा-मिष्टान्न पड़ी हुई- खीर! वेदनीय कर्म का उदय तो उसके हुआ ही। इस कारण वह खीर संगम को हजम न हो सकी। यह तो निर्विवाद बात है कि रूखा-सूखा खाने वाले को गरिष्ठ भोजन नहीं पचता है।

अब एक तर्क यह किया जा सकता है कि यदि वह दान अच्छा था तो और अवसरों की तरह उस अवसर पर सोनैयों की वर्षा क्यों न हुई? और मुनि के चरण संयम-कारी कैसे हुए, जबकि मुनि को दान देने के पश्चात् संगम को मारणान्तिक व्याधि हो गई!

जो लोग माता पर नजर लगाने का दोषारोपण

करते हैं, वे मुनि पर भी दोषारोपण कर सकते हैं कि मुनि के आने से ही सगम को विशूचिका की व्याधि हुई और परिणाम यह हुआ कि उसे प्राण त्यागने पडे ! जो लोग माता के लिए नही चूके, वे मुनि के लिए क्यो चूकेंगे ?

दान का महत्व सुवर्ण-मुहरो की वर्षा मे नहीं है। देवता तीन ज्ञान के धनी होते हैं। सगम के भाग्य का हाल उनसे छिपा नही रह सकता था। इसके अतिरिक्त देव किसी काम को किसी जगह करते हैं और किसी जगह नही भी करते। उदाहरणार्थ—भगवान महावीर के उपसर्ग कही देवो ने मिटाये हैं और कही नही भी मिटाये हैं। चन्दनबाला पर वेश्या ने हाथ डाला तब तो देवो ने सहायता की, परन्तु जब उसकी मा जीभ खीच कर मरी थी, तब उन्होने सहायता नही की। इन सब बातो पर विचार करने से विवेकशील पुरुष इसी परिणाम पर पहुचता है कि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से जैसा अवसर देखा, देवो ने वैसा ही किया होगा। दोनो हाथो से ताली बजती है, एक हाथ से नही। देवो के और दाता पुरुष के उपादान—निमित्त अनुकूल रूप से मिलते हैं तो सुवर्ण मोहरो की वर्षा होती है, अनुकूल कारणकलाप अगर न मिलें और मोहरो की वर्षा न हो तो इसी कारण से दान मे कमी नही हो जाती।

दान का फल सगम के लिए आगामी भव मे परिवर्तित हो रहा है। इस गरीबी के भव मे देवता अगर सुवर्ण-मोहरो की वर्षा सगम के घर कर देते तो वही मोहरें सुख के बदले दुःख का कारण बन जाती। वह इस भव के सस्कारो मे मोहरें नही सभाल सकता था और न उनसे

यथोचित काम ही ले सकता था। संगम को पूर्वरूप से सुखी होना था और शरीर बदले बिना उसे पूरा आनन्द नहीं मिल सकता था। इस प्रकार सुवर्ण–मोहरों की वर्षा न होने के अनेक कारण हो सकते हैं।

धर्म का आचरण करते हुए तत्काल फल न पाने के कारण निराश होना उचित नहीं है। गीता में कहा है—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

अर्थात् तुम्हें अपना कर्त्तव्य बजाने का अधिकार है फल मांगने का अधिकार नहीं है। फल की कामना सत्य के पाये को डिगाने वाली है।

लोग सवेरे दान करके शाम को दान का फल प्राप्त करना चाहते हैं। मगर फल के लिए अधीर हो उठना उचित नहीं है। फल की कामना से प्रेरित होकर किया हुआ कार्य वास्तविक फलदायी नहीं होता। धर्म का तात्कालिक फल शांति मैत्रीभावना आत्मा की पवित्रता आदि है और वह तत्काल प्राप्त होता ही है। रहा परम्पराफल सो वह यथासमय मिले बिना नहीं रह रहता। फिर अधीरता की आवश्यकता ही क्या है ?

सारांश यह है कि संगम ने सरस और गरिष्ठ भोजन पहले कभी किया नहीं था इस कारण खीर को वह पचा नहीं सका और उसे विशूचिका हो गई। इस दशा में भी वह मुनि का ही ध्यान करता रहा। उसने सोचा—आज ही मेरी मृत्यु का दिन है और आज ही मेरे यहां मुनिराज का पदार्पण हुआ। मृत्यु के समय मुझे परलोक यात्रा के लिए

पाथेय मिल गया। इस प्रकार विचार कर सगम बहुत प्रसन्न हुआ।

संगम को सब प्रकार की ऋद्धि प्राप्त होनी थी। ऋद्धि के लिए योग्यता की भी आवश्यकता होती है। बालक कितने ही बडे श्रीमत का हो, उसे बडे घोड़े पर नहीं बिठलाया जाता है। इसी प्रकार देवो ने समझ लिया कि सगम को जो ऋद्धि मिलनी है, उसके योग्य इस भव में वह नही है। देवता निष्काम वृत्ति वाले की सेवा करते हैं, सकाम वृत्ति वाले की नही। सगम यद्यपि निष्काम है फिर भी वह इस भव मे सुवर्ण मोहरो से सुखी नही बन सकता।

बालक सगम के लिये धन्ना ने बहुत दौड-धूप की, पडौस वालो ने भी कुछ उठा न रखा मगर अन्त मे वह शरीर त्याग कर चल बसा।

७ : पुनर्जन्म

उसी राजगृह नगर मे एक सेठ रहते थे। वह श्रीमंत तो थे ही, मगर ऐसे श्रीमन्त थे कि अनेक लखपति उनकी छत्र–छाया मे रहते थे। सेठ के यहा लक्ष्मी का भण्डार अखूट था। उनकी सम्पदा का अन्दाज लगाना भी कठिन था।

हा, वह सेठ वास्तव मे लक्ष्मीपति थे। अक्षय भण्डार होने पर भी वह लक्ष्मी के दास नही, स्वामी थे। रात–दिन लक्ष्मी की बेगार करने वाले, उसकी पूजा करने वाले और जीवन की सुख-समृद्धि को लक्ष्मी के चरणो मे ही

समर्पित कर देने वाले लक्ष्मी के पीछे आत्मविस्मरण कर देने वाले धनाढ्य लक्ष्मी के स्वामी नहीं दास होते हैं। जो अपने जीवन के वास्तविक कल्याण के लिए धन का उपयोग नहीं करते बल्कि लक्ष्मी के लिए जीवन समर्पित कर देते हैं उन्हें लक्ष्मी का स्वामी नहीं कहा जा सकता। वे लक्ष्मी के दास हैं। राजगृही के वह सेठ ऐसे नहीं थे। उन्होंने लक्ष्मी के लिए कभी आत्मा को नहीं बेचा। झूठ-कपट या चिन्ता-कृपणता कभी नहीं की।

गृहस्थ कैसा होना चाहिए, इस सम्बन्ध में तुकाराम कहते हैं—

> मामा उपकार साठी आवे घर आवे कुठी
> मटी कि वचन नाहि देइ उदासीन।
> मिष्ठ वचन ओठी तुका मन मावे पोटी।

वे गृहस्थ वास्तव में धन्य हैं जिनके हृदय में दया का वास रहता है और दुःखी को देख कर अनुकम्पा उत्पन्न होती है। ऐसे मनुष्य समझते हैं कि मैं इस संसार में केवल उपकार करने के लिये ही आया हूं, मेरा घर तो स्वर्ग में है। मुझे उस घर के लिए पुण्य का संचय करना चाहिए। वे गृहस्थ धन्य हैं जो अपने यहां आए हुए को निराश नहीं करते और फिर भी अभिमान से दूर रहते हैं। वे गृहस्थ धन्य हैं, जो मधुरभाषी हों।

भक्त तुकाराम ने गृहस्थ के जो लक्षण बतलाये हैं राजगृह के गोभद्र सेठ में वह सब लक्षण मौजूद थे।

गोभद्र सेठ की पत्नी का नाम भद्रा था। भद्रा भी

अपने नाम के अनुसार बहुत भद्र स्वभाव वाली थी ।

एक दिन न मालूम किस अप्रकट कारण से भद्रा के दिल मे उदासीनता छा गई। सेठानी कभी उदास नही होती थी । अतएव आज उसे उदास देख कर सेठ गोभद्र को चिन्ता हुई । सेठ ने सेठानी की उदासीनता मिटाने के लिए अनेक उपाय किये । उसे सुन्दर बाग–बगीचे मे घुमाया, चित्त प्रसन्न करने वाले खेल-तमाशे दिखलाये, सखी-सहेलियो से कह कर और मनोविनोद की बातें करके उसकी उदासीनता दूर करनी चाही, फिर भी सेठानी की चिन्ता दूर न हुई । सेठानी को चिन्तित देखकर सेठजी को बहुत चिन्ता सताने लगी । वह मन ही मन सोचने लगे—सेठानी के चिन्तित और उदास रहने से मेरा आधा अग ही बेकार हो गया है । आखिर इसकी चिन्ता का क्या कारण हो सकता है ?

पत्नी की चिन्ता दूर करने के अनेक उपाय करके भी जब सेठ गोभद्र सफल न हुए तो उन्होंने सेठानी से कहा– तुम्हे क्या मानसिक पीडा है, जो इतनी उदास हो ? क्या अपनी उदासी का कारण मुझे नही बतला सकती ? सम्भव है, मैं उस कारण को जानने के अयोग्य होऊ और इसीलिए मुझे न बतलाती होओ । अगर ऐसी बात हो तो जाने दो, मत कहो। अगर बतलाने मे कोई खास बाधा न हो तो बतला दो ।

सेठ की अन्तिम बात सुनकर सेठानी धैर्य न रख सकी । उसने कहा—आपका मेरा जीवन इतना सकलित है कि दोनो के बीच मे कोई व्यवधान नही आ सकता । हम दोनो दो नही, एक ही हैं । मेरे लिए आपसे बढकर और

कौन है जिसे अपने मन की बात कह सकूं और आपसे न कह सकूं ? मैं अपनी चिन्ता की बात सिर्फ इसलिए नहीं कहती कि उससे आपकी भी चिन्ता बढ़ जायगी। जिस रोग की दवा आपके हाथ में नहीं है उस रोग को सुना कर क्यों वृथा आपको चिन्तित करूं ? मगर ऐसा न करने से आप अधिक चिन्तित होते हैं तो कहे देती हूं। आपसे छिपाने योग्य मेरे पास क्या रखा है, पति-पत्नी में दुराव-छिपाव क्या ?

सेठानी ने उदासभाव से कहा— कल्पना कीजिए, किसी घर में सब प्रकार की सुख-सामग्री की पूर्णता है। इन्द्रियों को लुभाने वाली और चित्त को प्रसन्न करने वाली चीजें मौजूद हों लेकिन घर में घोर में अन्धकार फैला हुआ हो कोई वस्तु दिखाई न देती हो ऐसी स्थिति में उन सब वस्तुओं का होना न होना समान है। इसी प्रकार इस सम्पन्न कुल में कुलदीपक न होने के कारण कुल का कोई भविष्यकालीन संरक्षक और आश्रय न होने से इस कुल में अंधेरा है। मैं जिस ऋण से दबी हुई हूं वह ऋण चुकते न देखकर अपने प्रति धिक्कार की भावना उत्पन्न होती है और ऐसा लगता है कि मेरा जन्म निरर्थक है!

मैं आपका दिया हुआ अन्न वस्त्र खाती और पहनती हूं और मौज में रहती हूं। मगर स्त्री का काम केवल खा पहन कर मौज करना ही नहीं है। आपके ऋण के बदले में मुझे एक ऐसा कुलदीपक उत्पन्न करना चाहिये था जो कुल को प्रकाशमान कर देता और जो आपकी कीर्ति का आधार होता आपका नाम उज्ज्वल कर देता। लेकिन मैंने आपका ऋण ही अपने माथे चढ़ाया है! ऋण को उतारने

का कोई उपाय नही किया। स्त्रियो को या तो अविवाहित रह कर परमात्मा की भावना मे रहना चाहिये या फिर ऐसे कुलदीपक को जन्म देना चाहिए जो कुल को यशस्वी और प्रशसा का पात्र बना दे। केवल भोग करना स्त्री का कर्त्तव्य नही है।

मैं अपने जीवन मे अपने कर्त्तव्य का पालन करने मे समर्थ नही हुई हू। यही विचार मुझे पीडा पहुचा रहा है। इसी कारण मुझ में उदासी आ गई है। मैं अपने आपको वृथा और भारभूत समझने लगी हू। सोचती हू आपके इस समृद्ध गृह मे न आती और मेरे वदले कोई दूसरी स्त्री आई होती तो वह घर को प्रकाशित कर देती। यह घर अन्धकारपूर्ण और सुनसान न रहता। मैं आपके लिये पूरी तरह उपयोगी नही हो सकी। अतएव मैं प्रार्थना करती हू कि आप दूसरा विवाह कर लीजिये, जिससे कुल की परम्परा चालू रहे, आपकी कीर्ति स्थिर रहे और जीवन आनन्दमय हो सके।

सेठ गोभद्र अपनी पत्नी की आतरिक व्यथा को समझ गये। उन्होने उसकी निस्पृहता को भी समझ लिया और उसकी स्वार्थत्याग की भावना देख कर वे सन्तुष्ट भी हुए। उन्होने सोचा—सेठानी अपना कर्त्तव्य भली-भाति समझती है, इसी कारण दुःखी है और मुझे दूसरा विवाह कर लेने के लिए कहती है। परन्तु क्या दूसरी स्त्री भी ऐसी ही मिल सकेगी जो अपना कर्त्तव्य इसी भाति समझे और जिसे मेरे कुल तथा यश की इतनी चिन्ता हो ! यह कठिन है।

गोभद्र ने अपनी पत्नी से कहा—'मेरा महत्त्व तुमसे

कौन है जिसे अपने मन की बात कह सकूं और आपसे न कह सकूं ? मैं अपनी चिन्ता की बात सिर्फ इसलिए नहीं कहती कि उससे आपकी भी चिन्ता बढ़ जायगी। जिस रोग की दवा आपके हाथ में नहीं है उस रोग को सुना कर क्यों वृथा आपको चिन्तित करूं ? मगर ऐसा न करने से आप अधिक चिन्तित होते हैं तो कहे देती हूं। आपसे छिपाने योग्य मेरे पास क्या रखा है, पति-पत्नी में दुराव-छिपाव क्या ?

सेठानी ने उदासभाव से कहा— कल्पना कीजिए, किसी घर में सब प्रकार की सुख-सामग्री की पूर्णता है। इन्द्रियों को लुभाने वाली और चित्त को प्रसन्न करने वाली चीजें मौजूद हों लेकिन घर में घोर में अन्धकार फैला हुआ हो कोई वस्तु दिखाई न देती हो ऐसी स्थिति में उन सब वस्तुओं का होना न होना समान है। इसी प्रकार इस सम्पन्न कुल में कुलदीपक न होने के कारण कुल का कोई भविष्यकालीन संरक्षक और आश्रय न होने से इस कुल में अंधेरा है। मैं जिस ऋण से दबी हुई हूं वह ऋण चुकते न देखकर अपने प्रति धिक्कार की भावना उत्पन्न होती है और ऐसा लगता है कि मेरा जन्म निरर्थक है।

मैं आपका दिया हुआ अन्न वस्त्र खाती और पहनती हू और मौज में रहती हूं। मगर स्त्री का काम केवल खा-पहन कर मौज करना ही नहीं है। आपके ऋण के बदले में मुझे एक ऐसा कुलदीपक उत्पन्न करना चाहिये था जो कुल को प्रकाशमान कर देता और जो आपकी कीर्ति का आधार होता आपका नाम उज्ज्वल कर देता। लेकिन मैंने आपका ऋण ही अपने माथे चढ़ाया है। ऋण को उतारने

का कोई उपाय नही किया। स्त्रियो को या तो अविवाहित रह कर परमात्मा की भावना मे रहना चाहिये या फिर ऐसे कुलदीपक को जन्म देना चाहिए जो कुल को यशस्वी और प्रशंसा का पात्र बना दे। केवल भोग करना स्त्री का कर्त्तव्य नही है।

मैं अपने जीवन मे अपने कर्त्तव्य का पालन करने मे समर्थ नही हुई हू। यही विचार मुझे पीडा पहुचा रहा है। इसी कारण मुझ मे उदासी आ गई है। मैं अपने आपको वृथा और भारभूत समझने लगी हू। सोचती हू आपके इस समृद्ध गृह मे न आती और मेरे बदले कोई दूसरी स्त्री आई होती तो वह घर को प्रकाशित कर देती। यह घर अन्धकारपूर्ण और सुनसान न रहता। मैं आपके लिये पूरी तरह उपयोगी नही हो सकी। अतएव मैं प्रार्थना करती हू कि आप दूसरा विवाह कर लीजिये, जिससे कुल की परम्परा चालू रहे, आपकी कीर्ति स्थिर रहे और जीवन आनन्दमय हो सके।

सेठ गोभद्र अपनी पत्नी की आतरिक व्यथा को समझ गये। उन्होने उसकी निस्पृहता को भी समझ लिया और उसकी स्वार्थत्याग की भावना देख कर वे सन्तुष्ट भी हुए। उन्होंने सोचा—सेठानी अपना कर्त्तव्य भली-भाति समझती है, इसी कारण दुखी है और मुझे दूसरा विवाह कर लेने के लिए कहती है। परन्तु क्या दूसरी स्त्री भी ऐसी ही मिल सकेगी जो अपना कर्त्तव्य इसी भाति समझे और जिसे मेरे कुल तथा यश की इतनी चिन्ता हो! यह कठिन है।

गोभद्र ने अपनी पत्नी से कहा—'मेरा महत्त्व तुमसे

ही है। तुम मेरे सिर की पगड़ी हो। आज मेरी जो माम-वरी है वह तुम्हारा ही प्रताप है। तुम सरीखी गुणसुन्दरी पत्नी को ऐसी चिन्ता शोभा नहीं देती। तुमने अपना ऋण तो कभी का चुका दिया है। मैं तुम्हारी झूठी प्रशंसा नहीं करता। सच कहता हूं कि तुम्हारे जैसी गुणवती और पति व्रता नारी से ही नर की शोभा है।

सेठ ने फिर कहा—'मेरी जो श्रेष्ठता है जो बड़ाई है जो सम्मान है यह सब तुम्हारी ही शक्ति से है।' स्त्री किस प्रकार अपने पति को ऊंचा चढ़ा सकती है और किस प्रकार नीचे गिरा सकती है, इस सम्बन्ध में एक कहानी सुनाता हूं—

एक सेठ था—विद्वान् लक्ष्मीपति और गर्वान्ध। उसकी स्त्री सुशीला और बुद्धिमती थी। सेठ का गर्व उसे अच्छा नहीं लगता था। वह सोचती थी—लक्ष्मी पाकर सेठ को नम्र होना चाहिए था गर्व करना तो तुच्छता का द्योतक है। वह सदा चिन्तित रहती थी कि सेठ का गर्व किसी प्रकार मिटाना चाहिए।

एक दिन की बात है कि सेठ और सेठानी बैठे बातें कर रहे थे। सेठानी ने कहा—आप आज्ञा दें तो मैं एक बात पूछूं ?

सेठ—खुशी से। बातें करने तो बैठे ही हैं।

सेठानी—यह बताइये कि आदमी की शोभा किसके हाथ है ?

सेठ—आदमी की शोभा आदमी के हाथ है।

सेठानी ने हंस कर कहा – कौन अपने आपको हीन प्रगट करना चाहता है ? मगर मैं कहती हू कि पुरुष की शोभा स्त्री के हाथ मे है। स्त्री चाहे तो एक क्षण मे पुरुष की आबरू मिट्टी मे मिला सकती है ।

सेठ बिगड कर कहने लगे—स्त्री के हाथ मे क्या धरा है ? मुझे जो यश और वैभव प्राप्त है, वह क्या तुम्हारी कृपा से ? बल्कि तुम जो सेठानी कहलाती हो सो भी मेरी ही बदौलत । मैं न होता तो तुम्हे पूछता कौन ?

इस प्रकार सेठजी ने अपने पक्ष की बात कहकर सेठानी के पक्ष को गिराने की चेष्टा की । सेठानी अपना पक्ष सिद्ध करने के लिए बहुत कुछ कह सकती थी, पर उसने उस समय हठ न करना ही ठीक समझा ! उसने सिर्फ इतना कहा—अगर मैंने यह सिद्ध कर दिखाया कि पुरुष की इज्जत स्त्री के हाथ मे है, तब तो आप मानेंगे ?

सेठ—जब सिद्ध कर दोगी तो मान लू गा, मगर तुम ऐसा सिद्ध कर ही नही सकती ।

सेठानी अपना पक्ष सिद्ध करने के अवसर की प्रतीक्षा करने लगी ।

एक दिन सेठजी अपनी मित्र-मडली के साथ बैठक मे बैठे थे । सेठानी ने इस अवसर से लाभ उठाना उचित समझा । उसने अपने एक विश्वस्त नौकर को सेठ के पास भेजकर कहलाया—सेठानीजी स्नान कर चुकी हैं । चाबी दे दीजिए तो वे कुछ नाश्ता कर लें । सेठानी ने नौकर को समझा दिया कि यह वात तू धीमे से मत कहना ।

ही है। तुम मेरे सिर की पगड़ी हो। आज मेरी जो मान-वरी है वह तुम्हारा ही प्रताप है। तुम सरीखी गुणसुन्दरी पत्नी को ऐसी चिन्ता शोभा नहीं देती। तुमने अपना ऋण तो कभी का चुका दिया है। मैं तुम्हारी झूठी प्रशंसा नहीं करता। सच कहता हूं कि तुम्हारे जैसी गुणवती और पतिव्रता नारी से ही नर की शोभा है।'

सेठ ने फिर कहा—'मेरी जो श्रेष्ठता है जो बड़ाई है जो सम्मान है वह सब तुम्हारी ही शक्ति से है। स्त्री किस प्रकार अपने पति को ऊंचा चढ़ा सकती है और किस प्रकार नीचे गिरा सकती है, इस सम्बन्ध में एक कहानी सुनाता हूं—

एक सेठ था—विद्वान् लक्ष्मीपति और गर्वान्ध। उसकी स्त्री सुशीला और बुद्धिमती थी। सेठ का गर्व उसे अच्छा नहीं लगता था। वह सोचती थी—लक्ष्मी पाकर सेठ को नम्र होना चाहिए था गर्व करना तो तुच्छता का द्योतक है। वह सदा चिन्तित रहती थी कि सेठ का गर्व किसी प्रकार मिटाना चाहिए।

एक दिन की बात है कि सेठ और सेठानी बैठे बातें कर रहे थे। सेठानी ने कहा—आप आज्ञा दें तो मैं एक बात पूछूं ?

सेठ—खुशी से। बातें करने तो बैठे ही हैं।

सेठानी—यह बताइये कि आदमी की शोभा किसके हाथ है ?

सेठ—आदमी की शोभा आदमी के हाथ है।

सेठानी ने हंस कर कहा - कौन अपने आपको हीन प्रगट करना चाहता है ? मगर मैं कहती हू कि पुरुष की शोभा स्त्री के हाथ मे है। स्त्री चाहे तो एक क्षण मे पुरुष की आवरू मिट्टी मे मिला सकती है ।

सेठ बिगड कर कहने लगे—स्त्री के हाथ मे क्या घरा है ? मुझे जो यश और वैभव प्राप्त है, वह क्या तुम्हारी कृपा से ? बल्कि तुम जो सेठानी कहलाती हो सो भी मेरी ही बदौलत । मैं न होता तो तुम्हे पूछता कौन ?

इस प्रकार सेठजी ने अपने पक्ष की बात कहकर सेठानी के पक्ष को गिराने की चेष्टा की । सेठानी अपना पक्ष सिद्ध करने के लिए बहुत कुछ कह सकती थी, पर उसने उस समय हठ न करना ही ठीक समझा ! उसने सिर्फ इतना कहा—अगर मैंने यह सिद्ध कर दिखाया कि पुरुष की इज्जत स्त्री के हाथ मे है, तब तो आप मानेंगे ?

सेठ—जब सिद्ध कर दोगी तो मान लूगा, मगर तुम ऐसा सिद्ध कर ही नही सकती ।

सेठानी अपना पक्ष सिद्ध करने के अवसर की प्रतीक्षा करने लगी ।

एक दिन सेठजी अपनी मित्र-मडली के साथ बैठक मे बैठे थे । सेठानी ने इस अवसर से लाभ उठाना उचित समझा । उसने अपने एक विश्वस्त नौकर को सेठ के पास भेजकर कहलाया—सेठानीजी स्नान कर चुकी हैं । चावी दे दीजिए तो वे कुछ नाश्ता कर लें । सेठानी ने नौकर को समझा दिया कि यह वात तू धीमे से मत कहना ।

ऐसे ऊंचे स्वर से कहना जिससे बैठक में बैठे सभी लोग सुन लें।

नौकर गया और उसने वही कह दिया जो सेठानी ने उसे सिखाया था। नौकर की बात सुनकर सेठ के सभी मित्र आश्चर्य के साथ सोचने लगे—यह सेठ कितना कृपण है और इसके मन में कितना मैल है कि रसोई घर की चाबी भी स्त्री को नहीं सौंपता और अपने कब्जे में रखता है।

सेठ नौकर की बात सुनकर जल भुन गया लेकिन बोला कुछ नहीं। उसने नौकर की बात सुनी-अनसुनी कर दी। लेकिन नौकर कहां मानने वाला था? उसने दोबारा चिल्लाकर वही बात दोहराई। सेठ के पास रसोई-घर की चाबी तो थी नहीं परन्तु बात टालने के लिए उसने अपने पास का चाबियों का गुच्छा नौकर की ओर फेंक दिया और डरावनी आंखें निकाल कर उसकी ओर देखा। नौकर गुच्छा लेकर सेठानी के पास आया।

उधर सेठानी ने एक अच्छे से थाल में मेवा भरा। उसी थाल में एक कटोरी में रत्न आदि भर दिये। थाल को एक मैले कुचैले कपड़े से ढक दिया। यह थाल नौकर को देकर सेठानी ने कहा—यह थाल ले जाकर सेठजी से कहना सेठानी ने यह चने भेजे हैं। आप भी खा लीजिए और मित्रों को भी खिला दीजिए।

नौकर मदद के साथ मैले कपड़े से सजा हुआ थाल बैठक में ले गया। सेठजी के सामने रख कर उसने वही कह दिया जो सेठानी ने कहलाया था।

मित्र लोग सेठ की कृपणता को धिक्कारने लगे।

उधर सेठ पहले ही जला-भुना बैठा था। वह नौकर को भला-बुरा कहने लगा, परन्तु नौकर चुपचाप लौट आया।

मित्रो मे कुछ मसखरे भी थे। उनमे से एक ने कहा-नाश्ते का समय हो चुका है और सेठानीजी ने चने भी भेज दिये हैं। बडे घर के चने भी अच्छे ही होंगे। सेठजी, दीजिए न, चने चबावें।

सेठजी टालना चाहते थे। इतने मे दूसरे ने कहा—भाई इसमे सेठजी से क्या पूछना है? भूख हो तो ले लो। अपने लिये तो आये ही हैं।

सेठजी बेचारे सिकुडते ही जाते थे। सोचते थे -अब तो इज्जत धूल मे मिली!

इतने ही मे उनके मित्रो ने थाल का कपडा हटा दिया। कपडा हटाते ही थाल मे रखे मेवा और कटोरी मे रखे रत्न आदि दिखाई दिये। थाल की यह सामग्री देखकर सेठजी की जान मे जान आई। सेठजी ने सबको मेवा और जवाहरात दिये।

मित्रो के चले जाने पर सेठजी भीतर गये और सेठानी से कहने लगे—आज यह क्या तमाशा किया था तुमने?

सेठानी—कैसा तमाशा?

सेठ—खाने-पीने की चीजें मैं कब ताले मे रखता हूं कि तुमने चाबी लेने नौकर को मेरे पास भेजा?

सेठानी—यह तो उस दिन की बात का प्रमाण दिया है कि पुरुष की इज्जत स्त्री के हाथ मे है। स्त्री चाहे तो पुरुष की आबरू बिगाड दे, चाहे तो बचा ले।

सेठ—यह तो मैं समझ गया परन्तु तुम-सी स्त्री ही तो बिगड़ी बात बना भी सकती है। अगर कोई मूर्खा होगी तो बनी बनाई बात भी बिगाड़ देगी।

सेठानी—मैं सब स्त्रियों के लिए नहीं कहती। मैं तो सिर्फ यही चाहती हूं कि आप यह अभिमान छोड़ दें कि दुनियां में जो कुछ है हम ही हैं। आपके इस अभिमान को मुझ-सी साधारण स्त्री भी खण्डित कर सकती है।

सेठानी की बात सेठजी को जंच गई।

गोभद्र सेठ अपनी सेठानी से कह रहे हैं—तुम मेरे ऋण से नहीं दबी हो किन्तु तुमने जो ऋण दिया है उसी के प्रताप से मेरा यश और वैभव है। यह तुम्हारी ही शक्ति है। रही पुत्र न होने की बात सो पुत्र के न होने में तुम्हारा कोई अपराध नहीं है। फिर चिन्ता करने का क्या कारण है? मुझसे आज तक जो सत्कार्य हुए हैं उन सब में तुम्हारा हाथ रहा है।

स्त्री की शक्ति साधारण नहीं होती। लोग सीता-राम' कहते हैं राम-सीता' नहीं कहते। पहले सीता का नाम फिर राम का नाम लिया जाता है। इसी प्रकार राधाकृष्ण' कहने में पहले राधा और फिर कृष्ण का नाम लिया जाता है। सीता और राधा स्त्रियां ही थी। तारा जसी रानी की बदौलत ही आज भी हरिश्चन्द्र का नाम घर घर में प्रसिद्ध है। इन शक्तियों की सहायता से ही उन लोगों ने अलौकिक कार्य कर दिखलाए हैं। जैसे शरीर का आधा भाग बेकार हो जाने पर सारा ही शरीर बेकार हो जाता है वैसे ही नारी की शक्ति के अभाव में नर की शक्ति काम नहीं करती।

गोभद्र सेठ फिर कहते हैं—'राम, कृष्ण, हरिश्चन्द्र आदि नारी शक्ति की सहायता से धर्म और व्यवहार के ऐसे काम कर सके थे कि ससार उन्हें आज भी आदर के साथ स्मरण करता है। प्रिये ! तुमने आज तक अपने लिए मुझसे कुछ भी नही कहा। अन्य साधारण स्त्रियो की भाति वस्त्रो और आभूषणो के लिए भी तुमने मुझे कभी नही कहा। बिना मेरी सम्मति के तुमने कोई काम नही किया। मैं तुम से पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हू। फिर आज पुत्र की बात को लेकर—जिसमे तुम्हारा कोई दोष नही है—चिन्ता करना वृथा है। इस व्यर्थ की चिन्ता को त्यागो और कर्तव्य कार्य का विचार करो। जैसे पेट मे पहुचा हुआ अन्न पानी प्रत्यक्ष मे दीखता नही है, फिर भी शरीर को शक्ति प्रदान करता रहता है, उसी प्रकार तुम मेरे साथ रहती नही हो, परन्तु मेरे प्रत्येक कार्य मे तुम्हारा हाथ रहता है। जिस देश मे सभी स्त्रिया तुम्हारी जैसी हो जाएगी, उसका मङ्गल हुए बिना नही रह सकता। तुम जैसी सुशीला और सुसस्कृता नारी की शक्ति का मैं एक दिन का भाडा भी नही चुका सकता। फिर तुम मेरी ऋणी कैसे हो ? तुमने अपनी समस्त कलाए मुझे अर्पित कर दी हैं। मैं इन सबका मूल्य किस प्रकार चुका सकता हू ?

प्रिये ! तुमने गाना गाया तो मुझे रिझाने के लिए, नृत्यकला का प्रदर्शन किया तो मेरी ही प्रसन्नता के लिए। किसी दूसरे के लिए नही किया। मुझे भी तुम्हारे सगीत, नृत्य और शृङ्गार के सामने किसी का सगीत, नृत्य या शृङ्गार रूचिकर नही लगता। इसलिए मेरा अनुरोध स्वीकार करो और उदासी छोड़ो।

सेठ गोभद्र की बात सुन कर भद्रा सेठानी अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। वह कहने लगी प्राणनाथ ! आप मुझे इतना अधिक गौरव और सम्मान देते हैं यह बात आज ही मुझे मालूम हुई। मैं आपको सन्तुष्ट करने के लिए कोई यंत्र-मंत्र नहीं जानती। पति के जीवन में अपना जीवन मिला देना ही स्त्री-जीवन की सफलता है। यही मैंने सीखा है और इसी सीख का अपने जीवन में अनुसरण किया है।

पति के स्नेहपूर्ण आश्वासन से सेठानी को संतोष हुआ और उसकी उदासी भी कुछ कम हो गई। मगर कुछ ही क्षणों के पश्चात् उसके हृदय में फिर एक तरंग उत्पन्न हुई। वह पति के सद्व्यवहार का विचार करके मन ही मन अत्यन्त सकुचित हुई। उसने सोचा—पतिदेव का मेरे ऊपर अगाध स्नेह है असीम कृपा है वह मुझे इतना आदर देते हैं। मगर इस सब के बदले मैंने उन्हें क्या दिया है ? बिना पुत्र के यह सब मान-सम्मान और यश-वैभव सूना है।

मन ही मन इस प्रकार सोचकर सेठानी कहने लगी—आप सीता रुक्मिणी और तारा की बात कहते हैं, पर क्या सीता ने लव और कुश जैसे पुत्रों का उपहार रामचन्द्र को नहीं दिया था ? रुक्मिणी ने प्रद्युम्न जैसा श्रेष्ठ पुत्र नहीं पैदा किया था ? क्या तारा ने रोहित-सा बेटा नहीं दिया था ? मैंने आपको क्या प्रतिफल दिया है ? मैं अब तक आपसे लेती ही लेती रही हूं दिया कभी कुछ नहीं है। ऐसी स्थिति मे आप सीता आदि सतियों का नाम लेकर मुझे लज्जित क्यों करते हैं ? अगर मैं पुत्रवती होती तो क्या मेरी आशा पूरी न होती ? क्या मैं आपको एक सुयोग्य और सुन्दर उत्तराधिकारी न देती जो आपकी कीर्ति को

कायम रखता और आपका नाम प्रसिद्ध करता ? मगर मुझ में बडी कमी है । इसी कारण यह सब नही हो सका है ।'

इतना कह कर सेठानी फिर चिन्ताग्रस्त हो गई । यह देख कर गोभद्र भी चिन्तित हुए । उन्होने कहा—तुम्हें मेरे वचन पर श्रद्धा तो है न ?

सेठानी – आप मेरे सर्वस्व हैं । आपके वचन पर मैं अश्रद्धा कैसे कर सकती हू ?

सेठ—तुम्हे आज तक कभी चिन्ता नही हुई और आज हुई तो ऐसी कि अनेक उपाय करने पर भी नही मिटती । तुम्हारी चिन्ता दूर होने का और कोई तो उपाय है नही, अलबत्ता एक उपाय मुझे सूझता है । तुम पूरी तरह धर्म-कार्य मे लग जाओ । ऐसा करने से शायद तुम्हारी चिन्ता मिट जाय । यह चिन्ता, जो आज अचानक ही तुम्हारी अन्त -करण मे आविर्भूत हुई है सो शायद मिटने के लिए । अतएव धर्म की आराधना मे लग जाओ । मैं भी आज से पर–मात्मा की आराधना मे लगती हू । दीन दुखिया दिखाई दे तो उसका दु ख दूर करना, सहधर्मी के प्रति वत्सलता वढाना और किसी पर द्वेष का भाव न आने देना चाहिए । धर्म की आराधना करने से आत्मशाति तो प्राप्त होगी ही और यदि पुत्र होना होगा तो वह भी हो जाएगा । धर्म का फल तो कही जाएगा नही । मुझे आशा होती है कि तुम्हारी चिन्ता शीघ्र ही दूर हो जाएगी ।

पति के इस आश्वासन से सेठानी भद्रा को कुछ सतोष हुआ । वह सोचने लगी—अभी मैं सचमुच ऐसी भाग्यवती होऊगी कि इस घर को प्रकाशमान करने वाला

सास दे सकूंगी ?

पति और पत्नी दोनों सच्चे अन्तःकरण से धर्म-कार्य में लग गये। धर्म-कार्य तो वे पहले भी करते ही थे, अब विशिष्ट रूप से धर्म की आराधना करने लगे। कब तक वे धर्माराधना में लगे रहे, इसका उल्लेख कथाकार ने कहीं नहीं किया है।

प्रत्येक मनुष्य अपने समान शील वाले को ही आकर्षित करता है। बालक से बालक बूढ़े से बूढ़ा, श्रीमंत से श्रीमंत और ज्ञानी से ज्ञानी जिस प्रकार मिल जाते हैं इसी प्रकार धर्मात्मा से धर्मात्मा मिल जाता है। इधर गोभद्र सेठ और उनकी पत्नी भी दातार थे और उधर संगम भी दातार था। बल्कि संगम ने जैसा उत्कृष्ट दान किया है वैसा शायद यह श्रीमंत दम्पती भी न दे सके होंगे। यही कारण है कि भद्रा-सिंहनी के उदर रूपी कंदरा में संगम जैसा बालक पुत्र के रूप में आया। योग्य योग्येन योजयेत् अर्थात् जो जिसके योग्य हो उसके साथ ही उसका सम्बन्ध होना चाहिए, यह उक्ति यहां चरितार्थ हुई।

सेठ और सेठानी सोये हुए थे। सेठानी को स्वप्न में एक फल-फूलों से समृद्धशाली खेत दिखाई दिया। स्वप्न देखते ही सेठानी की निद्रा भंग हो गई। वह बिस्तर से उठ कर सेठ के पास पहुँची। सेठ को उसने अपने स्वप्न का विवरण सुनाया। सेठ ने कहा—यह स्वप्न उत्तम है। अब दुष्काल रहने वाला नहीं है। इस स्वप्न से प्रकट होता है कि तुम्हारी चिरकालीन मनोकामना पूरी होगी। तुम पुत्र रत्न की माता बनोगी।

बालक संगम सीधा साधा और सरल हृदय का था झूठ कपट उसके पास नही फटकता था। इन सब गुणों के तथा उत्तम दान के प्रताप से संगम गोभद्र सेठ के यहा भद्रा सेठानी के उदर मे आया।

साधारण लोगो की बुद्धि स्थूल और दृष्टि सकीर्ण होती है। वे मोटी बात को तो किसी प्रकार समझ भी लेते हैं पर उसमे जो भीतरी रहस्य होता है, उसे नही समझ पाते। धर्म पर अश्रद्धा होने का भी यही कारण है। सगम का मर जाना तो दृष्टि में आ जाता है, मगर यह बात दृष्टि मे नहीं आती कि मृत्यु के पश्चात् उसकी क्या स्थिति हुई ? मृत्यु होने के फलस्वरूप उसकी स्थिति मे सुधार हुआ, विकास हुआ या नही हुआ, इन सब बातो की जानकारी न होने के कारण लोग अन्धकार मे रहते हैं और कभी-कभी धर्म पर अविश्वास कर बैठते हैं। ऐसे अज्ञान पुरुषो को यह शका हो सकती है कि मुनि को दान देने के वाद संगम को मृत्यु के मुख मे जाना पडा तो दान देना मगलमय कैसे हुआ ? लोगो ने धर्म को भी एक प्रकार का व्यापार–सा बना रखा है। 'इस हाथ दे उस हाथ ले' की कहावत के अनुसार वे तत्काल ही धर्म का फल चाहते हैं। भविष्य मे फल मिलने पर उन्हे भरोसा नही है। मगर उन्हे समझना चाहिये कि सगम ने अगर दान-धर्म का पालन न किया होता तो वह भद्रा सेठानी के उदर मे कैसे पहुच सका होता ? भद्रा सेठानी के घर आनन्द–मगल कैसे होता ?

सगम की आत्मा ने सेठानी भद्रा के गर्भ मे प्रवेश किया। सेठजी सेठानी के स्वप्न से समझ गये कि अव हमारी दरिद्रता दूर होने वाली है।

बनना चाहिये शक्ति बनना चाहिये और ब्रह्मचर्य का पालन करके बालक की रक्षा करनी चाहिये।

भद्रा सेठानी मन शोक मोह एवं चिन्ता से दूर रह कर अपने गर्भ की रक्षा करने लगी।

गर्भवती स्त्री को भूखा रहने में धर्म नहीं बतलाया गया है। किसी शास्त्र में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि किसी गर्भवती स्त्री ने अनशन तप किया था। जब तक बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर है तब तक माता को यह अधिकार नहीं कि वह उपवास करे। बड़ा मूल गुण का घात करके उत्तर गुण की क्रिया करना ठीक नहीं।

भद्रा का गर्भ ज्यों-ज्यों बढ़ता गया त्यों-त्यों उसके मनोरथ अच्छे-अच्छे होते रहे। पेट में जब कोई धर्मी जीव आता है तो माता की भावना भी धर्ममयी हो जाती है।

आखिर एक दिन शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्त में भद्रा की कूख से पुत्ररत्न का जन्म हुआ। दासी दौड़ी हुई गोभद्र सेठ के पास पहुंची। उसने सेठजी को पुत्र होने की बधाई दी। उसने कहा— लोग जिस शुभ मुहूर्त की राह देख रहे थे वह आ गया है। कुल का सूर्य उदित हो गया है।

यह हर्ष समाचार सुनकर गोभद्र सेठ को रोमांच हो आया। उन्होंने अपने हाथ से दासी का सिर धोया उसे दासीपन से मुक्त किया और अपने पहनने के सब आभूषण उसे पुरस्कार में दे दिये।

८ : शालिभद्र की बाल्यावस्था

बेचारी धन्ना सहायविहीन थी। कौन था उसका, जिसे वह अपना कह सके? ले-दे कर एक सगम ही उसका आधार था। उसी के सहारे धन्ना जी रही थी। धन्ना ने न जाने कितनी बार सगम को आधार मान कर भविष्य के सुनहरे सपने देखे थे। उसने कल्पना के कई-एक महल बाध लिये थे मगर यकायक एक तूफान आया और उसके कल्पना-महल धूल मे मिल गये। उसके सुनहरे सपने विकराल वास्तविकता का रूप धारण करके उसके भोलेपन पर हसने लगे मानो वास्तविकता कह रही थी—अरे क्षुद्र शक्ति वाले मानवकीट! तुझे भविष्य की बात सोचने का अधिकार ही क्या है? जल के बुलबुले की तरह अपने कभी भी समाप्त हो जाने वाले जीवन को लेकर तू मन्सूबो के ढेर लगा लेता है। जानता नही, तेरी शक्ति अदृष्ट के इशारो पर नाचती है?

सगम के वियोग से धन्ना को कैसी मार्मिक चोट लगी होगी, यह तो कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। धन्ना का हृदय आहत हो गया। उसकी चेतना सो गई। स्फूर्ति जाती रही। धैर्य छूट गया। साहस बिखर गया। उत्साह विलीन हो गया।

किसी कवि ने ससार का स्वरूप चित्रित करते हुए कितना सुन्दर कहा है—

काहू घर पुत्र जायो, काहू के वियोग आयो।
काहू राग रग काहू, रोआ-रोई परी है॥

बनना चाहिये शक्ति बनना चाहिये और ब्रह्मचर्य का पालन करके बालक की रक्षा करनी चाहिये ।

भद्रा सेठानी भय क्षोभ मोह एवं चिन्ता से दूर रह कर अपने गर्भ की रक्षा करने लगी।

गर्भवती स्त्री को भूखा रहने में धर्म नहीं बतलाया गया है । किसी शास्त्र में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि किसी गर्भवती स्त्री ने अनशन तप किया था । जब तक बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर है तब तक माता को यह अधिकार नहीं कि वह उपवास करे । क्या मूल गुण का घात करके उत्तर गुण की क्रिया करना ठीक नहीं ।

भद्रा का गर्भ ज्यों–ज्यों बढ़ता गया त्यों–त्यों उसके मनोरथ अच्छे-अच्छे होते रहे । पेट में जब कोई धर्मी जीव आता है तो माता की भावना भी धर्ममयी हो जाती है ।

आखिर एक दिन शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्त में भद्रा की कूख से पुत्ररत्न का जन्म हुआ । दासी दौड़ी हुई गोभद्र सेठ के पास पहुंची । उसने सेठजी को पुत्र होने की बधाई दी । उसने कहा– सोम जिस शुभ मुहूर्त की राह देख रहे थे वह आ गया है । कुल का सूर्य उदित हो गया है ।

यह हर्ष समाचार सुनकर गोभद्र सेठ को रोमांच हो आया । उन्होंने अपने हाथ से दासी का सिर धोया उसे दासीपन से मुक्त किया और अपने पहनने के सब आभूषण उसे पुरस्कार में दे दिये ।

—❀—

८ : शालिभद्र की बाल्यावस्था

बेचारी धन्ना सहायविहीन थी। कौन था उसका, जिसे वह अपना कह सके? ले-दे कर एक सगम ही उसका आधार था। उसी के सहारे धन्ना जी रही थी। धन्ना ने न जाने कितनी बार सगम को आधार मान कर भविष्य के सुनहरे सपने देखे थे। उसने कल्पना के कई-एक महल बाध लिये थे मगर यकायक एक तूफान आया और उसके कल्पना-महल धूल मे मिल गये। उसके सुनहरे सपने विकराल वास्तविकता का रूप धारण करके उसके भोलेपन पर हसने लगे मानो वास्तविकता कह रही थी—अरे क्षुद्र शक्ति वाले मानवकीट! तुझे भविष्य की बात सोचने का अधिकार ही क्या है? जल के बुलबुले की तरह अपने कभी भी समाप्त हो जाने वाले जीवन को लेकर तू मन्सूबो के ढेर लगा लेता है। जानता नही, तेरी शक्ति अदृष्ट के इशारो पर नाचती है?

सगम के वियोग से धन्ना को कैसी मार्मिक चोट लगी होगी, यह तो कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। धन्ना का हृदय आहत हो गया। उसकी चेतना सो गई। स्फूर्ति जाती रही। धैर्य छूट गया। साहस बिखर गया। उत्साह विलीन हो गया।

किसी कवि ने ससार का स्वरूप चित्रित करते हुए कितना सुन्दर कहा है—

काहू घर पुत्र जायो, काहू के वियोग आयो।
काहू राग रग काहू, रोआ-रोई परी है॥

उन्होंने उत्साह और उदारता के साथ स्वप्नोत्सव मनाया। स्वप्नोत्सव के अवसर पर इतना दान दिया कि याचक अयाचक बन गये और बहुतेरे दुखिया सुखी हो गये।

आजकल के अधिकांश नर-नारियों को गर्भ सम्बन्धी ज्ञान नहीं होता परन्तु भगवतीसूत्र में इस विषय की चर्चा की गई है। वहां यह बतलाया गया है कि—हे गौतम! माता के आहार पर ही गर्भ के बालक का आहार निर्भर है। माता के उदर में रसहरणी नालिका होती है। उसके द्वारा माता के आहार से बना रस बालक को पहुंचता है और उसी से बालक के शरीर का निर्माण होता है।

बहुत-सी गर्भवती स्त्रियां भाग्य के भरोसे रहती हैं और गर्भ के विषय की जानकारी नहीं करतीं। इस अज्ञान के कारण कभी-कभी गर्भस्थ बालक गर्भवती स्त्री दोनों को हानि उठानी पड़ती है। बालक को आंखों देखते काटना या मारना तो कोई सहन नहीं करता पर अज्ञान के कारण बालक की मौत हो जाती है और माता के प्राण सकट में पड़ जाते हैं यह सहन कर लिया जाता है।

गौतम स्वामी ने प्रश्न किया है—गर्भ का बालक मलमूत्र का त्याग भी किया करता है? भगवान् का उत्तर है—गर्भ का बालक माता के भोजन में से रसभाग को ही ग्रहण करता है। उस सार रूप रस भाग को भी वह इतनी मात्रा मे ग्रहण करता है कि उसके शरीर के निर्माण में ही सारा लग जाता है। गर्भस्थ बालक आहार के खलभाग को लेता ही नहीं है। अतएव उसे मल-मूत्र नहीं आता।

भगवान् के कथन का सार यह है कि गर्भ के बालक

का आहार माता के आहार पर निर्भर है। माता यदि
अत्यधिक खट्टा-मीठा या चरपरा खाएगी तो उससे बालक
को हानि पहुचे विना नही रहेगी। जैसे कैदी का भोजन
जेलर के जिम्मे होता है, जेलर के देने पर ही कैदी भोजन
पा सकता है। अन्यथा नही, इसी प्रकार पेट रूपी कारागार
मे रहे हुए वालक रूपी कैदी के भोजन की जिम्मेवारी माता
पर है। गर्भस्थ वालक की दया न करने वाले मा–बाप
घोर निर्दय हैं, बाल–घातक हैं। अनुकम्पा के द्वेषी कहते
हैं कि श्रेणिक की रानी धारिणी ने अपने गर्भ की रक्षा की,
सो वह मोह अनुकम्पा का पाप हुआ। लेकिन धारिणी के
विषय मे शास्त्र का पाठ है कि धारिणी रानी गर्भ की
अनुकम्पा के लिये भय, चिन्ता और मोह नही करती है
क्योकि क्रोध करने से बालक क्रोधी होता है, भय करने से
बालक डरपोक बन जाता है और मोह करने से लोभी होता
है। इसीलिए धारिणी ने इन सब दुर्गुणो का त्याग कर
दिया था। आश्चर्य तो यह है कि अनुकम्पा के विरोधी इन
दुर्गुणो के त्याग को भी दुर्गुण कहते हैं। मोह के त्याग को
भी मोह—अनुकम्पा कहने वाले समझदार (!) लोगो को
कौन समझा सकता है ?

जो स्त्रिया गर्भवती होकर भी भोग का त्याग नहीं
करती हैं, वे अपने पैरो पर आप ही कुल्हाडी मारती हैं।
इस नीचता से बढ कर और कोई नीचता नही हो सकती।
नैतिक दृष्टि से ऐसा करना घोर पाप है और वैद्यक की
दृष्टि से अत्यन्त अहितकर है। पतिव्रता का अर्थ यह नही
है कि वह पति की ऐसी आज्ञा का पालन करके गर्भस्थ
बालक की रक्षा न करे। माता को ऐसे अवसर पर सिंहनी

बनना चाहिये शक्ति बनना चाहिये और ब्रह्मचर्य का पालन करके बालक की रक्षा करनी चाहिये ।

भद्रा सेठानी भय क्षोभ मोह एवं चिन्ता से दूर रह कर अपने गर्भ की रक्षा करने लगी।

गर्भवती स्त्री को भूखा रहने में धर्म नहीं बतलाया गया है । किसी शास्त्र में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि किसी गर्भवती स्त्री ने अनशन तप किया था । जब तक बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर है तब तक माता को यह अधिकार नही कि वह उपवास करे । क्या मूल गुण का घात करके उत्तर गुण की क्रिया करना ठीक नही ।

भद्रा का गर्भ ज्यों–ज्यों बढ़ता गया त्यों–त्यों उसके मनोरथ अच्छे-अच्छे होते रहे। पेट में जब कोई धर्मी जीव आता है तो माता की भावना भी धर्ममयी हो जाती है ।

आखिर एक दिन शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्त में भद्रा की कूख से पुत्ररत्न का जन्म हुआ। दासी दौड़ी हुई गोभद्र सेठ के पास पहुंची । उसने सेठजी को पुत्र होने की बधाई दी । उसने कहा– आप जिस शुभ मुहूर्त की राह देख रहे थे वह आ गया है । कुल का सूर्य उदित हो गया है ।

यह हर्ष समाचार सुनकर गोभद्र सेठ को रोमांच हो आया । उन्होंने अपने हाथ से दासी का सिर धोया उसे दासीपन से मुक्त किया और अपने पहनने के सब आभूषण उसे पुरस्कार में दे दिये ।

—❀—

८ : शालिभद्र की बाल्यावस्था

बेचारी घन्ना सहायविहीन थी। कौन था उसका, जिसे वह अपना कह सके ? ले-दे कर एक सगम ही उसका आधार था। उसी के सहारे घन्ना जी रही थी। घन्ना ने न जाने कितनी बार सगम को आधार मान कर भविष्य के सुनहरे सपने देखे थे। उसने कल्पना के कई-एक महल बाध लिये थे मगर यकायक एक तूफान आया और उसके कल्पना-महल धूल मे मिल गये। उसके सुनहरे सपने विकराल वास्तविकता का रूप धारण करके उसके भोलेपन पर हसने लगे मानो वास्तविकता कह रही थी—अरे क्षुद्र शक्ति वाले मानवकीट! तुझे भविष्य की बात सोचने का अधिकार ही क्या है ? जल के बुलबुले की तरह अपने कभी भी समाप्त हो जाने वाले जीवन को लेकर तू मन्सूबो के ढेर लगा लेता है। जानता नही, तेरी शक्ति अदृष्ट के इशारो पर नाचती है ?

सगम के वियोग से घन्ना को कैसी मार्मिक चोट लगी होगी, यह तो कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। घन्ना का हृदय आहत हो गया। उसकी चेतना सो गई। स्फूर्ति जाती रही। धैर्य छूट गया। साहस बिखर गया। उत्साह विलीन हो गया।

किसी कवि ने ससार का स्वरूप चित्रित करते हुए कितना सुन्दर कहा है—

> काहू घर पुत्र जायो, काहू के वियोग आयो।
> काहू राग रग काहू, रोआ-रोई परी है॥

राजगृह में इसी प्रकार की घटना घट रही है। एक ओर भद्रा शोक मना रही है और दूसरी ओर गोभद्र सेठ के घर नौबत बज रही है।

भद्रा की पड़ौसिनें उसे समझाती हुई कहने लगीं—गोभद्र सेठ के घर बालक का जन्मोत्सव मनाया जा रहा है, तुम भी उस उत्साह में सम्मिलित हो जाओ।

भद्रा व्यथित हृदय से कहने लगी—पुत्र-शोक की आग में मेरा कलेजा जला जा रहा है। मैं आनन्द कैसे मनाऊं? बहिनों क्या तुम मेरा उपहास कर रही हो? इतना निर्दय उपहास तो कोई किसी का न करता होगा।

पड़ौसिनों ने कहा—ना भद्रा भला तुम्हारे साथ उपहास! और वह भी इस अवस्था में? उपहास करने का यह अवसर नहीं है। मगर हमने ठीक ही कहा है। धर्मात्मा के घर बेटा होने पर सभी को खुशी मनानी चाहिए। इसके अतिरिक्त एक बात और है। जिस दिन धमन ने शरीर त्याग किया उसके ठीक नौ महीना और साढ़े सात दिन बीतने पर सेठ के घर बालक जन्मा है। बहुत संभव है कि धमन ने ही नया शरीर धारण करके जन्म लिया हो। अतएव उस बालक को तुम अपना ही बालक समझा करो। धर्मपुत्र तो होते है न? तुम उसे अपना धर्मपुत्र समझ लो। इससे तुम्हें शांति मिलेगी। शोक मनाने और आंसू बहाने से तो कोई लाभ होता नहीं। संसार में संयोग वियोग तो अवश्यम्भावी हैं। फिर शोक करने से क्या वह रुक जाएंगे?

पड़ौसिनों की बात भद्रा के दिल में जम गई। उस दिन से शालिभद्र को वह अपना बेटा ही समझने लगी।

वह सोचने लगी—चलो मेरा संगम मेरे यहा कष्ट पाता था, अब सुख मे पहुच गया । मैं उसे देख कर ही सन्तोष कर लिया करूगी । वह तो मुझे नही पहचानेगा, पर मैं किसी बहाने जाकर, बिना बदले की भावना, केवल अपने हृदय के आश्वासन के लिए उसकी सेवा कर आया करूगी । मैं उसकी धर्म-माता हू । मुझे अपनी सेवा के प्रतिफल की आशा ही नही रखनी चाहिये ।

धन्ना गोभद्र सेठ के घर जा पहुची । वह शालिभद्र को देख कर प्रसन्न रहने लगी । शालिभद्र दिन-दिन बड़ा होने लगा और उसकी कान्ति चन्द्रिका की तरह बढने लगी ! उसकी सुन्दरता और कोमलता वैरी का भी मन हरण करने वाली थी ।

धीरे-धीरे शालिभद्र कुछ बडा हुआ । कुछ लोगो का कहना है कि शालिभद्र ने कभी पैर नीचे नही रखा था और न चन्द्रमा एव सूर्य की किरणें देखी थी । लेकिन वस्तुस्थिति ऐसी नही है । पहले के लोग ऐसे नही थे कि अपने बालक को गुडिया बना रखें और कलाओ का शिक्षण न दें ।

मकराने के पत्थर को आप कितना ही धोवें, वह मूर्ति नही बन सकता, पत्थर ही बना रहेगा । मूर्ति तो वह तभी बन सकता है जब टाची सहन करेगा । क्या आप यह समझते हैं कि शालिभद्र को उसके पिता ने अनघडा पाषाण ही बनाये रखा था ? मगर बिना गुण प्राप्त किये विवाह कर देने की प्रथा इस पाचवें आरे मे ही है । शालिभद्र के उस स्वर्णमय युग मे ऐसी प्रथा नही थी ।

शालिभद्र समस्त कलाओ मे कुशल हो गया । माता

ने उसे जो-जो आशीर्वाद दिये थे वे सब अब सफल हो गये और शालिभद्र जब गृहस्थी का भार उठाने योग्य हो गया, तब गोभद्र सेठ ने उसके विवाह का विचार किया।

मां-बाप के लिए पुत्र वैसा ही होता है जैसे कृषक के लिए खेत का कपास। कृषक अगर खेत के कपास को खेत में ही रखे उसे औटावे और धुनकावे नहीं तो वह कपास किसी काम का न होगा। इसी प्रकार जो माता-पिता अपने बालक को अपने घर में दुबेड़े रखते हैं उन्हें ऊंची क्रिया नहीं सीखने देते वे माता पिता उस बालक के लिये वैसे ही हैं जैसे कपास का खेत में रख छोड़ने वाला कृषक। जब तक शरीर श्रम करने में समर्थ नहीं बनता, तब तक जीवन निकम्मा ही रहता है। शास्त्र के वर्णन से ज्ञात होता है कि पहले का कोई राजकुमार या श्रेष्ठिकुमार बह त्तर कला सीखे बिना नहीं रहता था।

जब शालिभद्र समस्त कलाओं में पारंगत हो गया तो उसका विवाह कर देने का विचार किया गया।

९ विवाह

शालिभद्र कुमार नीति व्यवहार और विज्ञान में कुशल हो गये। यह देखकर उनके माता-पिता ने उन्हें विवाह के योग्य समझा और किसी सुयोग्य कन्या के साथ विवाह कर देने का विचार किया।

समझदार और नासमझ के विवाह में बड़ा अन्तर होता है। इसी प्रकार उचित उम्र में होने वाले और अनुचित

उम्र मे होने वाले विवाह मे भी बहुत भेद है। जो बच्चे सभी व्यवहार को समझ भी नही पाये हैं, जिनके शरीर की कली अभी तक खिल भी नही पाई है जिन्होने अभी धर्म को नही समझ पाया है, उनके सिर पर विवाह का उत्तर-दायित्व लाद देना कहा तक योग्य है ? ऐसा करना सम-योचित कार्य है या असामयिक, वह कहने की आवश्यकता नही। ऐसा करने वाले बहुत बार धोखा खाते हैं। फिर भी आश्चर्य है कि उन्हे देखकर दूसरो की और यहा तक कि खुद धोखा खाने वालो की भी अकल ठिकाने नही आती।

शालिभद्र की सगाई बत्तीस जगह से आई। शालिभद्र के पिता विचार मे पड गये कि किसे हां कहे किसे नही ?

विवाह मे पहले का सस्कार बडा काम करता है। जब पहले का सस्कार जोर मारता है तभी विवाह होता है।

शालिभद्र का कुल प्रतिष्ठित था, सम्पन्न था। उसके माता-पिता धर्मशील और सुसंस्कारी थे। उनकी सज्जनता की नगर मे ख्याति थी। इस पर भी शालिभद्र के सौन्दर्य और सत्स्वभाव एव बुद्धिमत्ता का क्या कहना है ? सोने मे सुगन्ध की कहावत वहा चरितार्थ होती थी। ऐसी स्थिति मे प्रत्येक कन्या का पिता यही चाहता था कि मेरी कन्या के साथ शालिभद्र का विवाह होना चाहिये। सयोगवश सभी कन्याओ के पिता एक ही साथ विवाह का प्रस्ताव लेकर आये। सेठ गोभद्र बडे असमजस मे पडे। वह सोचने लगे, किसी एक का प्रस्ताव स्वीकार करके शेष सबको मनाही करते हैं तो अच्छा नही मालूम होता। ये लोग आगे-पीछे

आये होते तो इतनी परेशानी न होती ।

इस प्रकार सोच-विचार करते-करते सेठ गोभद्र को एक तरकीब सूझ गई । उन्होंने सब से कहा—आप सब सज्जनों की कन्याएं सुशील कुलीन और सुसंस्कारी हैं लेकिन शालिभद्र के लिए सिर्फ एक कन्या की आवश्यकता है । आप बत्तीस सज्जन यहाँ एक साथ पधारे हैं । अब आप ही निर्णय कर दें कि मैं किसकी कन्या के साथ शालिभद्र का विवाह करना स्वीकार करू और किसे नाहीं करू ? आप सभी बुद्धिमान् हैं । मेरी कठिनाई समझ सकते हैं । कृपा करके मेरी कठिनाई दूर करने के लिए आप लोग ही मिल कर निर्णय कर लीजिये । मैं आपका निर्णय शिरोधार्य कर लूंगा ।

गोभद्र का यह विनम्रता और शिष्टता से पूर्ण उत्तर सुन कर बत्तीसों सेठ विचार में पड़ गये । उन्होंने सोचा – सेठ जी ने तो बाजी ही पलट दी । अब क्या करना चाहिये ?

तब उनमें से एक ने कहा—बहु विवाह कहां ठीक नहीं होते हैं और कैसी स्थिति में बहुविवाह से कलह हुआ करता है यह हम सबको मालूम है । सेठ गोभद्र के घर में आकर हम लोगों की कन्याओं में आपस में कलह होना असम्भव है । इसके अतिरिक्त शालिभद्र जैसे अद्वितीय वर को कौन अपनी कन्या न ब्याहना स्वीकार करेगा ? ऐसी स्थिति में हम सब अपनी-अपनी कन्याओं से परामर्श कर लें । अगर कोई कन्या सौतों के साथ न रहना चाहे तब तो कोई प्रश्न ही नहीं है उसके लिए दूसरा वर तलाश किया जाय । अगर कन्याओं को आपत्ति न हो तो फिर वि

कोई वात ही नही है । शालिभद्र के साथ सभी का सम्बन्ध निश्चित कर दिया जाय ।

यह विचार सभी को पसन्द आया । सबने अपनी-अपनी कन्याओ और परिवार के साथ एक स्थान पर मिलने और निर्णय कर लेने का फैसला कर लिया । वे सब वहा से रवाना हुए और एक स्थान पर इकट्ठे हुए । सब अपनी-अपनी कन्याओ को ले आए और परिजनो को भी । वहां कन्याओ से प्रश्न किया गया—शालिभद्र कुमार का सम्बन्ध किस कन्या के साथ किया जाय, यह निर्णय करने का उत्तर-दायित्व हमारे ऊपर आ पडा है और हमारा निर्णय तुम्हारी इच्छा पर आश्रित है । तुम सबको मिलकर यह विचार करना है कि तुम अलग-अलग वर पसन्द करती हो या सभी एक शालिभद्र को पसन्द करके साथ-साथ रहना चाहती हो ?

शालिभद्र का नाम सुनते ही सब कन्याए प्रसन्न हो उठीं । उनका हृदय उसी की ओर आकर्षित हुआ । शालिभद्र मे न मालूम क्या आकर्षण था कि सौतो की जोखिम स्वीकार करके भी कोई कन्या दूसरा वर पसन्द नही कर सकती थी । कन्याए सब समझदार थी । सभी ने ६४ कलाओ के कुशलता प्राप्त की थी । पूर्व सस्कार भी उन्हें प्रेरित कर रहे थे । अत सबने मिलकर निर्णय किया—चाहे एक घडी का सुख हो परन्तु सुख तो शालिभद्र के साथ रहने से ही है ।

चन्दन की टुकडी भली, गाडा भरा न काठ ।
सज्जन तो एक ही भला, मूरख भला न साठ ।।

आये होते तो इतनी परेशानी न होती।

इस प्रकार सोच विचार करते-करते सेठ गोभद्र को एक तरकीब सूझ गई। उन्होंने सब से कहा—आप सब सज्जनों की कन्याएं सुशील कुलीन और सुसंस्कारी हैं लेकिन शालिभद्र के लिए सिर्फ एक कन्या की आवश्यकता है। आप बत्तीस सज्जन यहां एक साथ पधारे हैं। अब आप ही निर्णय कर दें कि मैं किसकी कन्या के साथ शालिभद्र का विवाह करना स्वीकार करूं और किसे नाही करूं ? आप सभी बुद्धिमान् हैं। मेरी कठिनाई समझ सकते हैं। कृपा करके मेरी कठिनाई दूर करने के लिए आप लोग ही मिल कर निर्णय कर लीजिये। मैं आपका निर्णय शिरोधार्य कर लूंगा।

गोभद्र का यह विनम्रता और शिष्टता से पूर्ण उत्तर सुन कर बत्तीसों सेठ विचार में पड़ गये। उन्होंने सोचा—सेठ जी ने तो बाजी ही पलट दी। अब क्या करना चाहिये ?

तब उनमें से एक ने कहा—बहु विवाह कहां ठीक नहीं होते हैं और कैसी स्थिति में बहुविवाह से कलह हुआ करता है यह हम सबको मालूम है। सेठ गोभद्र के घर में जाकर हम लोगों की कन्याओं में आपस में कलह होना असम्भव है। इसके अतिरिक्त शालिभद्र जैसे अद्वितीय वर को कौन अपनी कन्या न ब्याहना स्वीकार करेगा ? ऐसी स्थिति में हम सब अपनी-अपनी कन्याओं से परामर्श कर लें। अगर कोई कन्या सौतों के साथ न रहना चाहे तब तो कोई प्रश्न ही नहीं है उसके लिए दूसरा वर तलाश किया जाय। अगर कन्याओं को आपत्ति न हो तो फिर चिन्ता करने की

होती। यह वात दूसरी है कि बहुतो को विवाह के उस उज्ज्वल उद्देश्य का पता ही न हो और बहुत लोग विवाह करके भी इस उद्देश्य को प्राप्त करने की ओर ध्यान ही न देते हो, फिर भी विवाहित जीवन की सफलता इसी मे है कि पति और पत्नी आत्मीयता के क्षेत्र को विशाल से विशालतर बनाते जाए और अन्त मे प्राणी-मात्र पर उसे फैला दे—विश्वमैत्री की प्राप्ति के योग्य बन जाए।

कन्याए कहती हैं—हम सब एक साथ रहेगी तो इस भावना की साधना करने मे सफलता अधिक मिलेगी। अत हमने यह निश्चय किया है कि हम एक ही साथ रहेगी।

कन्याओ की यह सम्मति देख सब लोग प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा—चलो, अच्छा ही है। अब हम लोग भी एक के बदले तेतीस हो जाएगे।

बत्तीसो सेठ गोभद्र के पास पहुचे। उन्होंने कहा—हम लोगो ने कन्याओ की सम्मति लेकर अन्तिम निर्णय कर लिया है। अब आपको वही करना होगा, जो हम लोग कहेगे।

गोभद्र सेठ ने आगत मेहमानो का यथोचित सत्कार किया और योग्य आसन पर बैठा कर उनसे पूछा—आपने सलाह कर ली है? कहिए, किसकी कन्या का शालिभद्र के साथ विवाह होना निश्चित हुआ है। उत्तर मिला—बत्तीसो कन्याए कुमार शालिभद्र के साथ जुडेंगी। यह तय हो चुका है।

गोभद्र—एक लडके के साथ बत्तीस कन्याए! उस सुकुमार बालक की ओर भी देखिये। इतना अधिक बोझा उस पर मत डालिये। यद्यपि बालक पराक्रमी है, फिर भी है तो एक ही। एक पुरुष के लिए एक ही स्त्री का बोझ

शालिभद्र के साथ ब्रह्मचर्यपूर्वक अथवा मर्यादित रहना अच्छा है पर दूसरा वर स्वीकार करना अच्छा नहीं। शालिभद्र के संसर्ग में रहने में और उनकी पत्नी कहलाने में जो सुख है वह अन्य कहीं नहीं मिल सकता।

इस प्रकार विचार कर कन्याओं ने अपना निश्चय प्रकट कर दिया कि हम सब बहिनों का भाग्य एक ही सूत्र में अगर दैव ने बांध दिया है तो उस दैवी विधान का उल्लंघन नहीं किया जा सकता। हम सब एक ही वृक्ष पर चढ़ने वाली बेलें हैं। हम में कोई ऐसी नहीं जिसमें ईर्ष्या हो, स्वार्थपरायणता हो और दूसरे के अधिकार का अपहरण करने की क्षुद्रता हो। अतः आपस के कलह की हमारे बीच कोई सम्भावना नहीं है। हम एक दूसरी की सहायता से अपना जीवन सम्पन्न शान्त आनन्दमय और उच्चकोटि का बनाने का प्रयत्न करेंगी। एक की कमी दूसरी पूरा कर देगी। अगर हम कभी कलह करें तो आप हमें धिक्कार देना। अगर हम अलग-अलग रहती तो हमारे एक-एक ही मां-बाप होते। शामिल रहने से हम में से प्रत्येक के बत्तीस माताएं और बत्तीस पिता होंगे। जिसे पराया मान रखा है उसके प्रति आत्मीयता की भावना स्थापित करने की साधना को ही विवाह कहना चाहिये। विवाह के द्वारा आत्मीयता का संकीर्ण दायरा क्रमशः बढ़ता जाता है और बढ़ते-बढ़ते वह जितना अधिक बढ़ जाय उतनी ही मात्रा में विवाह की सार्थकता है। आत्मीयता की भावना को बढ़ाने के लिए शास्त्र में अनेक प्रकार के विधिविधान पाये जाते हैं। विवाह भी उन्हीं में से एक है। यह एक कोमल विधान है, जिसका अनुकरण करने में कठिनाई अधिक नहीं

होती । यह वात दूसरी है कि वहुतो को विवाह के उस उज्ज्वल उद्देश्य का पता ही न हो और वहुत लोग विवाह करके भी इस उद्देश्य को प्राप्त करने की ओर ध्यान ही न देते हो, फिर भी विवाहित जीवन की सफलता इसी मे है कि पति और पत्नी आत्मीयता के क्षेत्र को विशाल से विशालतर वनाते जाए और अन्त मे प्राणी-मात्र पर उसे फैला दें--विश्वमैत्री की प्राप्ति के योग्य वन जाए ।

कन्याए कहती हैं—हम सब एक साथ रहेगी तो इस भावना की साधना करने मे सफलता अधिक मिलेगी । अत. हमने यह निश्चय किया है कि हम एक ही साथ रहेगी ।

कन्याओ की यह सम्मति देख सब लोग प्रसन्न हुए । उन्होने सोचा—चलो, अच्छा ही है । अव हम लोग भी एक के वदले तेतीस हो जाएगे ।

वत्तीसो सेठ गोभद्र के पास पहुचे । उन्होने कहा—हम लोगो ने कन्याओ की सम्मति लेकर अन्तिम निर्णय कर लिया है । अव आपको वही करना होगा, जो हम लोग कहेगे ।

गोभद्र सेठ ने आगत मेहमानो का यथोचित सत्कार किया और योग्य आसन पर वैठा कर उनसे पूछा—आपने सलाह कर ली है ? कहिए, किसकी कन्या का शालिभद्र के साथ विवाह होना निश्चित हुआ है । उत्तर मिला—वत्तीसो कन्याए कुमार शालिभद्र के साथ जुडेंगी । यह तय हो चुका है ।

गोभद्र—एक लडके के साथ वत्तीस कन्याए ! उस सुकुमार वालक की ओर भी देखिये । इतना अधिक वोझा उस पर मत डालिये । यद्यपि वालक पराक्रमी है, फिर भी है तो एक ही । एक पुरुष के लिए एक ही स्त्री का वोझ

पर्याप्त होता है। वह बत्तीस का बोझ कैसे उठा सकेगा? आप जरा इस बात पर विचार कीजिये।

गोभद्र सेठ के कथन के उत्तर में एक ने कहा— हमारी कन्याएं शालिभद्र पर बोझ डालने नहीं आ रही हैं। वे तो शालिभद्र का बोझ हल्का करने आएंगी। शालिभद्र पर जो बोझ है उसे उठाना एक स्त्री की शक्ति से परे है। इस कारण बत्तीसों मिलकर वह भार हल्का करेंगी। शालि-भद्र पर उनका बोझा बिलकुल नहीं होगा। वे सब मिलजुल कर शालिभद्र की सेवा करेंगी और ऐसे रहेंगी मानो बत्तीस नहीं एक हैं। हमारी कन्याएं अबोध बालिकाएं नहीं हैं। उन्होंने समस्त कलाओं में निपुणता प्राप्त की है। अगर आप इस निर्णय में परिवर्तन करेंगे तो अवांछनीय अनर्थ हो सकता है। कन्याएं कर्त्तव्य—अकर्त्तव्य को भली-भांति समझती हैं। उन्होंने निश्चय कर लिया है कि शालिभद्र ही हमारे पति होंगे। अब हम और आप उनके निश्चय को किस प्रकार पलट सकते हैं?

आज का अशिक्षित स्त्री-समाज पुरुषों को बोझ स्वरूप मालूम हो रहा है और पुरुषों ने ही उन्हें ऐसा पंगु बना रखा है कि अधिकांश पुरुषों को और स्त्रियों को विवाह के असली स्वरूप और उद्देश्य का पता नहीं है। यही कारण है कि विवाह जैसा नितान्त सामाजिक कार्य भी सरकार के अधीन हो रहा है। अगर समाज इस विषय में सावधान रहता और अपने कर्त्तव्य का भलीभांति पालन करता तो सरकार को इस विषय में पड़ने की आवश्यकता ही नहीं थी।

एक पुरुष के साथ बत्तीस कन्याओं का एक साथ विवाह होना आज अचमे की बात मालूम होती है। पर

को आज का समाज नापसद करता है । दोनो बातें ठीक हैं पर हमे परिस्थितियो के तथ्य पर भी दृष्टि डालनी होगी । पहली ध्यान देने योग्य बात यह है कि बत्तीसो पिता अपनी पुत्रियो से सम्मति लेकर आये हैं और उन्ही की इच्छा के अनुसार विवाह हो रहा है । आज नकली बत्तीसी लगाकर और खिजाब से सफेद बालो को काला दिखाकर जवान होने का ढोग रचने वालो के साथ जब कन्या का विवाह किया जाता है तब क्या उसकी सम्मति ली जाती है ? बत्तीस कन्याओ के साथ जो विवाह हुआ है, वह न्याय मे अर्थात् कन्याओ की इच्छा से ही हुआ है । उन कन्याओ ने शालिभद्र के साथ ही विवाह करने का प्रण किया है और वे सब एक ही साथ रहना चाहती हैं । इसके अतिरिक्त कन्याओ की अभिलाषा भोग की नही थी । उनका कहना था कि वे भोग का नाश करने के लिए पैदा हुई हैं । अगर कोई शालिभद्र के बहु-विवाह का उदाहरण उपस्थित करके अपने दो-तीन विवाहो को न्यायानुमोदित सिद्ध करना चाहे तो उसे सोचना चाहिए कि वह वास्तव मे एक विवाह के योग्य भी है या नही ?

दानकल्पद्रुम ग्रन्थ मे एक जगह लिखा है कि दान की प्रशसा करने वाले अनुमोदना करने वाले और उस दान के प्रति द्वेष एव रोष न करने वाले उस दान के फल मे भागीदार होते हैं । इस आधार पर यह कल्पना करना अनुचित नही कि सम्भव है वह बत्तीसो कन्याए उन्ही मे से हो जिन्होने सगम के दान को प्रशसा की थी । कुछ भी हो, यह तो निश्चित समझना चाहिये कि पूर्व-सस्कार के कारण ही वे कन्याए वधू बनकर शालिभद्र के घर आई थी ।

आखिर गोभद्र सेठ ने कहा—आपकी कन्याओं के निश्चय से मैं प्रभावित हुआ हूं और नहीं चाहता कि किसी प्रकार की अवांछनीय परिस्थिति उत्पन्न हो जिसका प्रभाव कन्याओं के जीवन पर गहरा पड़ता हो। इसीलिए मैं आपका अनुरोध अस्वीकार नहीं कर सकता। फिर भी अपने उत्तर-दायित्व और कर्तव्य का अनुरोध भी मैं टाल नहीं सकता। मुझे शालिभद्र की सम्मति जान लेनी है। आखिर तो विवाह का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उसी से है। उसका निश्चय ज्ञात होने पर मैं आपको अन्तिम उत्तर दे सकूंगा। हां मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्थिति को देखते हुए शालिभद्र विरोध नहीं करेगा। मेहमान सन्तुष्ट होते हुए विदा हुए।

गोभद्र सेठ खुशी-खुशी शालिभद्र के पास पहुंचे। शालिभद्र को देखकर वह और भी हर्षित हुए। शालिभद्र ने पिता को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और ऊंचे आसन पर बिठला कर कहा—आज आप विशेष रूप से हर्षित दिखाई देते हैं। हानि न हो तो मुझे भी इस हर्ष में हिस्सा दीजिये।

गोभद्र ने कहा—बेटा तुम धन्य हो। मैं आज तुम से यह जानना चाहता हूं कि कुल का स्तम्भ बनने के लिए तुम्हें लग्न करना उचित है या नहीं?

पिता की बात सुनकर शालिभद्र कुछ शर्माया। लेकिन दोबारा पूछने पर उसने कहा—जो अखण्ड ब्रह्मचारी हैं वे धन्य हैं। उन्होंने स्त्रियों में भूमे हुए लोगों को जगा-कर अपनी ओर आकर्षित किया है।

भीष्म पितामह से जब कहा गया कि यदि आप

विवाह करते तो आपके पुत्र भी आप ही सरीखे वीर होते तो भीष्म ने उत्तर दिया—कौन जाने विवाह करने पर सतान होती या न होती ? अगर होती भी तो कुछ ही वीर होते । लेकिन ब्रह्मचारी रह कर मैंने अखड ब्रह्मचर्य का जो आदर्श उपस्थित किया है, उससे चिरकाल तक अनेक वीर होते रहेगे ।

शालिभद्र ने कहा—वे महापुरुष धन्य हैं, जो अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं । जिनमे ब्रह्मचर्य पालन करने का धैर्य नही है, उन पर जबर्दस्ती यह बोझा नही लादा जाता । फिर भी विवाहित लोगो को उनका आदर्श अपने सामने रखना चाहिए और इस तत्त्व पर पहुचना चाहिए कि धीरे-धीरे वे पति-पत्नी मिल कर भाई-बहिन की तरह हो जाए ।

आज लोगो मे यह भावना ही नही है । इस उच्च भावना को भी जाने दीजिए, अगर आप पर-स्त्रियो को माता-बहिन कहा करें तो आपकी दृष्टि कभी दूषित ही न हो । आप भगवान् का जप करते हैं सो अच्छी बात है, पर उसकी सार्थकता तभी है जब 'पर-स्त्री माता' का जाप भी जपें । 'पर-स्त्री माता' का जाप जपने से आत्मा मे बल और जागृति दोनो उत्पन्न होते हैं ।

शालिभद्र अपने पिता से कहते हैं—आपने मेरी इच्छा जाननी चाही है लेकिन यह बात गूढ है । आपने मेरा अधिकार मेरे लिये सुरक्षित रखा, इसके लिए मैं आभारी हू । मेरा विचार दाम्पत्य-धर्म का पालन करते हुए कल्याण-साधन करने का है ।

आखिर गोभद्र सेठ ने कहा—आपकी कन्याओं के निश्चय से मैं प्रभावित हुआ हूं और नहीं चाहता कि किसी प्रकार की अवांछनीय परिस्थिति उत्पन्न हो जिसका प्रभाव कन्याओं के जीवन पर गहरा पड़ता हो। इसीलिए मैं आपका अनुरोध अस्वीकार नहीं कर सकता। फिर भी अपने उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य का अनुरोध भी मैं टाल नहीं सकता। मुझे शालिभद्र की सम्मति जान लेनी है। आखिर तो विवाह का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उसी से है। उसका निश्चय ज्ञात होने पर मैं आपको अन्तिम उत्तर दे सकूंगा। हां मुझे पूर्ण विश्वास है कि स्थिति को देखते हुए शालिभद्र विरोध नहीं करेगा। मेहमान सन्तुष्ट होते हुए विदा हुए।

गोभद्र सेठ खुशी-खुशी शालिभद्र के पास पहुंचे। शालिभद्र को देखकर वह और भी हर्षित हुए। शालिभद्र ने पिता को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और ऊंचे आसन पर बिठला कर कहा—आज आप विशेष रूप से हर्षित दिखलाई देते हैं। हानि न हो तो मुझे भी इस हर्ष में हिस्सा दीजिये।

गोभद्र ने कहा—बेटा तुम धन्य हो। मैं आज तुम से यह जानना चाहता हूं कि कुल का स्तम्भ बनने के लिए तुम्हें लग्न करना उचित है या नहीं ?

पिता की बात सुनकर शालिभद्र कुछ शर्माया। लेकिन दोबारा पूछने पर उसने कहा—जो अखण्ड ब्रह्मचारी हैं वे धन्य हैं। उन्होंने स्त्रियों में भूले हुए लोगों को जगाकर अपनी ओर आकर्षित किया है।

भीष्म पितामह से जब कहा गया कि यदि आप

गोभद्र ने कहा—ऐसे ही पुत्र, सुपुत्र और धर्म को पालने वाले होते हैं। अब एक बात और बतलाओ—एक ही पत्नी चाहते हो या अनेक ?

पिता के प्रश्न के उत्तर मे शालिभद्र कहते हैं—मैं अधिक ज्ञानी तो नही हू, लेकिन प्रकृति की रचना देखता हू तो मुझे दो का ही जोडा दिखाई देता है। पक्षी भी इस नियम का पालन करते हैं। इसलिए एक नर और एक नारी का जोडा ही अच्छा है। इसी से सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं। अधिक मे विघ्न की सम्भावना रहती है।

गोभद्र—होना तो ऐसा ही चाहिए, मगर तुम्हे बत्तीस कन्याए ब्याहनी पडेंगी।

शालिभद्र—'ब्याहनी पडेंगी' इस कथन मे तो जबर्दस्ती है। कहीं जबर्दस्ती भी लग्न होते हैं ? और कन्याओ के पिता भी कैसे हैं जो एक ही के साथ बत्तीस कन्याओ का विवाह करना चाहते हैं ? उन्हे दूसरा वर नहीं मिलता ?

गोभद्र – मैं सब तर्क-वितर्क कर चुका हू। यह विवाह मेरी, तुम्हारी या कन्याओ के पिता की इच्छा से नही हो रहे हैं, यह तो कन्याओ की ही इच्छा है। उनकी प्रतिज्ञा है कि हम विवाह करेंगी तो शालिभद्र के ही साथ करेंगी, अन्यथा कुवारी ही रहेगी। उनका कहना है कि हम भोग की लालसा से विवाह नही करना चाहती, वरन् कर्त्तव्य-पालन के आदर्श पर पहुचने के लिए करना चाहती हैं।

शालिभद्र—आखिर इसका आशय क्या है ? मेरे साथ ही विवाह क्यो ?

शालिभद्र की बात सुनकर धोमद्र ने कहा—तुमने बहुत अच्छा कहा । मैं भी यही ठीक समझता हूं । अब यह भी बताओ कि तुम पत्नी कैसी चाहते हो ?

शालिभद्र—यह प्रश्न भी बड़ा गम्भीर है । मैंने एक जगह पढ़ा था कि वही पत्नी योग्य कहलाती है जो स्वयं चाहे वीर न हो युद्ध में भले न जावे परन्तु वीर सन्तान उत्पन्न कर जो पति को देखकर सभी कुछ भूल जाए और पति जिसे देखकर सबको भूल जाए । दोनों एक दूसरे को देख कर प्रसन्न हों । पति जो कार्य करे, उसके लिए यह समझे कि मेरा ही आधा अंग कर रहा है और वह जो करे, उसके विषय में पति यह समझे कि मेरा आधा अंग कर रहा है । यही अच्छी गृहिणी है जो अपने सद्‌गुणों से पति को मुग्ध कर ले । वह शृंगार करे या न करे सादी रहे पर जो काम करे ऐसा करे कि पति को परमात्मा का स्मरण होता रहे ।

शास्त्र में स्त्री को 'धर्मसहायिका' कहा है । गहने कपड़े से सजी रहने वाली ही धर्मसहायिका नहीं होती है । सीता वन में जाकर भी राम की धर्मसहायिका बनी थी ।

शालिभद्र कहते हैं—'वही पत्नी श्रेष्ठ गिनी जाती है जो पति में अनुरक्त रहे और अपने कुटुम्बी जनों को अपने आदर्श व्यवहार से आकर्षित कर ले ।

आप लोग अपनी पत्नी को तो अपने में अनुरक्त रखना चाहते हैं लेकिन आप स्वयं इस नियम का पालन करने के लिये बाध्य नहीं होते ! मगर जो स्वयं इस नियम का पालन नहीं करेगा वह दूसरों से कैसे पालन करा सकेगा ?

गोभद्र ने कहा—ऐसे ही पुत्र, सुपुत्र और धर्म को पालने वाले होते हैं। अब एक बात और बतलाओ—एक ही पत्नी चाहते हो या अनेक ?

पिता के प्रश्न के उत्तर मे शालिभद्र कहते हैं—मैं अधिक ज्ञानी तो नही हू, लेकिन प्रकृति की रचना देखता हू तो मुझे दो का ही जोडा दिखाई देता है। पक्षी भी इस नियम का पालन करते हैं। इसलिए एक नर और एक नारी का जोडा ही अच्छा है। इसी से सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं। अधिक मे विघ्न की सम्भावना रहती है।

गोभद्र—होना तो ऐसा ही चाहिए, मगर तुम्हे बत्तीस कन्याए ब्याहनी पडेंगी।

शालिभद्र—'ब्याहनी पडेंगी' इस कथन मे तो जबर्दस्ती है। कही जबर्दस्ती भी लग्न होते हैं ? और कन्याओ के पिता भी कैसे हैं जो एक ही के साथ बत्तीस कन्याओ का विवाह करना चाहते हैं ? उन्हे दूसरा वर नही मिलता ?

गोभद्र – मैं सब तर्क-वितर्क कर चुका हू। यह विवाह मेरी, तुम्हारी या कन्याओ के पिता की इच्छा से नही हो रहे हैं, यह तो कन्याओ की ही इच्छा है। उनकी प्रतिज्ञा है कि हम विवाह करेंगी तो शालिभद्र के ही साथ करेंगी, अन्यथा कुवारी ही रहेगी। उनका कहना है कि हम भोग की लालसा से विवाह नही करना चाहती, वरन् कर्त्तव्य-पालन के आदर्श पर पहुचने के लिए करना चाहती हैं।

शालिभद्र—आखिर इसका आशय क्या है ? मेरे साथ ही विवाह क्यो ?

गोभद्र – यह तू नहीं समझता । जब तू गर्भ में था तब तेरी माता की कैसी भावनाएं हुआ करती थीं उन्हें देखने से जान पड़ता है कि तू बड़ा सुकृती है । यही कारण है कि वे तेरे लिए संसार छोड़कर आ रही हैं । अब उन्हें निराश करना उचित नहीं होगा । वे तेरे ऊपर बोझ डालने आती तो मैं स्वयं विरोध करता । पर वे तेरा बोझ बांटने आ रही हैं । यह बनाव भवितव्य के आकर्षण से ही बन रहा है । वे सब एक रूप होकर ही आएंगी । यद्यपि बहु विवाह में दोष है लेकिन इस बहु-विवाह में दोष नहीं जान पड़ता बल्कि यह न करने में ही अधर्म की सम्भावना हो सकती है ।

शालिभद्र मौन रहे । उनकी चेष्टा से गोभद्र समझ गये कि पुत्र ने मूक स्वीकृति दे दी है ।

शालिभद्र की सगाई मंजूर हो गई । गोभद्र सेठ के यहां और बत्तीसों कन्याओं के यहां मंगलाचरण होने लगा । विवाह का दिन सन्निकट आने पर बत्तीसों कन्याओं के विवाह के लिए एक ही मण्डप तैयार किया गया ।

नियत समय पर बरात रवाना हुई । शालिभद्र के जन्म के समय सारे नगर वासियों ने उत्सव मनाया था तो इसी से अनुमान किया जा सकता है कि बरात कैसी रही होगी ! मंगल–वाद्यों के साथ हर्ष और उत्साह के वातावरण में बरात विदा हुई और मण्डप में पहुंची । वहां बत्तीसों कन्याएं सुसज्जित वेष में उपस्थित थीं । विचार होने लगा कि विवाह का मुहूर्त एक ही है तो प्रत्येक कन्या के साथ अलग–अलग विवाह किस प्रकार हो सकता है ?

अगर सबका विवाह एक ही साथ किया जाय तो वर के हाथ मे किस कन्या का हाथ दिया जाय ? अन्त मे यह निर्णय हुआ कि जो कन्या उम्र मे सबसे बडी हो, उसका हाथ वर के हाथ मे दिया जाय और फिर उम्र के क्रम से एक दूसरी का हाथ पकड़ लें ।

समधी—समधी की मिलनी और सास के 'वघाने' का रहस्य भी लोगो को समझना चाहिए। सासारिक कार्यों में धर्मभावना रखने से कल्याण होता है ।

मान लीजिए, दो वेश्याए एक साथ कही जाने के लिए निकली । सामने आते हुए साधु उन्हे दिखाई दिये । साधु को देखकर एक वेश्या कहने लगी—'यह तो बडा अप-शकुन हो गया ! ये साधु अपने रोजगार को बर्बाद करने के लिए लोगो को भडकाया करते हैं और हमारे सुख को नष्ट करने का प्रयत्न करते रहते हैं। दूसरी ने कहा—'ऐसा मत कहो। देखो हम पापो मे पडी हुई हैं। इस समय महा-राज के दर्शन हो गए, यह बडे आनन्द की बात है। मरते समय कदाचित् इनका स्मरण हो जाए तो अपना कल्याण हो जाएगा ।'

इन दोनो वेश्याओ ने अपना धन्धा नही छोडा है । फिर भी दोनो मे कुछ अन्तर है या नही ?

'है ।'

इसी प्रकार सासारिक कार्यों मे भी भावना की भिन्नता के कारण बन्ध मे अन्तर होता है एक सांसारिक कार्य धर्म को सामने रखकर किया जाता है और दूसरे मे धर्म को

गोभद्र – यह तू नहीं समझता । जब तू गर्भ में था तब तेरी माता की कैसी भावनाएं हुआ करती थी उन्हें देखने से जान पड़ता है कि तू बड़ा सुकृती है । यही कारण है कि वे तेरे लिए ससार छोड़कर आ रही है । अब उन्हें निराश करना उचित नहीं होगा । वे तेरे ऊपर बोझ बनकर आती तो मैं स्वय विरोध करता । पर वे तेरा बोझ बांटने आ रही हैं । यह बनाव भवितव्य के आकर्षण से ही बन रहा है । वे सब एक रूप होकर ही आएगी । यद्यपि बहु विवाह में दोष है लेकिन इस बहु विवाह मे दोष नही जान पड़ता बल्कि यह न करने में ही अनर्थ की सम्भावना हो सकती है ।

शालिभद्र मौन रहे । उनकी चेष्टा से गोभद्र समझ गये कि पुत्र ने मूक स्वीकृति दे दी है ।

शालिभद्र की सगाई मंजूर हो गई । गोभद्र सेठ के यहां और बत्तीसों कन्याओं के यहां मंगलाचरण होने लगा । विवाह का दिन सन्निकट आने पर बत्तीसों कन्याओं के विवाह के लिए एक ही मण्डप तैयार किया गया ।

नियत समय पर बरात रवाना हुई । शालिभद्र के जन्म के समय सारे नगर वासियों ने उत्सव मनाया था तो इसी से अनुमान किया जा सकता है कि बरात कैसी रही होगी ! मंगल–वाद्यो के साथ हर्ष और उत्साह के वातावरण में बरात विदा हुई और मण्डप में पहुची । वहां बत्तीसों कन्याए सुसज्जित वेष मे उपस्थित थी । विचार होने लगा कि विवाह का मुहूर्त एक ही है तो प्रत्येक कन्या के साथ अलग–अलग विवाह किस प्रकार हो सकता है ?

तो कल दूसरे के साथ और चार-दिन बाद तीसरे चौथे की खोज होने लगी ।

मिलनी करने के बाद गोभद्र सेठ मण्डप में आये । शालिभद्र की बत्तीस सासुए आरती लेकर बधाने आई ।

इसमे भी वही तत्त्व है जो कन्या के घर जाकर उसे व्याहने मे है । जैन शास्त्र के अनुसार इस अवसर्पिणी काल में सब से पहला विवाह ऋषभदेव स्वामी का हुआ था । भगवान् ऋषभदेव का समय जुगलियो का समय था । सुमंगला भगवान् की बहिन होती थी और उसी के साथ उनका विवाह होना था । फिर भी भगवान् ऋषभदेव ने अपने घर पर ही सुमङ्गला के साथ विवाह नहीं किया था । इन्द्र सुमङ्गला को अपने घर ले गये और ऋषभदेवजी सुमङ्गला को व्याहने वहां गये । भगवान् ऋषभदेव ने ऐसा क्यो किया ? अगर पुरुष एकान्त बडा है तो कन्या को वर के घर आना चाहिए, वर कन्या के घर क्यों जाता है ?

पुरुष अपने को बडा और स्त्री को तुच्छ समझता है । मगर यह ऐसी प्रथा है जो पुरुषो के अहकार को मिटाती है । अगर स्त्री तुच्छ थी तो पुरुष उसके यहा क्यो गया था ?

कदाचित् यह सोचकर कि लडके वाला हमारे यहा आया है, हम उसके यहा नही गये, लडकी वाले को अभिमान आ जाय तो उस अभिमान का नाश करने के लिए सामने जाने की और बधाने की प्रथा है, जिससे अगर कोई कहे कि तुम्हें गरज थी तभी तो व्याहने के लिये हमारे यहा आये थे तो यह उत्तर दिया जा सके कि हम आये तो थे मगर तुम्हें गरज नही थी तो तुमने हमें बधाया क्यों ?

मता बताया जाता है। इस प्रकार सांसारिक कार्यों में भी पाप की जगह पुण्य का बंध किया जा सकता है। विवाह के अवसर पर होने वाले नेग-दस्तूरों में भी अनेक अच्छे आशय छिपे हैं। उन्हें समझ लेने और अमल में लाने से जीवन सुधरता है। उदाहरणार्थ मिलनी की ही प्रथा को लीजिए। वर और कन्या के पिता एक-दूसरे के गले में बांहें डालकर मिलते हैं। इस मिलन का आशय यह है कि आज से हम और आप एक हो गये। जो काम आप करेंगे उसमें हम और हमारे काम में आप शामिल हैं। आपकी इज्जत हमारी है और हमारी इज्जत आपकी है।

मिलनी आज भी की जाती है मगर अब उस प्रथा का प्राण चला गया है सिर्फ कलेवर ही बाकी रहा है। अर्थात् सिर्फ रूढ़ि रह गई है और उसमें की भावना चली गई है। यही कारण है कि पहिरावणी में थोड़ी-सी कसर होते ही हो-हल्ला मच जाता है। यह सच्ची मिलनी नहीं है। मिलकर और वचन देकर अगर बदल गये तो फिर मिलना और वचन देना ही कैसा !

> बांह बदल बाटी बदल बचन बदल बेशूर।
> नारी कर बनारी करें ताके मुंह में धूर ॥

मिलनी का आशय यह है कि आज से मेरा पुत्र आपका है और आपकी कन्या मेरी है। मैंने अपना पुत्र देकर आपकी कन्या ली है और अपनी कन्या देकर आपका पुत्र लिया है।

यह भारत की सभ्यता के लक्षण थे। भारत में लग्न यूरोप की तरह नहीं होता था कि आज एक से ब्याह किया

त्मा में कुछ विलक्षण जागृति हो जाती है। सगम को भक्ति के कारण अपनी भूख दिखाई न दी और न उसे यही विचार आया कि खीर कितनी कठिनाई से मिलती है। भक्ति के वश होकर ही उसने थाली की सारी खीर मुनि को बहरा दी और पुण्य के फलस्वरूप ही वह आज शालिभद्र बनकर बत्तीस स्त्रियो का पति बना है।

१० : सुभद्रा को सीख

भद्रा सेठानी की बत्तीसो बहुए उसके सामने खड़ी हैं। इस समय भद्रा के हृदय मे कितना हर्ष होगा, यह कौन कह सकता है? मगर उस समय एक विलक्षण बात हो गई।

शालिभद्र का जन्म होने के बाद गोभद्र सेठ के मन मे एक पुत्री की कामना रह गई थी। उन्होंने सोचा—मैं पुत्र–ऋण से मुक्त हो गया हू, अगर पुत्री–ऋण से भी मुक्त हो जाता तो अच्छा था।

आज तो पुत्र का जन्म होने पर हर्ष और पुत्री के जन्म पर विषाद अनुभव किया जाता है, पर यह लोगो की नासमझी है। पुत्री बिना जगत् स्थिर ही कैसे रह सकता है? अगर किसी के भी घर पुत्री का जन्म न हो तो पुत्र क्या आकाश से टपकने लगेंगे? सामाजिक व्यवस्था की विषमता के कारण पुत्र-पुत्रियो मे इतना कृत्रिम अन्तर पड गया है। पर यह समाज का दूषित पक्षपात है। जिस पेट से पुत्र का जन्म होता है, उसी पेट से पुत्री का। फिर पुत्री को हीन क्यो समझा जाता है? सासारिक स्वार्थ के वश मे होकर औरो की तो बात क्या, पुत्री को जन्म देने वाली

शालिभद्र की सासुएँ शालिभद्र को हर्ष सहित बधाकर मण्डप में ले आईं। मण्डप में बत्तीसों कन्याएं और लग्न-विधि को जानने वाला तथा समझने वाला पुरोहित मौजूद था। लग्नविधि के अनुसार पहले वर-कन्या की स्वीकृति ली जाती है और उन्हें लग्न के नियम समझाए जाते हैं। इसी के अनुसार शालिभद्र का लग्न हुआ और वर के हाथ में सबसे बड़ी कन्या का हाथ देकर आयुक्रम से एक कन्या का हाथ दूसरी कन्या के हाथ में देकर अग्नि की प्रदक्षिणा होने लगी अर्थात् फेरे पड़ने लगे।

फेरे गोल-गोल क्यों दिये जाते हैं? यह भी समझने की चीज है। 'राउण्ड टेबिल कॉन्फ्रेंस' का अर्थ है—गोल मेज सभा। गोल मेज रख कर सब लोग उसके चारों ओर बैठ जाते हैं तो छोटे-बड़े का प्रश्न नहीं रहता। इसी प्रकार गोल चक्कर लगाने में आगे-पीछे का भेद नहीं रहता। इसके सिवाय एक पैर रखने के स्थान पर दूसरे का पैर अर्थात् पैर पर पैर पड़ता जाता है। इसमें इस बात की सूचना है कि तेरे पांव में मेरा पांव और मेरे पांव में तेरा है। देखना अब इस चक्कर से बाहर पैर मत धरना। अगर पर बाहर रखा अर्थात् नियम को भंग कर दिया तो फिर लग्न करना वृथा है।

इस प्रकार शालिभद्र के साथ बत्तीसों कन्याओं के फेरे पड़े। सप्तपदी के मन्त्र पढ़े गये। आखिर विवाह का कार्य आनन्द और उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। कन्याओं के पिताओं ने यथाशक्ति भेंट (दहेज) प्रदान की और यथो चित् सत्कार के बाद बरात वापस लौट गई।

भक्ति का वास्तविक स्वरूप समझ लेने पर मनुष्य-

त्मा में कुछ विलक्षण जागृति हो जाती है। सगम को भक्ति के कारण अपनी भूख दिखाई न दी और न उसे यही विचार आया कि खीर कितनी कठिनाई से मिलती है। भक्ति के वश होकर ही उसने थाली की सारी खीर मुनि को वहरा दी और पुण्य के फलस्वरूप ही वह आज शालिभद्र बनकर बत्तीस स्त्रियो का पति बना है।

१० : सुभद्रा को सीख

भद्रा सेठानी की बत्तीसो बहुएं उसके सामने खड़ी हैं। इस समय भद्रा के हृदय मे कितना हर्ष होगा, यह कौन कह सकता है? मगर उस समय एक विलक्षण बात हो गई।

शालिभद्र का जन्म होने के बाद गोभद्र सेठ के मन मे एक पुत्री की कामना रह गई थी। उन्होंने सोचा—मैं पुत्र-ऋण से मुक्त हो गया हू, अगर पुत्री-ऋण से भी मुक्त हो जाता तो अच्छा था।

आज तो पुत्र का जन्म होने पर हर्ष और पुत्री के जन्म पर विषाद अनुभव किया जाता है, पर यह लोगो की नासमझी है। पुत्री बिना जगत् स्थिर ही कैसे रह सकता है? अगर किसी के भी घर पुत्री का जन्म न हो तो पुत्र क्या आकाश से टपकने लगेंगे? सामाजिक व्यवस्था की विषमता के कारण पुत्र-पुत्रियो मे इतना कृत्रिम अन्तर पड गया है। पर यह समाज का दूषित पक्षपात है। जिस पेट से पुत्र का जन्म होता है, उसी पेट से पुत्री का। फिर पुत्री को हीन क्यो समझा जाता है? सासारिक स्वार्थ के वश मे होकर औरो की तो बात क्या, पुत्री को जन्म देने वाली

माता भी पुत्री के जन्म से उदास हो जाती है। ऐसी बहिनों से पूछना चाहिए कि क्या तुम स्त्री नहीं हो ? स्त्री होकर भी स्त्री जाति के प्रति अभाव रखना कितनी जघन्य मनो-वृत्ति है। कई स्त्रियों के विषय में सुना गया है कि वे पुत्र होने पर खाने-पीने की जैसी चिन्ता रखती हैं वैसी पुत्री के होने पर नहीं रखतीं। जहां ऐसे तुच्छ विचार हों, वहां सन्तान के अच्छे होने की क्या आशा की जा सकती है ? और संसार का कल्याण किस प्रकार हो सकता है ?

गोभद्र सेठ के अंतःकरण में इस प्रकार का तुच्छ भेद-भाव नहीं था। इसी कारण उन्होंने पुत्री की कामना की। उनकी कामना निष्फल नहीं गई। उनके यहां एक पुत्री का भी जन्म हुआ जिसका नाम सुभद्रा रखा गया।

बच्चों की बाल-लीला में क्या रहस्य है, यह बहुत कम लोग जानते हैं। जानने की उत्कंठा ही बहुत कम लोगों को होती है। अधिकांश लोग अपनी संतान को गहने पहना कर उनके नाचने-कूदने से उसी प्रकार प्रसन्न होते हैं जैसे बकरी के बच्चे के गले में घुंघरू बांधकर और उसके कूदने पर घुंघरू की आवाज सुनकर मालिक प्रसन्न होता है। आज के अधिकांश माता-पिता को संतान-विषयक जिम्मे-दारी का ध्यान ही नहीं है। अपनी जिम्मेदारी समझकर संतान में उच्च भावना उत्पन्न करना माता-पिता का धर्म है संतान को विषयी बनाना माता पिता का धर्म नहीं है।

सुभद्रा बाल्यकाल व्यतीत करके सब कलाओं में कुशल हुई। सेठ गोभद्र का सुभद्रा से बहुत आशा है। आज सुभद्रा बत्तीस भौजाइयों की ननद बनी है। अपनी भौजाइयों को

देखकर सुभद्रा के अन्त करण मे एक विचित्र भावना उत्पन्न हुई। वह सोचने लगी—ये भौजाइया भी अपने माता-पिता की पुत्रिया हैं और उन्हे छोडकर यहा आई हैं। इसी प्रकार मुझे भी एक दिन अपने माता–पिता को छोड़कर चला जाना होगा। ये भौजाइया मेरी माता अर्थात् अपनी सास के प्रति जैसा विनय प्रदर्शित कर रही हैं, उसी प्रकार मुझे भी अपनी सास के सामने विनय दिखलाना होगा। इनके माता-पिता ने इन्हे क्या–क्या सिखलाया है, यह मुझे अभी नही मालूम है। वह तो इनके साथ रहने से मालूम हो जाएगा। भौजाइया मेरी माता के सामने इस प्रकार खडी हैं, जैसे परमात्मा के सामने खड़ी हो। अब देखें, माता क्या कहती है?

सुभद्रा और उसकी भौजाइया भद्रा के कथन की प्रतीक्षा कर रही हैं। इसी समय भद्रा ने इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—

'सौभाग्यशालिनी बहुओ! आज अत्यन्त हर्ष का दिन है कि तुमने यह घर-जो अब तक मेरा था और अब तुम्हारा भी हो गया है, पवित्र किया। जिस समय से सेठजी ने तुम्हारे विषय मे बात कही, उसी समय से मैं तुम सबको देखने के लिए उत्कठित थी। आज मेरी उत्कठा पूरी हुई। मैंने सुना था कि बत्तीस होकर भी तुम एक होकर रहोगी। तुम्हें धर्म पसन्द है, तुम्हारे माता-पिता तुम्हें अलग-अलग विवाहना चाहते थे, लेकिन तुम सब ने मिलकर एक शालिभद्र को ही पसन्द किया। उसी दिन से मेरी खुशी का पार नही था। मैंने तुम्हारा कथन सुना था कि तुम भोग के निमित्त विवाह नही कर रही हो, वरन् इस ससार से पार उतरने के लिए सहायक ढूढकर आखिरी तत्त्व पर पहुचना

चाहती हो। यह और भी बड़े हर्ष की बात है। वास्तव में तुम भोग की इच्छुक होती तुम्हारे भीतर स्वार्थ की प्रधानता होती तो तुम सब मेरे घर न आती। बहुओं तुम्हारी उच्च भावना के लिए मैं तुम्हें बधाई देती हूं। अब आज से यह तुम्हारा घर है यह कुटुम्ब तुम्हारा है और मैं भी तुम्हारी हूं। इस कुल की प्रतिष्ठा ही तुम्हारी प्रतिष्ठा होगी। अतएव सदा ऐसे सुकृत्य करना जो तुम्हारे पितृकुल और पतिकुल को उज्ज्वल करें। अन्त में मैं तुम सबको आशीर्वाद देती हूं कि तुम चिरसुखी चिरसौभाग्यवती सन्तानवती और समृद्ध होओ।

सास की स्नेह और सद्‌भावना से पूर्ण बातों को सुनकर बत्तीसों बहुएं उसके चरणों में गिर पड़ी और अपने भाग्य की सराहना करने लगीं कि पुण्य के योग से ही हमें ऐसी दयालु सास के यह मंगलमय वाक्य सुनने को मिले हैं।

अपनी माता की बात सुन कर और भौजाइयों की विनम्रता देखकर सुभद्रा दंग रह गई। वह मन ही मन कहने लगी—मेरी माता और भौजाइयां कितनी भावनाशील हैं। एक दिन मेरे जीवन में भी यही अवसर आयेगा। उस समय मुझे आज की बातें स्मरण रखनी होगी।

सुभद्रा के इन विचारों की छाया उसके चेहरे पर पड़े बिना न रही। प्रसन्न मुख को गम्भीर हुआ देख कर सेठानी भद्रा अपनी पुत्री की भावना को ताड़ गई। उसने पूछा—बेटी तू क्या सोच रही है? मैं अनुमान से तो तेरे विचारों को समझ गई लेकिन स्पष्ट रूप से सुनना चाहती हूं। अगर तू अपने विचार साफ तौर से कह दे तो मैं उनके

विपय मे कुछ समाधान करू ।

माता की वात सुनकर सुभद्रा का सर लज्जा से नीचा हो गया । आर्य वालाओ मे लज्जा का गुण होना स्वाभाविक है । पर लज्जा का अर्थ घू घट ही नही है । लज्जा घू घट मे नही, नेत्रो मे निवास करती है । घू घट करने वालियो मे ही अगर लज्जा होती तो वे ऐसे वारीक वस्त्र ही क्यो पहनती जिनमे से सारा शरीर दिखाई देता हो । महीन वस्त्र पहन कर घू घट निकालना तो एक प्रकार का छल है कि कपडे भी पहिने रहे और शरीर कुछ छिपा भी न रहे । इन महीन कपडो मे लज्जा कहा ?

सुभद्रा को लज्जित होकर झुकी देखकर भद्रा कहने लगी—बेटी, तेरी यह नम्रता भी सराहनीय है । नम्र रहने वाले को लाभ ही होता है । मैं तेरी वात समझ तो गई हू, पर, तू स्वय कह देती तो और भी अच्छा होता । मेरे ख्याल से तू यह सोच रही है कि एक दिन मुझे इन भौजाइयो की स्थिति का अनुकरण करना पडेगा । मुझे भी अपनी सास के सामने इसी प्रकार खडा होना पडेगा । कौन जाने, मुझे कैसा पति और कैसी सास मिलेगी ? परन्तु बेटी ! मेरे उदर से जन्म लेकर तुझे यह चिन्ता करना उचित नही है ।

माता की इस वात से सुभद्रा सहम उठी । उसके रोम-रोम खडे हो गये । वह विचारने लगी क्या मुझे ऐसी चिन्ता करनी चाहिये ? मैंने यह चिन्ता करके भूल की है ?

सुभद्रा माता की वात का मर्म न समझ सकी । उसने

माता से कहा मैं आपकी इस गंभीर बात को नहीं समझ सकी। कृपा करके इसे स्पष्ट कीजिए।

भद्रा ने कहा—शालिभद्र जब मेरे गर्भ में था उस समय की अपनी भावनाओं को मैं किस प्रकार तुझे समझाऊं? उस समय मेरे और तेरे पिताजी के भावों में तनिक भी स्वार्थ नहीं था। मैं परलोक के हित को सम्मुख रखकर पतिप्रेम में तल्लीन रही और इसी भावना में शालिभद्र का जन्म हुआ। शालिभद्र के जन्म के समय मेरा अन्तःकरण में जैसी भावनाएं थीं वैसी ही तेरे जन्म के समय भी थीं—कम नहीं थीं। मेरे पास धन है अतः मैं अपनी बेटी को कष्ट न होने दूंगी। धन देकर जामाता को अपने घर रख लूंगी इत्यादि गन्दी भावनाएं मुझ में कभी नहीं हुईं। मैंने सदा यही सोचा कि बेटी पराये घर की है और गरीब के घर जाकर भी वह मुझे लजावे नहीं बल्कि उसके कारण मेरी प्रशंसा ही हो। बेटी! इस भावना से मैंने तुझे जन्म दिया है।

कदाचित् तू अपनी भौजाइयों के गहने-कपड़े देखकर सोचती हो कि मुझे ऐसे गहने कपड़े मिलेंगे या नहीं या यह सोचती हो कि मुझे ऐसा सुख मिलेगा या नहीं तो यह भी तेरी भूल है। खाने को मिले या न मिले—भूखी रहना पड़े गहने-कपड़े मिलें या न मिलें इन बातों से सौभाग्य में न्यूनाधिकता नहीं होती। सौभाग्य की प्रशंसा इसकी बात में है कि दुःख में और सुख में समान भाव से धीरज का अवलम्बन लिया जाय। हीरा जब सोने में जड़ा जाता है तब भी चमक देता है और जब घनों से कूटा जाता है तब भी चमक देता है। इसी प्रकार सुख-दुःख में समान भाव

रखने वाला व्यक्ति ही वास्तव मे भाग्यशाली है। लडकी की वडाई इस वात मे है कि वह मा-वाप के घर से निकल कर सास-ससुर को अपना मा-वाप माने, उसी प्रकार उनकी सेवा करे और माने कि इनकी सेवा के लिये ही मेरा जन्म हुआ है। मौज-शौक-वाला जीवन जल्दी खत्म हो जाता है। ऐसा जीवन काच के खिलौने के समान है, जिसके टूटने मे देर नही लगती और सादा जीवन हीरे के समान है जो घनो की चोट सहने पर भी अखण्ड रहता है। काच की अपेक्षा हीरा-मोती अधिक मूल्यवान् इसीलिये समझे जाते हैं कि वे सकट के समय काम आते है। सिर्फ मौज के लिये उनकी कीमत नही है। मौज तो काच से भी हो सकती है परन्तु काच सकट के समय काम नही आता, इसी से उसका वह मूल्य नही है। मतलव यह है कि विपत्ति की वेला पर काम आना ही हीरापन है।

भद्रा की वात सुनकर सुभद्रा प्रसन्न हुई। वह सोचने लगी—अब मैं यह वात समझ गई। भौजाइयो के आभू-षणो मे जो हीरे जडे है, मैं उन्ही की तरह बनू गी। आज माता ने मेरी आखे खोल दी। मैं सकट की कसौटी पर खरी उतरने योग्य जीवन बनाऊगी और जब ऐसी बन जाऊगी तभी यह समझू गी कि मैंने अपनी माता को सुशोभित किया है।

सुभद्रा जव अवसर पाती तो अपनी माता से ऐसी बात छेड देती थी कि जिससे उसके भावी जीवन के काम की बातें, उसे जानने को मिल सके। भद्रा ने अपनी पुत्री को ऐसी शिक्षा दी कि वह वास्तव मे सच्ची सुभद्रा वन गई। एक वार भद्रा ने कहा—बेटी, विवाह भोग विलास

के लिए नहीं किया जाता। विवाह करना संग्राम में उतरना है। वैवाहिक जीवन में बड़े-बड़े विघ्न होते हैं। पति-पत्नी धर्म के पालन में कई बार दुःख बहुत बाधा डालते हैं। उन दुःखों को जीत कर अपने धर्म को बचाना ही विवाह का सच्चा उद्देश्य है। जो स्त्री गहने कपड़े के पीछे पड़ी रहती है वह गहनों-कपड़ों के लिए अपने स्त्रीत्व को बेच देती है। सोचो न सीता, कलावती और मदनरेखा आदि स्त्रियाँ कितनी सुकुमारी होंगी? तुम तो एक सेठ के घर जन्मी हो और सेठ के घर ब्याही जाओगी पर वे सतियाँ तो राजघराने में जन्मी थी और राजाओं के घर ही ब्याही थी। लेकिन वे सच्ची माँ की बेटियाँ स्त्रियों में रत्न थी और संसार का कल्याण करने वाली थी। वे पूरी शक्ति रूप थी इसीलिये उन्होंने स्त्री समाज के कलंक को धोया और स्त्रियों की गाड़ी पुरुषों से आगे बढ़ा दी। अगर वे मौज-मजे को ही अपने जीवन का सार समझती तो आज उनका कोई नाम ही नहीं लेता। क्या सीता के लिए दशरथ के विशाल महलों में जगह नहीं थी जो उन्हें राम के साथ वन जाना पड़ा? फिर रथ में बैठने वाली सीता को कंकर पत्थरों और कांटों में पैदल क्यों भटकना पड़ा? जो स्वयं दास-दासियों से घिरी रहती थी उसे स्वयंसेविका क्यों बनना पड़ा? बेटा! भक्त का और पतिव्रता का पथ एक ही है। अगर वे आराम चाहें तो अपने अभीष्ट ध्येय तक नहीं पहुंच सकते। सीता अगर महलों में ही रहती तो उसमें वह शक्ति न आती जो राम के साथ वन जाने के कारण आ सकी। रावण को राम ने नहीं वरन् सीता ने ही हरा कर स्त्री जाति का मुख उज्ज्वल किया है। फिर

भी वेटी, तू भौजाइयो को देखकर अपने भाग्य के विचार से घवराई यह आश्चर्य की वात है। जैसे सोने की कीमत आग मे तपाने से वढ जाती है, उसी प्रकार स्त्री की कीमत कष्ट सहकर धर्म को निभाने मे है, भोग-विलास मे पडी रहने मे नही ।

सुभद्रा की रग-रग मे भद्रा ने यह भावना भर दी। माता की सीख का प्रभाव पुत्री के जीवन पर कितना गहरा हुआ, यह आगे चलकर मालूम होगा । ❀

११ : सुभद्रा का विवाह

धन्ना अपने ढग का एक ही था। उसमे सुन्दरता थी, सज्जनता थी, प्रामाणिकता थी, मगर इन सव गुणो के अतिरिक्त उसमे सवसे वडा गुण था—निरीहता । उसने अपने भाइयो के लिये कई वार सासारिक सम्पत्ति को इस प्रकार ठुकरा दिया था, जैसे कोई वीच रास्ते मे पडे पत्थर के टुकडे को ठुकरा देता है। वह धन को धूल से अधिक नही समझता था । लेकिन धन-सम्पत्ति उसका पीछा नही छोडती थी। लक्ष्मी परछाई की भाति उसका पीछा करती थी और वह सदैव उसके विमुख ही रहता था। धन्ना फक्कडपन मे आनन्द मानता था मगर सौभाग्य उसके साथ ही रहने मे आनन्द मानता था। धन्ना लक्ष्मी को ज्यो-ज्यो तजना चाहता, लक्ष्मी त्यो-त्यो उसके गले पडती ।

एक वार धन्ना सेठ अपनी सम्पत्ति त्याग कर राजगृह आ पहुचा। राजगृह के वाहर कुसुम वाग मे वह ठहर गया । कुसुम वाग सूख गया था पर धन्ना के आते ही फिर हरा

के लिए नहीं किया जाता। विवाह करना संग्राम में उतरना है। वैवाहिक जीवन में बड़े-बड़े विघ्न होते हैं। पति-पत्नी धर्म के पालन में कई बार दुःख बहुत बाधा डालते हैं। उन दुःखों को जीत कर अपने धर्म को बचाना ही विवाह का सच्चा उद्देश्य है। जो स्त्री गहने कपड़े के पीछे पड़ी रहती है वह गहनों-कपड़ों के लिए अपने स्त्रीत्व को बेच देती है। सोचो म सीता कलावती और मदनरेखा आदि स्त्रियां कितनी सुकुमारी होंगी ? तुम तो एक सेठ के घर जन्मी हो और सेठ के घर ब्याही जाओगी पर वे सतियां तो राजघराने में जन्मी थी और राजाओं के घर ही ब्याही थीं। लेकिन वे सच्ची मा की बेटियां स्त्रियों म रत्न थी और संसार का कल्याण करने वाली थी। व पूरी शक्ति रूप थी इसीलिये उन्होंने स्त्री समाज के कलंक को धोया और स्त्रियों की गाड़ी पुरुषों से आगे बढ़ा दी। अगर वे मौज-मजे को ही अपने जीवन का सार समझती तो आज उनका कोई नाम ही नहीं लेता। क्या सीता के लिये दशरथ के विशाल महलों मे जगह नहीं थी जो उन्हें राम के साथ वन जाना पड़ा ? फिर रथ मे बैठने वाली सीता को कंकर पत्थरों और काटों म पैदल क्यों भटकना पड़ा ? जो स्वयं दास-दासियों मे घिरी रहती थी उसे स्वयंसेविका क्यों बनना पड़ा ? बेटा ! भक्त का और पतिव्रता का पथ एक ही है। अगर वे आराम चाहे तो अपने अभीष्ट ध्येय तक नहीं पहुंच सकते। सीता अगर महलों मे ही रहती तो उसम वह शक्ति न आती जो राम के साथ वन जाने के कारण आ सकी। रावण को राम ने नहीं वरन् सीता ने ही हरा कर स्त्री जाति का मुख उज्ज्वल किया है। फिर

भी वेटी, तू भौजाइयो को देखकर अपने भाग्य के विचार से घवराई यह आश्चर्य की वात है। जैसे सोने की कीमत आग मे तपाने से वढ जाती है, उसी प्रकार स्त्री की कीमत कष्ट सहकर धर्म को निभाने मे है, भोग-विलास मे पडी रहने मे नही।

सुभद्रा की रग-रग मे भद्रा ने यह भावना भर दी। माता की सीख का प्रभाव पुत्री के जीवन पर कितना गहरा हुआ, यह आगे चलकर मालूम होगा। ❀

११ : सुभद्रा का विवाह

धन्ना अपने ढग का एक ही था। उसमे सुन्दरता थी, सज्जनता थी, प्रामाणिकता थी, मगर इन सव गुणो के अतिरिक्त उसमे सवसे वडा गुण था—निरीहता। उसने अपने भाइयो के लिये कई वार सासारिक सम्पत्ति को इस प्रकार ठुकरा दिया था, जैसे कोई वीच रास्ते मे पडे पत्थर के टुकडे को ठुकरा देता है। वह धन को धूल से अधिक नही समझता था। लेकिन धन-सम्पत्ति उसका पीछा नही छोडती थी। लक्ष्मी परछाई की भाति उसका पीछा करती थी और वह सदैव उसके विमुख ही रहता था। धन्ना फक्कडपन मे आनन्द मानता था मगर सौभाग्य उसके साथ ही रहने मे आनन्द मानता था। धन्ना लक्ष्मी को ज्यो-ज्यो तजना चाहता, लक्ष्मी त्यो-त्यो उसके गले पडती।

एक वार धन्ना सेठ अपनी सम्पत्ति त्याग कर राजगृह आ पहुचा। राजगृह के वाहर कुसुम वाग मे वह ठहर गया। कुसुम वाग सूख गया था पर धन्ना के आते ही फिर हरा

हो गया। धन्ना का यह अपूर्व प्रभाव देख कर कुसुम सेठ ने अपनी कन्या कुसुमश्री का उसके साथ विवाह कर दिया। इसके कुछ दिनो बाद राजा श्रेणिक ने भी अपनी सोमश्री नामक कन्या ब्याह दी।

गोभद्र सेठ ने एक दिन विचार किया—मैं पुत्र की चिन्ता से मुक्त हो गया हू। अब सिर्फ सुभद्रा का विवाह करना शेष है। इसके बाद में गृहस्थावस्था में नहीं रहना चाहता। गृहस्थी के प्रपचों म सारा जीवन व्यतीत कर देना उचित नही है। अपने अन्तिम जीवन को निवृत्ति के साथ शुद्ध न बनाना अपने आपको चक्कर म डालना है।

टाल्सटॉय ने कहा कि आजकल के उपन्यासकार उपन्यासो को अध बीच में ही छोड देते है अर्थात् वे भोग का वर्णन तो कर देते है पर त्याग तक नही पहुचाते। परन्तु जैन कथाओ की यह विशेषता है कि उनम भोग के साथ त्याग का भी वर्णन किया गया है। जैन परम्परा के अनुसार इसी आदर्श मे जीवन की सम्पूर्णता है। केवल भोग जीवन की मलिनता है। जैन परम्परा जीवन को भोग की इस मलिनता म से निकाल कर त्याग और सयम की उज्ज्वलता मे प्रतिष्ठित करना ही उचित मानती है और इसी उद्देश्य से जनागमो मे कथा-भाग आया है।

सुभद्रा के विवाह से निवृत्त होने के पश्चात् ससार त्याग कर देने की प्रबल भावना गोभद्र सेठ के अन्त करण म बलवती हो उठी। उन्होंने सुभद्रा के विवाह के सम्बन्ध मे अपनी पत्नी से परामर्श किया। पत्नी ने कहा—सुभद्रा के लिए वर चाहे धनवान् हो या गरीब हो पर सुभद्रा के

जीवन को दिव्य वना देने वाला अवश्य हो । वह ऐसा हो जो सुभद्रा की कला को शिखर पर चढाकर उसे ससार मे प्रकाशित कर दे ।

गोभद्र कहने लगे—धनवान् वर मिल जाना कठिन नही है, पर जैसा तुम कहती हो वैसा वर खोज लेने का भार तो वडा वोझा है ।

आज पुरुष के साथ विवाह नही होता वल्कि धन के साथ किया जाता है । यही कारण है कि वर कितना ही मूर्ख, दुर्बल और रोगी क्यो न हो, उसका विवाह अवश्य हो जाता है और सुयोग्य निर्धन नवयुवक कुवारे फिरते है ।

गोभद्र सेठ ने कभी सोचा भी नही था कि सुभद्रा का विवाह धन्ना के साथ किया जायेगा । लेकिन एक धूर्त ने गोभद्र को ऐसा सकट मे डाल दिया कि जिस वात का विचार भी नही किया था, वही आगे आई ।

वात यो थी—एक धूर्त ने गोभद्र सेठ के विरुद्ध एक मामला चलाया । राजा श्रेणिक के दरवार मे जाकर उसने कहा—मेरी एक आख गोभद्र सेठ के पास गिरवी रखी है । मैं रुपया देने के लिए तैयार हू । मेरी आख मुझे दिलाई जाय ।

मामला अजीव था । धूर्त ने ऐसे प्रमाण दिये कि राजा श्रेणिक और उनके अत्यन्त वुद्धिशाली मन्त्री दग रह गये । मामला महाराजा श्रेणिक के पास विचाराधीन था । उस समय अभयकुमार उज्जयिनी गये हुए थे और उनके कार्य का भार धन्ना को सौंपा गया था । धन्ना ने यह मामला अपने हाथ मे लिया ।

हो गया। धन्ना का यह अपूर्व प्रभाव देख कर कुसुम सेठ ने अपनी कन्या कुसुमश्री का उसके साथ विवाह कर दिया। इसके कुछ दिनों बाद राजा श्रेणिक ने भी अपनी सोमश्री नामक कन्या ब्याह दी।

गोभद्र सेठ ने एक दिन विचार किया—मैं पुत्र की चिन्ता से मुक्त हो गया हूं। अब सिर्फ सुभद्रा का विवाह करना शेष है। इसके बाद मैं गृहस्थावस्था में नहीं रहना चाहता। गृहस्थी के प्रपंचों में सारा जीवन व्यतीत कर देना उचित नहीं है। अपने अन्तिम जीवन को निवृत्ति के साथ शुद्ध न बनाना अपने आपको चक्कर में डालना है।

टाल्सटॉय ने कहा कि आजकल के उपन्यासकार उपन्यासों को अध बीच में ही छोड़ देते हैं अर्थात् वे भोग का वर्णन तो कर देते हैं पर त्याग तक नहीं पहुंचाते। परन्तु जैन कथाओं की यह विशेषता है कि उनमें भोग के साथ त्याग का भी वर्णन किया गया है। जैन परम्परा के अनुसार इसी आदर्श में जीवन की सम्पूर्णता है। केवल भोग जीवन की मलिनता है। जैन परम्परा जीवन को भोग की इस मलिनता में से निकाल कर त्याग और संयम की उज्ज्वलता में प्रतिष्ठित करना ही उचित मानती है और इसी उद्देश्य से जैनागमों में कथा-भाग आया है।

सुभद्रा के विवाह से निवृत्त होने के पश्चात् संसार त्याग कर देने की प्रबल भावना गोभद्र सेठ के अन्तःकरण में बलवती हो उठी। उन्होंने सुभद्रा के विवाह के सम्बन्ध में अपनी पत्नी से परामर्श किया। पत्नी ने कहा—सुभद्रा के लिए वर चाहे धनवान् हो या गरीब हो पर सुभद्रा के

, ी प्रशसा करते हुए उन्होंने कृतज्ञता प्रकट की और कहा
ि आपने ही मेरी इज्जत बचाई है ।

धन्ना—आप तो सच्चे ही थे । इसमे मैंने किया
क्या है ? निरपराध होते हुए अगर आप मेरे शासनकाल
मे दु खी होते तो मुझे कलक लगता । इस प्रकार मैंने जो
कुछ किया है, अपने को कलक से बचाने के लिए और अपना
कर्त्तव्य पालन के लिये ही किया है ।

धन्ना के उत्तर से गोभद्र दग रह गए । उन्होने कहा—
एक बार आपने मेरी इज्जत रखी है, अब एक बार और
रख लीजिये ।

धन्ना—कहिए, क्या आज्ञा है ।

गोभद्र—मेरी और मेरी पत्नी की प्रतिज्ञा है कि अपनी
कन्या सुभद्रा का उसके अनुरूप वर के साथ विवाह करेंगे ।
आप मुझे उसके अनुरूप दिखाई देते हैं । आप उसे अपना
कर मेरा भार हल्का कीजिये ।

धन्ना—आपकी यह बात साधारण नही है । आपको
मेरा पूरा परिचय भी नही है । मेरे यहा पहले से ही दो
स्त्रिया मौजूद हैं । इन दो स्त्रियो के पिताओ ने भी मेरी
जाति-पाति नही पूछी और विवाह कर दिया । आप भी
इसी प्रकार करना चाहते हैं । मगर आप बुद्धिमान् है
इसलिये विचार कीजिए, सौतो पर कन्या को देना कहा
तक ठीक होगा ?

गोभद्र—आपका कथन यथार्थ है । सौत पर कोई
अपनी कन्या नही देना चाहता, मगर हमने इस सम्बन्ध मे

मामले का फैसला किस प्रकार हो सकता है यह समझने में धन्ना को देर नहीं लगी। उसने सारी रूपरेखा साच ली। इसके पश्चात् धन्ना गोभद्र सेठ के घर मुनीम बन कर बैठ गया और सेठजी से धूर्त वादी को बुलवाने के लिए कहा। वादी के आने पर धन्ना ने उससे कहा—मैं पुराना मुनीम हूं मेरे ही जमाने में तुम्हारी आंख बंधक रखी गई थी। सेठजी सीधे आदमी है। इसलिए इन्हें मालूम नहीं है। तुम रुपये लाओ मैं तुम्हारी आंख तुम्हें लौटा दूंगा।

धूर्त प्रसन्न हुआ। उसने कहा—ये लो अपने रुपये और मेरी आंख मुझे दो।

धन्ना बोला—यह बड़े सेठ का घर है। यहां हजारों आंखें बंधक होंगी। ऐसी हालत में बिना पहिचान के नहीं जाना जा सकता है कि तुम्हारी आंख कौन-सी है? अतः तुम अपनी दूसरी आंख निकाल कर मुझे दे दो। मैं उससे मिलान करके और तोल करके तुम्हारी आंख ला दूंगा।

धन्ना की बात सुनकर धूर्त के देवता कूच कर गये। उसने भागने का विचार किया पर धन्ना ने उसे पकड़वा लिया। वह राजा के सामने पेश किया गया और अन्त में उसने अपने किए का फल पाया।

इस मामले से गोभद्र सेठ धन्ना की बुद्धिमत्ता से बहुत प्रभावित हुए। कृतज्ञता की भावना भी उनके हृदय में उत्पन्न हुई। उन्होंने सोचा जिसने हमारी इज्जत बचाई है उसे ही सुभद्रा देना ठीक है। वह बुद्धिमान् भी है, प्रतिष्ठित भी है और राजपरिवार से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध भी है। इस प्रकार विचार कर सेठ धन्ना से मिलने गये। धन्ना

की प्रशसा करते हुए उन्होने कृतज्ञता प्रकट की और कहा कि आपने ही मेरी इज्जत बचाई है ।

धन्ना—आप तो सच्चे ही थे । इसमे मैंने किया क्या है ? निरपराध होते हुए अगर आप मेरे शासनकाल मे दु खी होते तो मुझे कलक लगता । इस प्रकार मैंने जो कुछ किया है, अपने को कलक से बचाने के लिए और अपना कर्त्तव्य पालन के लिये ही किया है ।

धन्ना के उत्तर से गोभद्र दग रह गए । उन्होने कहा—एक बार आपने मेरी इज्जत रखी है, अब एक बार और रख लीजिये ।

धन्ना—कहिए, क्या आज्ञा है ।

गोभद्र—मेरी और मेरी पत्नी की प्रतिज्ञा है कि अपनी कन्या सुभद्रा का उसके अनुरूप वर के साथ विवाह करेंगे । आप मुझे उसके अनुरूप दिखाई देते है । आप उसे अपना कर मेरा भार हल्का कीजिये ।

धन्ना—आपकी यह बात साधारण नही है । आपको मेरा पूरा परिचय भी नही है । मेरे यहा पहले से ही दो स्त्रिया मौजूद है । इन दो स्त्रियो के पिताओ ने भी मेरी जाति-पाति नही पूछी और विवाह कर दिया । आप भी इसी प्रकार करना चाहते हैं । मगर आप बुद्धिमान् है इसलिये विचार कीजिए, सौतो पर कन्या को देना कहा तक ठीक होगा ?

गोभद्र—आपका कथन यथार्थ है । सौत पर कोई अपनी कन्या नही देना चाहता, मगर हमने इस सम्बन्ध मे

विचार कर लिया है। बहु-भारी दोष कहां होता है इस बात की अभी मीमांसा करने की आवश्यकता नहीं है। यह उचित ही है कि पुरुष का सब प्रथम कर्तव्य यह होना चाहिए कि वह ब्रह्मचर्य का पालन करे और यदि ब्रह्मचर्य का पालन न कर सके तो एक पत्नीव्रत का पालन करे। यही सोचकर आपको यह विवाह करने में असमञ्जस होता होगा। मगर मेरी कन्या विलास नहीं चाहती। उसे आपका संग पाकर अपने जीवन को पूर्ण बनाना है। विश्वास रखिये वह आपके सौतों से झगड़ा नहीं करेगी। आपका जैसा स्वरूप है जैसा कुल का संस्कार है वैसा ही सुभद्रा का भी है। वह आपके स्वभाव और संस्कार को देदीप्यमान कर देगी। अतएव आप मेरी प्रार्थना को अस्वीकार न कीजिये।

गोभद्र सेठ के आग्रह के सामने धन्ना को झुकना पड़ा। आखिर सुभद्रा के साथ धन्ना सेठ का विवाह हो गया। इस विवाह में सुभद्रा की भावना क्या थी और आजकल की स्त्रियों की भावना क्या होती है यह देखने की आवश्यकता है। वैवाहिक जीवन को स्वीकार करने के पश्चात् दम्पती नये तत्त्व की खोज करते है। तदनुसार सुभद्रा भी नवीन तत्त्व की खोज में लगी है। उस समय उसकी माता ने कहा— सुभद्रा! वीर पुरुष के साथ तेरा विवाह हुआ है। मैं आशा करती हूं कि तू कायर न बनेगी। तुम्हारे पिताजी से मैंने तुम्हारे पति का हाल सुना है। उनका जीवन दिव्य है। उन्होंने भातृकलह से बचने के लिये कई बार भरे भण्डार छोड़ दिये हैं, फिर भी लक्ष्मी ने उसका साथ नहीं छोड़ा। संकट के समय तुम्हारे पति कभी घबराये नहीं हैं। अगर तू अपना जीवन पतिमय बनाना चाहती है तो धर्मपरायण

होता और सुख-दु ख को समान भाव से ग्रहण करना ।

अपनी माता की शिक्षा का सुभद्रा पर क्या प्रभाव पडा, यह बात सुभद्रा की स्वतन्त्र कथा मे मालूम होगी । उसने अपने सास-ससुर की सेवा के लिए मिट्टी की टोकरिया ढोईं । सास ने सकट के समय पितृगृह जाने को कहा, लेकिन सुभद्रा पीहर न गई । यह शिक्षा सिर्फ सुभद्रा के लिए नही है, सभी के लिए है । जो कपडा पहनता है, उसी की वह लज्जा निवारण करता है, इसी प्रकार जो शिक्षा को धारण करेगा, उसी की इज्जत रहेगी और प्रतिष्ठा बढेगी । सुभद्रा ने इस शिक्षा के प्रभाव मे कभी साहस नही छोडा । वह अपने मायके के सुखो को कभी नही रोई और न उसने अपने सास-ससुर को कभी दु खी होने दिया । जेठानियो के हल्के शब्द सुनकर भी उसकी भौंहे कभी ऊची नही चढी । उसने प्राण दे देना स्वीकार किया पर शील देना स्वीकार नही किया । यह सब माता की शिक्षा का ही प्रभाव था । माता ने जो दहेज दिया था, उस सब की अपेक्षा इस शिक्षा का मूल्य बहुत अधिक है । इस शिक्षा पर अमल करने के कारण ही अन्त मे वह पटरानी बनी और राजा श्रेणिक की पुत्री उससे छोटी रही । उसने अन्त तक, यहा तक कि पति के दीक्षा लेने पर भी पति का साथ दिया । इस प्रकार की शिक्षा लेकर सुभद्रा अपने पति के घर चली गई । ❀

१२ : गोभद्र की दीक्षा

शालिभद्र और सुभद्रा के विवाह से निवृत्त होकर सेठ गोभद्र ने सतोष की सास ली । उन्होने विचार किया—मैं अब सासारिक कर्त्तव्य कर चुका हू और अनेक वर्ष गृहस्थ

अवस्था में व्यतीत कर चुका हूं। हाय-हाय करते हुए मृत्यु का आलिंगन करना उचित नहीं है। मैंने संसार की सब क्रियाएं की हैं तो उच्च से उच्च संयम की क्रियाएं भी मुझे करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त—

महाजनो येन गतः स पन्था।

इस सिद्धान्त के अनुसार मैं संसार में रहता हुआ ही अगर मरा तो मेरी देखा-देखी और लोग भी यही कहेंगे कि बेटा-बेटी और सम्पत्ति हुई तो बस बोआपन मौज करने के लिए है। अगर मैं गृहस्थी का सारा भार पुत्र के सिर पर थोप दूं और बैठा-बैठा खाया करूं तो यह अकर्मण्यता होगी। मैं ऐसी अकर्मण्यता पसन्द नहीं करता।

आजकल के कुछ लोग खाना तो पुण्य समझते हैं पर कमाना पाप मानते हैं। स्त्रियां रोटी तो खाती हैं पर चक्की चलाने में पाप समझ कर दूसरे से पिसवाती हैं। जिस वस्तु को खाना पाप नहीं माना उसके बनाने में पाप मान लेना और दूसरे से बनवाना आलस्यमय जीवन की निशानी है। खावें तो आप और बनावें किसी दूसरे से कि हमें पाप नहीं होगा बनाने वाले को पाप होगा फिर बनाने वाला चाहे हमारे लिए ही क्यों न बनाता हो! यह बड़ी विचित्र बात है। जो मनुष्य पाप को समझता है वह पाप से बचने का विवेक रख सकता है मगर अनभिज्ञ नौकर किस-किस प्रकार की अयतना करता है और अयतना के फलस्वरूप कितना पाप हो जाता है यह किसे मालूम है? सेठ से कमाया नहीं जाता इसलिए उसने मुनीम रख लिया। वह मुनीम मालिक के लिए कितना अन्याय करके धन कमाता है यह

किसको मालूम है ?

टॉलसटाय के पास छह लाख रूबेल (रूस के सिक्के) थे। फिर उसने अहा—आयु के चौथे चरण मे मुझे सन्सास लेना ही उचित है। भारतवर्ष धन्य है, जहा अन्तिम जीवन मे दीक्षा लेने की नीति ही बनी हुई है।

गोभद्र को शालिभद्र सरीखा पुत्र और भद्रशीला भद्रा जैसी पत्नी पाकर मौज करनी चाहिए थी या दीक्षा लेनी चाहिए थी ? आज के सेठ पुत्र-पौत्र और धन के होने पर जब शरीर काम नही देता तो ताश खेलने मे ही समय विताते हैं। भोगो के कारण उनका शरीर निकम्मा हो जाता है। और चौथेपन मे तो प्राय बिल्कुल गिर जाता है। पहले के लोग ऐसे नही थे। उनका जीवन सयम और नीतियुक्त होता था और इस कारण चतुर्थपन मे भी उनका शरीर सशक्त बना रहता था। गाधीजी कहते हैं कि जिसका जीवन पूर्ण नीतिमय होगा। वह काम करते-करते ही मरेगा। अर्थात् मृत्यु के समय भी उसके शरीर मे कार्य करने की शक्ति बनी रहेगी। ऐसा नीतिमय जीवन होने पर ही मनुष्य दीक्षा ले सकता है।

भारत मे उस समय जीवन की कला अपनी चरम सीमा पर पहुची थी। तब गोभद्र जैसे सम्पत्तिशाली भी अपनी सम्पत्ति को त्याग कर भिक्षुक और अनगार का जीवन व्यतीत करते थे एव शुद्ध आत्मकल्याण के ध्येय मे लग जाते थे। तभी तो ससार त्याग का महत्व समझ पाता था।

गोभद्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बुलाकर कहा— अब इस घर—ससार का भार तुम्हारे सुपुर्द है।

शालिभद्र यह सुनकर आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने कहा—पिताजी! इसका क्या मतलब है? मैं आपका आशय नहीं समझ सका।

गोभद्र—अब मैं इस घर-संसार की देख-रेख से निवृत्त हो रहा हूं और सिर्फ अपनी आत्मा की देख रेख करूंगा। अर्थात् लोकोत्तर कल्याण साधन के लिये संसार छोड़कर मुनि बनूंगा।

पिता के वियोग से पुत्र को उदासी होना स्वाभाविक है। लेकिन क्या पुत्र का यह कर्त्तव्य कि वह आजीवन पिता को बैल की तरह गृहस्थी की गाड़ी में जुता रखे? भद्रा और शालिभद्र समझदार थे। फिर भी इष्ट-वियोग के समय वज्र-सी कठिन छाती भी फटने लगती है। अतएव दुःखी हृदय से शालिभद्र ने कहा—पिताजी क्या यह समय हमें छोड़कर जाने का है।

गोभद्र में आज कुछ अनोखी शान्ति और गम्भीरता है। उन्होंने कहा—एक दृष्टान्त द्वारा उत्तर देना चाहता हूं।

थोड़ी देर के लिये कल्पना करो मैं बहुत कंगाल आदमी था। इतना दरिद्र था कि मेरे घर खाने को अन्न और पहनने को वस्त्र कपड़ा नहीं था। कंगाली के कारण स्त्री भी आदर नहीं करती थी। किसी पुरुष ने आकर मेरे सिर पर हाथ रखा और आशीर्वाद दिया। उसके आशीर्वाद से मैं सम्पत्तिशाली हो गया। अब वह सिद्ध पुरुष मुझसे कहता है—तुम्हारे पास सब कुछ हो गया है अब आ जाओ! अब उस देने वाले को जो उसने दिया है उसमें फंस कर भूल जाना क्या उचित है? अगर ऐसा उचित हुआ तो सम्पत्ति और

सतति नरक का कारण ठहरेगी। क्या मुझे नरक में पडना चाहिए ? जव मैंने देने वाले की शक्ति देख ली तो उसमे मिल जाना उचित है या यहा पडे रहना उचित है ?

इसी राजगृह नगर मे मेरा जन्म हुआ था। मेरे साथ वहुत से जन्मे थे। उनमे कई मर गये, कई मारे गये और कई दुर्भागी निकले। मतलव यह है कि मेरे सरीखा कोई न रहा। तू मुझे पिता मानता है तो मेरा भी कोई पिता होगा या नही ? मैं उसी पिता को देख रहा हू। उसने आपत्ति मे मेरी रक्षा की, मुझे सासारिक दृष्टि से पूर्ण सुखी वनाया और आज मेरा नाम सारे राजगृह मे आदर के साथ लिया जाता है। मुझे भद्रा जैसी पत्नी मिली। उसके साथ मेरा पवित्र जीवन बीता। यह कभी विलास मे तन्मय नही हुई। भद्रा ने अपनी धर्मभावना से मुझे जो सुख दिया, वह स्वर्ग मे भी नही मिल सकता। लेकिन यह सब उसी अदृष्ट महापुरुष का प्रताप है। तुम्हारी माता को कभी चिन्ता नही हुई। सिर्फ एक वार पुत्र के लिये चिन्ता हुई थी। वह भी अपने सुख के लिए नही, किन्तु पति-ऋण से मुक्त होने के लिए। उसने अपने सुख की अपेक्षा धर्म को ही अधिक समझा है। उसी धर्म भावना से उसकी चिन्ता मिट गई और तुम्हारा जन्म हुआ। तुम्ही यह सोचो कि उस धर्म-रूपी सिद्ध पुरुष को कितनी शक्ति है। उसी की कृपा से तुम्हारा और तुम्हारी वहिन का जन्म हुआ। साराश यह है कि जो-जो इच्छा की, धर्म के प्रताप से पूरी हो गई। मैं एक ही पुत्र-वधू चाहता था पर बत्तीस मिली। अगर धर्म सहायक न होता तो गोभद्र को कौन पूछता ? जिसकी कृपा से यह सब मुझे प्राप्त हुआ है, उसी को भेंटने के लिए मैं

जाता हू तो क्या तुम्हारा रोकना उचित है? जिसकी कृपा से सब प्रकार का गार्हस्थिक-सुख भोगा है उसे भूल जाना कृतघ्नता होगी।

उस सुख माथे सिल पड़ नही आवे हरि याद।
बलिहारी उस दुःख की हरि से मिलावे हाथ॥

गोभद्र कहते है—शालिभद्र! तुम्हारा बाप गड्ढे मे नही गिर रहा है। सयम लेना दुःख नही है किन्तु ईश्वर से मुलाकात करना है।

पिता के हृदय मे त्याग भावना आने से पुत्र और पुत्र के हृदय मे त्याग भाव आने पर पिता घबरा जाता है। स्वार्थ-भावना ही इसका मूल है।

गोभद्र के समझाने से शालिभद्र भद्रा सुभद्रा और पुत्र-वधुओ के नेत्रो में दिव्य ज्योति प्रकट हो गई। अभी तक उनका रोक रखने का जो विचार था वह शिथिल हो गया। सभी ने नजर नीची कर ली मानो स्वीकृति तो नही दे सकते पर अस्वीकृति भी नही दे सकते।

गोभद्र कहने लगे—ईश्वर की जो कृपा अभी नही दिखी थी वह भी आज दिखाई दे गई। कुटुम्ब एक जाल है। कुछ भी हो ऐसे अवसर पर कुटुम्बी-जन आसू बहाते ही है। लेकिन परमात्मा की अपरिमित अनुकम्पा से मुझे ऐसा कुटुम्ब मिला है कि सहज ही सब अनुकूल बन गये।

तत्पश्चात् गोभद्र ने अपनी पत्नी से कहा—भद्रा यह पुत्र तुम्हारी गोद है। इसे अपना पुत्र न मानना ईश्वर का पुत्र समझना।

पुत्रवधुओ से उन्होने कहा—बहुओ ! तुम भी ध्यान रखना । अपने इस पति को भोग का कीडा मत समझना । यह तुम्हारा नही, परमपिता परमात्मा का है । तुम इसके पैरो की बेडी मत बनना । इसके मगलमय महामार्ग मे सहायक बनना, पोपक बनना ।

और सुभद्रा ! शालिभद्र तेरा वीर है । तू इसे सच्चा वीर बनाना । तुम्हारा पिता मर नही रहा है । धर्म तुम्हारा सच्चा पिता है । सावधान होकर उसकी सेवा करना ।

इस प्रकार सब कुटुम्बी जनो को समझा-बुझा कर और नौकर-चाकरो को यथायोग्य सान्त्वना देकर गोभद्र सेठ सयम ग्रहण करने के लिये तैयार हुए । गोभद्र सेठ सभी नगर-निवासियो को प्रिय थे । अत नगरवासी और कुटुम्बी जन उनके साथ रवाना हुए ।

गोभद्र सेठ ने अपनी सासारिक यात्रा का अन्तिम सदेश इस प्रकार सुनाया—आप सोचते होगे कि मैं आज आप सब को त्याग रहा हू, लेकिन मेरी अन्तरात्मा ने ससार के निस्सार स्वरूप को समझ लिया । विषय भोग मुझ विष से प्रतीत होते हैं । ऐसी स्थिति मे मुझे एक-एक क्षण भारी पड रहा है । सोचता हू—कब ससार का भार त्याग कर लघुता धारण करू ?

आप लोग घबराए नही । मैं आपको ऐसा तत्त्व बत-लाता हू, जिसे जान लेने पर आपको कोई कष्ट ही नही हो सकता । मैं आपको अब तक जो सुख न दे सका, जो काम आप अब तक न कर सके, उस काम को पार करने और उस सुख को प्राप्त करने का बल मैं आज आपको दे रहा

हू। संसार में जो दुःख है अधिकांश पारस्परिक द्वेष कलह आदि से ही है। इन्हीं दोषों का उपशमन करने के लिये राजा की स्थापना की जाती है। प्रजा आपस में लड़ती है, तभी तो न्यायाधीश की और दूसरे अधिकारियों की आवश्यकता पड़ती है। प्रजा न लड़े तो हाकिम की आवश्यकता ही न पड़े। मैं आपके आपसी विवाद और कलह को दबाने का यथाशक्ति प्रयत्न करता था और इसी कारण आपको प्रिय था। आप लोग मुझे लक्ष्मी का स्वामी समझते थे लेकिन आज तक मैं आप सबके ऊपर ऐसी सत्ता नहीं चला सकता था जैसी आज लक्ष्मी और परिवार को त्याग कर अकिंचन बनकर चला सकूंगा। कुटुम्ब और सम्पत्ति आदि को मैं त्याग रहा हूं समर्पण कर रहा हूं। कैसे और किसे समर्पण कर रहा हूं—

आज म्हारा संभव जिनजी का
हित चित से गुण गास्यां—राज।
दीन दयाल दीन बन्धव के
खानाजाद कहास्यां राज। आज।
तन धन प्राण समर्पी प्रभु ने,
इन पर वेग रिझास्यां राज। आज०।

मैं प्रभु के चरणों में तन धन और प्राण समर्पण कर रहा हूं।

नागरिको! मेरे इस निष्क्रमण और समर्पण का याद करके समझना कि हमारा रक्षक और पिता कौन है? मैं तुम सबको छोड़ता नहीं हूं बल्कि हिफाजत में रख जाता

हू। मैं जिसकी शरण मे जा रहा हू, वह सब शरणो का शरण है। उसी की शरण सच्ची शरण है। तुम-भी उसी की शरण मे रहना।'

'भद्रा! तुम भी उसी त्याग की शरण मे रहना, जिस त्याग की शरण मे तुम्हारा पति जा रहा है। जिस स्त्रियो के पति बुरे आचरण करके मरे हैं, वे स्त्रिया रोवे तो भले रोवें, तुम्हे रोने की आवश्यकता नही है। मैं उस शरण को प्राप्त कर रहा हू जिसका मिलना साधारण-वात नही-है।'

'पुत्रवधुओ! मैं अव तुम्हे छोटे श्वसुर की शरण मे न रख कर वडे 'श्वसुर' की शरण मे रखता हू और उससे तुम्हारी पहिचान कराता हू। उस 'श्वसुर' का ध्यान करने से तुम्हारा मङ्गल होगा।

'राजगृही के सन्नागरिको! अव तक मैं यथासम्भव आपको परामर्श देता रहा हू। अव इस त्याग वृत्ति को अपना कर भी आपका पथ-प्रदर्शन कर रहा हू। आप अधिक न कर सकते हो तो कम से कम इतना अवश्य करना कि धन-सम्पत्ति के लिए अन्याय मत करना। गरीवो पर दयाभाव रखना। जड सम्पत्ति ही सब कुछ नही है। मनुष्य की असली सम्पत्ति तो सयम, सहानुभूति, अनुकम्पा, परोपकार आदि दिव्य गुण हैं। इनकी अपेक्षा मत करना। इनका त्याग करके जड सम्पत्ति को ग्रहण मत करना। आप इतना करेंगे तो आप सम्पत्ति के स्वामी वनेंगे। अगर आपको मैं प्रिय रहा हू तो आप उसे मत भूलना, जो मुझे प्रिय है—मैं जिसकी शरण-ग्रहण कर रहा हू।

गोभद्र की हृदय से निकली हुई भावभरी वाणी सुन—

कर सब लोग हर्षित हुए। सब उनकी प्रशंसा करने लगे और अपनी दुर्बलताओं के लिए अपने को धिक्कारने लगे। एक ने कहा—गोभद्र सेठ तो अपनी अखूट सम्पत्ति और सुशील परिवार को भी त्याग कर अनगार बन रहे हैं और एक हम हैं जिनसे रात्रि भोजन का भी त्याग नहीं हो सका है! हम लोग अभी तक झूठ-कपट आदि मोटे-मोटे दुर्गुणों को भी नहीं छोड़ सकते।

सब लोगों के साथ-साथ सेठ गोभद्र भगवान् महावीर के पास में पहुंचे। भगवान् के निकट पहुंचकर सेठजी भगवान् के चरणों में गिर पड़े। यह देखकर साथ के लोग गद्गद् हो गए। भावों की तीव्रता के कारण सबको रोमाञ्च हो आया। गोभद्र सेठ का आत्म-समर्पण देख कर सब विह्वल हो गये। सबने एक स्वर से कहा—गोभद्र सेठ धन्य हैं! इनका जीवन सफल है सुफल है।

शालिभद्र भद्रा सुभद्रा धन्ना सेठ और पुत्र-वधुओं की दृष्टि गोभद्र सेठ पर ही जमी हुई थी। देखते-देखते सेठजी ने सब वस्त्र भूषण उतार दिये और अपने ही हाथों अपने सिर के बालों का लोच करने लगे। इसके बाद उन्होंने मुनि का परम पवित्र वेश धारण करके भगवान् महावीर की शरण में आकर भगवान् से प्रार्थना की—'प्रभो! मुझे तारो। आपके सिवाय कोई दूसरा तारनहार दिखाई नहीं देता।

इस प्रकार कहकर गोभद्र ने सयम अंगीकार किया। बहुत समय तक व्रत और संयम का निरतिचार पालन करके अन्त में संलेखना करके शरीर का त्याग किया।

शरीर त्याग कर वह देव हुए ।

प्रश्न उठ सकता है कि गोभद्र सेठ के सयम ले लेने से ससार का क्या भला हुआ ? ससार मे रहकर उन्होने बहुत भलाई के काम किये और आगे भी कर सकते थे मगर मुनि-जीवन स्वीकार कर लेने से जगत् का क्या उपकार हुआ ? इस प्रश्न का समाधान यह है कि मुनि वनकर उन्होंने कितनो का कल्याण किया, इसका कोई हिसाब ही नही लगाया जा सकता । सयम पालने वाले की वाणी से और मन से जो आनन्द होता है, वह आनन्द चक्रवर्ती भी नही दे सकता । सयमी पुरुष तप और त्याग का असली आदर्श उपस्थित करता है और जनता पर उसका जितना प्रभाव पडता है, उतना प्रभाव हजार उपदेशको का, जिनके जीवन मे सयम नही है, जो कोरा वाणी-विलास करते हैं, नही पड सकता । सयमी साधु मानव-जीवन की उच्चतम अवस्था का वास्तविक चित्र उपस्थित करते हैं, तप-त्याग की महिमा प्रदर्शित करते है और उन पवित्र भावनाओ का प्रतिनिधित्व करते है जिनके सहारे जगत् टिका हुआ है और जिनके अभाव मे मनुष्य, मनुष्य मिट कर राक्षस वन जाता है। साधुओ द्वारा होने वाला ससार का यह लाभ कुछ कम नही है—वहुत अधिक है । विवेकशील पुरुष ही इस लाभ के मूल्य को भली-भाति आक सकते है ।

गोभद्र सेठ का व्यापार-व्यवहार मामूली नही था । वह राजगृह के प्रतिष्ठित पुरुष थे । अपने पारिवारिक उत्तर-दायित्व के साथ ही साथ उन पर अन्य कुटुम्वो का भी उत्तर-दायित्व था । दीक्षा लेने के वाद वह सारा उत्तर-दायित्व शालिभद्र के कन्धो पर आ गया । विशाल उत्तर-

स्वामित्व आ जाने पर शालिभद्र ने क्या-क्या विचार किये होंगे और किस प्रकार जीवन का परिवर्तन किया होगा यह बात अपने ही अनुभव से समझी जा सकती है। फिर भी विनीत शालिभद्र ने कभी अपने पिता को मन से भी उलाहना नहीं दिया। उन्होंने कभी नहीं कहा कि मेरी यह अवस्था तो भोग के योग्य थी किन्तु इस अवस्था में ही मुझ पर इतना भारी बोझ डाल दिया गया।

इस प्रकार झु झलाहट भरे विचार आने से व्यवहारिक जीवन में भी त्रुटि होती है और आध्यात्मिक जीवन में भी। लक्ष्मी के लिए पुत्र से झगड़ने वाले और पुत्र पर दबाव डालने वाले पिता संसार में बहुत मिल सकते हैं परन्तु ऐसे पिता विरले ही मिलेंगे जो अपना सर्वस्व त्याग कर पिता होने के साथ ही गुरु भी बन जाते हैं। शालिभद्र सुसंस्कारी और समझदार थे। उन्होंने यही सोचा— मेरे पिता धन्य हैं। उन्होंने मेरे सामने बड़े त्याग का आदर्श उपस्थित किया है। उनके साथ मेरा पिता-पुत्र का अमिट सम्बन्ध तो है ही गुरु शिष्य का नवीन सम्बन्ध भी हो गया है। वह सदैव मेरे हृदय में वास करते रहें। हृदय में उनका वास होने से पाप आने के सब द्वार बन्द हो जाएंगे।

पापों का आना कैसे बन्द हो जायगा?

पाँच-सात मिल सहेलियां रे हिल मिल पानी जाए।
हांसी दे खडखड हसे वा को चित्त गगरिया माए ॥
मना ऐसे बिन चरणों चित्त लाय
अरिहन्त के गुण गाय ॥ मन ॥

पाँच-सात पनिहारिन साथ मिलकर पानी भरने जाती

है । वे आपस मे एक-दूसरी के हाथ पर हाथ भी मारती है, हसीठट्ठा भी करती हैं, मगर उसको ध्यान यही रहता है कि कही हमारा घडा नीचे न गिर जाए । इसी प्रकार शालिभद्र अपने घर मे रहकर खाता है, पीता है, व्यापार-व्यवसाय भी करता है, फिर भी उसका ध्यान अपने पिता मे ही रहता है । जैसे चित्तवृत्ति अरिहत भगवान् मे लग जाने पर दूसरी ओर नही जाती, उसी प्रकार शालिभद्र को अपने पिता का ध्यान होने से दूसरा ध्यान नही होता । और जब दूसरा ध्यान ही नही होता तो पाप कैसे हो ?

इस प्रकार खाते-पीते, उठते-बैठते या कोई भी क्रिया करते समय शालिभद्र के हृदय मे गुरु के रूप मे पिता का निवास था । वह यही कहा करते थे कि पिताजी ! आप धन्य है । आपने मेरे सामने जो आदर्श उपस्थित कर दिया है, उसके कारण ससार की यह वस्तुए मुझे कभी दबा नही सकती ।

गुरु के रूप मे पिता का ध्यान रखने से क्या लाभ होता है, यह शालिभद्र के चरित से सीखा जा सकता है ।

१२ : ऋद्धि की वृद्धि

गोभद्र मुनि तपस्या के फलस्वरूप देवलोक मे उत्पन्न हुए । उनके वहा जन्मते ही सामानिक देवो ने 'खमा' 'खमा' की ध्वनि करके उनका अभिवादन किया । उन्होने पूछा—आपने क्या दान दिया था, क्या तप किया था, क्या सुकार्य किया था, जिमसे कि आप हमारे यहा पधारे है ?

देवलोक पहुच कर शालिभद्र के पिता ने अवधिज्ञान से जाना कि मेरे पुत्र के हृदय में मैं ही बस रहा हू। ऐसे विनीत पुत्र को किसी दूसरे का आश्रित नही बनने देना चाहिए। ससार मे बहुतो के गले घोंटने से किसी एक का भला होता है। मेरा पुत्र भी कही इस प्रकार के पाप में प्रवृत्त न हो जाय! जो पुत्र त्याग की इतनी सराहना करता है उसे मै ऐसी शक्ति क्यों न दू कि वह ससार का सुख भी भोग सके और ससार से उसी प्रकार निकल भी जाय जिस प्रकार मक्खी मिश्री का स्वाद लेकर उड़ जाती है।

मित्रो! देवो को प्रसन्न करने का तरीका यही है। धम मे मन लीन रहने से ही देव आपके वश में हो सकते है। मन पाप मे डूबा रहे और देवों की सहायता की इच्छा की जाय तो देव भास उठा कर भी नही देखेंगे।

कवि कहता है—देखो सुपात्रदान का मजूस कैसा होता है। सगम मे कैसी धीरता और गभीरता थी कि उस स्थिति में भी उसने खीर का दान दिया और फिर किसी से यहाँ तक की अपनी माता से भी उसका जिक्र नही किया। इस प्रकार की धीरता और गम्भीरता से देव प्रसन्न होते है। इसी का फल है कि शालिभद्र होकर भी उसने ऋद्धि और सम्पदा को धिक्कार समझ रखा है। वास्तव म चाह करने से धन नही आता। हृदय म त्याग की भावना हो तो लक्ष्मी दौडकर चली आती है।

शालिभद्र पर आज देव की कृपा है। यह देव कृपा तो सुपात्रदान का फल ही है। उसका फल तो समस्त अक्षय अव्याबाध सुखो से सम्पन्न मुक्ति है। देवरूप गोभद्र परोक्ष

रूप से शालिभद्र के सुखो की पूर्ति करने लगा मगर शालिभद्र को इस बात का पता नही था।

शालिभद्र के यहा खेतीवाडी की जो सम्पदा थी, वह देवी कृपा से अनेक गुणा फल देने लगी। शालिभद्र की लक्ष्मी भी पहिले कई गुणा वढ गई।

अव देखना चाहिए कि लक्ष्मी किसे कहते है? साधारण जन समझते है कि लक्ष्मी कलदार को अर्थात् सिक्के को कहते है। लेकिन वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो सिक्का लक्ष्मी नही, लक्ष्मी का नाशक है। लक्ष्मी वह है जिसे पाकर मनुष्य स्वतन्त्र वनता है। लक्ष्मी की प्राप्ति होने पर मनुष्य कर्त्तव्य का स्वामी वनता है और उसके भीतर ऐसी क्रिया जागती है कि लक्ष्मीपति कहलाता है और सम्मान का भागी होता है। मगर सिक्के का प्रचलन आपको स्वतन्त्र बनाने के लिए नही वरन् परतन्त्र वनाने के लिए है। वहुत प्राचीन काल मे वस्तुओ का परस्पर मे विनिमय होता था। लोग अपने पास की एक चीज देकर दूसरे के पास की दूसरी चीज ले लेते थे। उस समय सिक्का नही था। सिक्के के अभाव मे लोगो मे सग्रह-शीलता नही थी। उतना ही सग्रह किया जाता था, जितने की आवश्यकता होती थी। सग्रह होता था सिर्फ अनाज का। कदाचित् आवश्यकता से अधिक कोई रखता भी तो एक साल दो साल, या वहुत हुआ तो चार साल। लेकिन आजकल लोग अनाज का कितना सग्रह करते है और सिक्के का कितना? अनाज का सग्रह नही के वरावर और सिक्के के सग्रह का कोई हिसाव ही नही। सिक्कासग्रह की लोलुपता आज वेहद वढ गई है और इसी लोलुपता की बदौलत समाज मे विषमता का विष व्याप गया है।

इस विषमता के विष के कारण आज सर्वत्र अशांति की ज्वालाएं धधक रही है और वर्गयुद्ध छिड़ा हुआ है। इस प्रकार जिस सिक्के ने मनुष्य-समाज को मुसीबत में डाल दिया है उसे लक्ष्मी का पद कैसे दिया जा सकता है?

लोग सिक्के के आदी हो गये हैं और इसी कारण कहते हैं कि सिक्के के बिना विनिमय म सुभीता नहीं होता है और व्यापार नहीं चल सकता है। मगर देखना चाहिए कि सिक्के के निर्माणकर्ता ने विनियोग की दृष्टि से सिक्का चलाया है या आपको गुलाम बनाए रखने के लिए? अगर विनियोग की दृष्टि से सिक्का चलाया गया है तो उसकी सत्ता किसके हाथ मे होनी चाहिये? व्यापार आप करें विनिमय आपको करना पड़े और सिक्के की सत्ता सरकार के हाथ में हो!

शास्त्र मे लक्ष्मी की व्याख्या इस प्रकार की गई है—

खित्तं वत्थु हिरण्णं च पसवो दास पोरुसं।
चत्तारि कामखंधाणि तत्थ से उववज्जई॥

—श्री उत्तराध्ययनम् अ ३ गा १७।

आज आप जिसे लक्ष्मी मान रहे है उस लक्ष्मी की कृपा से कितने परतन्त्र हुए हैं इस बात का जरा विचार कीजिए।

भगवान् महावीर कहते है कि पहली लक्ष्मी खेत है। कहा जा सकता है कि खेत लक्ष्मी कैसे है? लक्ष्मी तो रुपया है। मगर लोगो ने जिस दिन से यह उलटा हिसाब लगाना सीखा है उसी दिन से वे निराधार बन गये है। रूपयों को उड़ते देर नहीं लगती पर खेत कहीं नहीं जा सकते।

कदाचित् चोर चोरी कर ले या दुष्काल पड जाय तो एक या दो फसल की हानि हो सकती है, मगर खेत तो आखिर फल देगा ही ।

आज यह माना जाता है कि खेत का मालिक राजा है और शास्त्र कहता है कि खेत का मालिक कृषक है । मैं पूछना चाहता हू कि खेत मे खेती करता कौन है—राजा या किसान ? किसान बेचारा खेत जोतता और बोता है और उत्तम परिश्रम करता है, चोटी से एडी तक पसीना बहाता है, सर्दी-गर्मी और धूप-वर्षा की परवाह न करके रात-दिन खेती के काम मे जुटा रहता है । उसका तो खेत नही और जो मसनद के सहारे गद्दो पर लेटा रहता है, गुलछर्रे उडाता है, कभी खेत की सूरत भी नही देखता, उसका खेत माना जाता है ! यह कैसा विचित्र न्याय है ! शास्त्र कहता है कि खेत उसी का है जो खेती करता है। कर्म-भूमि उसी की है, जो स्वय उसमे कार्य करता है ।

दूसरी लक्ष्मी वत्थु (वस्तु) है । वस्तु का अर्थ है मकान आदि । तीसरी लक्ष्मी हिरण्य अर्थात् सोना है । (यह ध्यान मे रखना चाहिये कि सोने को लक्ष्मी माना है मगर सिक्के को नही) पशु और दास भी सम्पत्ति मे माने गये हैं ।

शालिभद्र के घर यही लक्ष्मी थी जो देव-कृपा से लाख गुणा हो गई । जो पुरुप जिस कार्य मे नियुक्त थे, उनमे ऐसी शक्ति आ गई कि उनके प्रयत्न मे मन की जगह मनो भर चीज पैदा होने लगी ।

यहा यह प्रश्न उठ सकता है कि शालिभद्र की ऋद्धि शालिभद्र के ही पास रही या कुटुम्बियो के काम मे भी

आई ? यह पहले ही कहा जा चुका है कि शालिभद्र की ऋद्धि ऐसी नहीं थी कि भण्डार में भर दी जाती । यह तो ऐसी ऋद्धि थी कि निपजे तो सब खावें । अन्न निपजे तो मनुष्य खावें और घास निपजे तो पशु खावें ।

जब सेठ गोभद्र ने दीक्षा ली तो लोग कहते थे कि शालिभद्र अभी बालक है और भोला है । इसलिए यह तो खाता-पीता और मौज ही करता रहेगा । पत्नियाँ भी इसके यहां एक नहीं बत्तीस है । एक पत्नी वाले को ही अपने आपकी खबर नहीं रहती तो इससे हमारा प्रतिपालन क्या होगा ? लेकिन शालिभद्र की बढ़ी हुई ऋद्धि देखकर लोग चकित हो गये । कहने लगे—'शालिभद्र भाग्यशाली है । इसे देव सहायता करते है । शालिभद्र से कदाचित् कोई चर्चा करता तो वह उत्तर देता—यह सब पिताजी का प्रताप है । धर्म मे कमी न हो तो किसी बात की कमी नहीं हो सकती ।

इस प्रकार सुपात्रदान के प्रभाव से शालिभद्र की ऋद्धि बढ़ गई और देव उसका सहायक हुआ । देव की वैक्रिय लब्धि ऐसी होती है कि वह अपनी एक भुजा से कई जम्बूद्वीप बना सकता है । उसकी एक भौह पर बत्तीस नाटक हो ऐसी उसकी शक्ति होती है । जितने समय मे हम एक कदम चलते है उतने समय मे देव सिर काटकर उस सिर का चूरा करके और फिर उसके पुद्गलों को बिखेर कर पीछे एकत्र करके फिर सिर बना सकता है । आजकल के डॉक्टर भी सिर उतार कर ऑपरेशन करके सिर जोड़ सकते है स्त्री के गर्भ को बकरी के पेट में रख सकते हैं तो देव की शक्ति तो लोकोत्तर शक्ति है । उसके आश्चर्य जनक कामो का क्या कहना है ?

शालिभद्र को उसके पिता रूपी देव की जो शक्ति प्राप्त हो रही है, वह कवि के कथनानुसार सुपात्र दान की ही शक्ति है। इस शक्ति को आप भी प्राप्त कर सकते हैं, मगर चाहिए विना कामना के सुपात्रदान देने की आन्तरिक भावना। सव देव आपके ही भीतर मौजूद है, लेकिन पर्दा खुले तव पता चले।

देव ने शालिभद्र की ऋद्धि का विस्तार लाख गुना कर दिया। लाखगुना कहना तो आलकारिक भाषा है। इसका आशय यह है कि उसकी ऋद्धि पहले से वहुत वढ गई थी। तात्पर्य यह है कि शालिभद्र की खेती मे पहले जो दोष थे, उन्हे देव ने दूर कर दिया। लोग तो रुपया-पैसा वढाना चाहते है। उन्हे मालूम नही कि रुपया-पैसे का बढना गुलामी का वढना है और अन्न का वढना स्वतन्त्रता का वढना है।

शालिभद्र के खेतो मे वहुत उन्नति हो गई और खेतो मे उन्नति होने से उसकी शारीरिक शक्ति भी वढ गई। उसकी यह ऋद्धि पुण्यानुवन्धी पुण्य की ऋद्धि है। इसलिये उसके द्वारा शालिभद्र स्वय आनन्द मे रहता है और दूसरो को भी आनन्द पहुचाता है। अपने जिस खाने मे दूसरो को कष्ट पहुचे उसे पापानुवन्धी पुण्य समझना चाहिये। दूसरे का भोजन छीनकर आप खा जाना वस्तुत पुण्य नही कहा जा सकता। दूसरो को रूखी रोटिया भी न मिले और आप वादामपाक उडावे, यह कैसे उचित हो सकता है? मित्रो! भगवान् महावीर का आपके ऊपर जो ऋण चढा है, उसे चुकाइये और पुण्य की पूजी से पाप मत कमाइए।

इतनी ऋद्धि वढ जाने पर भी कभी शालिभद्र ने

अभिमान नहीं किया बल्कि वह यही सोचता रहा कि मैंने पूर्वभव में सुपात्रदान नहीं दिया और सुकृत नहीं किया है। लेकिन लोग जरा-सी गुलामी की सम्पदा पाकर अपने को पुण्यात्मा समझ बैठते हैं और अभिमान के पुतले बन जाते हैं। शालिभद्र के विचारों को देखते हुए आपको कितना पाश्चात्ताप करना चाहिये ?

शालिभद्र के घर अन्न रस बढ़ने से कितनों ही को लाभ पहुंचा। यह सब सुख शांति एक व्यक्ति के सुपात्रदान का फल था। एक कामधेनु के दूध का उपयोग सिर्फ एक ही मनुष्य नहीं करता। उससे न जाने कितने लाभ उठाते हैं।

लोग गहनों और कपड़ों के लिये दूसरों को सताते हैं। पर शालिभद्र की बात न्यारी थी। शालिभद्र और उसकी बत्तीस पत्नियां जैसे ही महल चुनती कि उसी समय ३३ पेटियां गहनों और कपड़ों से भरी हुई उसके यहां उतर आती और प्रत्येक में नौ-नौ आभूषण निकलते थे। एक पेटी पर शालिभद्र का और बत्तीस पेटियों पर उसकी बत्तीस पत्नियों के नाम अंकित रहते थे। यह सब दैव कृपा थी जो शालि भद्र को सुपात्रदान के फलस्वरूप प्राप्त हुई थी।

सचमुच वे पुरुष धन्य हैं जिन्होंने पूरी तरह पुण्य का आचरण किया है और सुपात्रदान को दान दिया। ऐसे पुरुष अपने प्रत्येक कार्य से दूसरों को सुख पहुंचाते हैं। अपने लाभ के लिए स्वार्थ के लिए दूसरों को कष्ट पहुंचाने वाले पुण्यात्मा नहीं कहलाते। शालिभद्र को पुण्यशाली इस कारण कहा गया कि उसकी बदौलत दूसरों को सुख-शांति प्राप्त होती थी।

कवि का कथन है कि आप इन पेटियो का विचार करके ललचाओ मत, वरन् पात्रविशेष का ज्ञान करो और उसका पोषण करो। दान के लिए पाच प्रकार के पात्र बतलाए गए हैं—उत्तम, मध्यम, जघन्य, पात्रापात्र और कुपात्र। इनका अर्थ समझ कर उत्तम पात्र का पोषण करो। उत्तम पात्र मुनि हैं, मध्यम पात्र श्रावक हैं, जघन्य पात्र सम्यग्दृष्टि हैं, पात्रापात्र मे लगडे-लूले आदि आते है और कुपात्र वे हैं जो खाकर मस्ती करते है। अगर उत्तमपात्र का सयोग मिल जाय तो कहना ही क्या है! कल्पना कीजिये आपके यहा जवाहरात की दूकान है। उसमे छोटे हीरे भी है और बडे हीरे भी है। अगर छोटे हीरे का ग्राहक आ जाए तो आप उसे देगे या नही? अवश्य देगे। लेकिन भावना तो यही रहेगी कि बडे हीरे का ग्राहक आ जाता तो अच्छा रहता। इसी कारण उत्तम पात्र मुनि आवें तब तो अच्छा ही है, मगर खाने-पीने मे दुखी और दीन की भावना होना भी कम बात नही है।

> किं शर्वरीषु शशिनाऽह्नि विवस्वता वा।
> युष्मन्मुकेन्दुदलितेषु तमसु नाथ ॥
> निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके।
> कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रै ॥

अर्थात् हे नाथ! रात को प्रकाश देने वाले चन्द्रमा की और दिन मे प्रकाश करने वाले सूर्य की आवश्यकता नही। मुझे तो केवल तुम्हारे मुख कमल की ही जरूरत है। चन्द्र और सूर्य अधकार का नाश करते हैं और तुम्हारा मुख-कमल भी अधकार का नाश करता है फिर तुम्हें छोड कर

मैं उन्हें क्यों चाहू ? खेती निपजाना हो तो पानी की मांग की जाय पर जब खेती निपज गई हो तो पानी मांगने से क्या लाभ है ? इसी प्रकार तुम मिल गये तो दूसरे को क्यों पुकारू ?

भक्ति का यह उदाहरण इसलिए दिया गया है कि सुपात्र मिल जान पर दूसरे को पुकारने की आवश्यकता नहीं रहती। जिसे भगवान् मिल जाय वह सूय चन्द्र को अधिक क्यो माने ? इसलिए भक्तजन कहते है—त्रिलोकी नाथ के सिवाय मुझे और कुछ नही चाहिये । त्रिलोकीनाथ मिल जाए तो दूसरों को दु खी करके मुझ जो सम्पत्ति लेनी पड़ती है सो मेरा यह पाप कट जाय । सूर्य और चन्द्रमा का उदय होने से किसी को सुख भी होता है और किसी को दु ख भी होता है । लेकिन भगवान् के मुखकमल से किसी को दु ख नही होता । इसी प्रकार सुपात्र का पोषण करने से किसी को दु ख नही होता सुख ही सुख होता है ।

शालिभद्र के यहां प्रतिदिन तत्तीस पेटिया उतरती है । इस तत्तीस पेटियो में जितने आभूषण होते है, उतने आभू-षण अगर कोई कमाने जावे तो उसे न मालूम कितनों की गर्दन मरोड़नी पड़े । और यह भी निश्चित नही कि यहां की गर्दन मरोड़ने पर भी उतना मिल ही जायगा । लेकिन शालिभद्र को बिना पाप किये ही यह सब मिल रहा है । यह सुपात्रदान का ही फल समझना चाहिये ।

यहा बहिनें प्रश्न कर सकती है कि जब शालिभद्र की स्त्रिया गहने पहनती थी तो हमारे गहनों की टीका-टिप्पणी क्यो की जाती है ? उन्हे सोचना चाहिए कि शालिभद्र की

लिये दुर्लभ है। इस चरित पर विचार करके जो भव्य पुरुष सुपात्रदान देगा और अपनी वस्तुओ को परहित मे लगाएगा, उसका कल्याण होगा।

१४ : शालिभद्र का विवेक

रजोगुण और तमोगुण की शक्ति का फल चर्मचक्षुओ से दिखाई देता है। अतएव आत्मा यह समझ लेता है कि इससे आगे कोई शक्ति नही है। लेकिन उससे भी परे की, तीसरी सतोगुण की शक्ति की ओर लक्ष्य दोगे तो मालूम होगा कि वह कितनी जबर्दस्त और अद्भुत है। ससार के सब झगडे रजोगुण और तमोगुण तक ही पहुच पाते हैं— सतोगुण तक नही पहुचते। किन्तु जो उस अव्यक्त शक्ति के दर्शन कर पाता है, उस शक्ति तक जिसकी पहुच हो जाती है, उसे आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता है।

ससार शालिभद्र को रजोगुण और सम्पत्ति वैभव मे डूबा देखता है। कथा सुनते समय भी यही जान पडता है कि यह सब भोगलीला है। शालिभद्र और उसकी पत्नियो के शृगार का वर्णन सुनकर सासारिक और शृगार—प्रिय लोग प्रसन्न होकर अभिलाषा करते है कि हमे भी वैसे ही शृगार की सामग्री मिले। लेकिन क्या यह भावना धर्मयुक्त है ? इस प्रकार की भावना उत्पन्न करने वाली कथा धर्म-कथा न होकर तृष्णा बढाने वाली कथा क्यो न ठहरी ? लेकिन शालिभद्र अगर भोगो मे डूबा हुआ ही अपना जीवन व्यतीत कर देता तो उसे बडी जोखिम उठानी पडती। जैन साहित्य की कथाए भोग का तिरस्कार करके उस वैराग्य

सो वास्तव में मणियां नहीं वरन् सुपात्र-दान चमक रहा है। उन मणियों को देखकर लोग कहते हैं कि यह तो हमारा गरीबों का गया बादल पर भी नहीं मिल सकती लेकिन शालिभद्र को सुपात्रदान के प्रभाव से अनायास ही मिल रही है !

शालिभद्र प्रतिदिन सबेरे उसे उसी प्रकार उतार देता है जैसे फूलमाला उतार दी जाती है। जैसे उतारी हुई फूलमाला फिर नहीं पहनी जाती उसी प्रकार शालिभद्र उस अनमोल सेहरे को प्रतिदिन दूसरों को दे देता है। जब कोई नहीं लेता तो वह भंडार में डाल दिया जाता है। इस प्रकार शालिभद्र का भंडार ऐसा भरा हुआ है जैसा चक्रवर्ती का भी नहीं होगा।

यह सब सुपात्रदान की महिमा है। लक्ष्मी उसी का आश्रय लेती है जो स्वामी बनकर उसका पालन करे। दास बनने वालों पर लक्ष्मी पूरी तरह नहीं रीझती। और लक्ष्मी का स्वामी बनने का अर्थ यही है कि उससे दूसरों की सेवा की जाय। सुपात्रदान देना परोपकार में उसका व्यय करना आसक्ति न रखना यह लक्ष्मीपति के लक्षण हैं।

शालिभद्र का चरित्र उच्च आदर्श उपस्थित करता है। बड़ी कठिनाई से रो-धो कर उसने जो खीर पाई थी उसे निस्पृह भाव से हृदय में तनिक भी संकोच न रखते हुए मुनि को अर्पित कर दी। एक बालक के लिये ऐसा करना कठिन है। लेकिन संगम असाधारण बालक था। यही कारण है कि वह शालिभद्र के रूप में अवतरित हुआ और वहां उसने वह सब पाया जो बड़े से बड़े सम्राट के

उदय से मनुष्य अद्भुत ऋद्धि पा करके भी उसमे फस नही जाता किन्तु जैसे मक्खी मिश्री का रस लेकर उड जाती है, उसी प्रकार ऋद्धि को भोग कर मनुष्य उससे विरक्त हो जाता है और तब उसका त्याग करके आगे के उच्चतर चरित्र का निर्माण करता है । अतएव इसे मोह का रग देना ठीक नही है जैसे गन्दगी के कीडे को गन्दगी ही प्रिय लगती हे उसी प्रकार ससार ही प्रिय लगना मोह है ।

शालिभद्र को गहने और कपडे देव–कृपा से मिले, फिर भी यह कहता है कि जो चीज जिसकी कृपा से मिली है, उसे समर्पित किये विना ही उस चीज का भोग करना चोरी है और भोग करने वाला चोर है। मुझे देव-कृपा से जो ऋद्धि प्राप्त हुई है उससे चिपट कर बैठे रहना चोर–वृत्ति है ।

शालिभद्र ने अपनी स्त्रियो से कहा—जिन गहनो-कपडो के लिये जग मच जाता है, लोग नीति-अनीति का विचार ताक मे रख देते है, गरीवो को सताते है और पाप मे प्रवृत्ति करते नही हिचकते उन गहनो और कपडो को लेकर उनका वदला न चुकाना अपने लिए नरक वनाना है ।

आज ससार मे यह पद्धति चल रही है कि हमारे वस्त्रो और आभूपणो के लिए चाहे किसी का कुछ भी हो पर हमे वस्त्र-आभूपण मिलने चाहिये । अगर किसी की खाल से भी शृगार वनता हो तो ऐसे लोग भी निकलेगे जो यह कहते सकोच नही करेंगे कि यह खाल तो हमारे लिये ही है । यह जीव इस खाल मे जनमा ही क्यो ? आज जो विलायती कपडे के जूते पहने जाते हैं, उनके सवध

तक पहुंची है जिसकी ससार को बड़ी जरूरत है ।

शालिभद्र के पिता न दीक्षा लेकर और अन्त में समाधि तक पहुंच कर शालिभद्र को असाधारण रूप से सम्पन्न बना दिया । उनमें वीतराग समाधि तो नही आई लेकिन सराग समाधि मे स्वर्ग तक गये और वहां प्रतिदिन तैतीस पेटियां शालिभद्र के घर भेजने लगे ।

यहां प्रश्न उठ सकता है कि क्या यह मोह नही है? मेरे विचार से यह मोह नही वरन् मोह जीतने का मार्ग है। मेरा बेटा सुकुमार है मेरा बेटा भोला है यह सोचते-सोचते गोभद्र सेठ अगर आजीवन गृहस्थी में पड़े रहते तो वह ससार को यह दिखा जाते कि ससार में बेटा-पोता ही सब कुछ है । मगर गोभद्र ने विशाल ऋद्धि त्यागकर ससार को त्याग का महत्व दिखाया और सयम प्राप्त किया । इससे वह महान् वसिष्ठ हो गये । उस वस से प्रेम की जागृति होने पर शालिभद्र को गहने कपड़े दिये । अगर यह मोह माना जाय तो इसका अर्थ यह हुआ कि दूसरी योनि म जाते ही मोह न होता । देवयोनियो मे जाने से मोह हुआ । *अतएव देवयोनि अच्छी नहीं है ।*

वस्तुत प्रेम और मोह म उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव जितना अन्तर है । अगर गोभद्र को शालिभद्र पर मोह होता तो वे शालिभद्र को गृहस्थी मे ही रखने का प्रयास करते । मगर उन्होने शालिभद्र को त्याग करा कर ऊंची स्थिति पर पहुंचा दिया । यह पुण्यानुबन्धी पुण्य का परि-णाम है । यह पुण्य मनुष्य को दिन-दिन अभ्युदय की ओर में जाता और ऐसी ऋद्धि दिलाता है कि उससे ऋद्धिमान् भी सुखी होता है और दूसरे भी सुखी होते हैं । इस पुण्य के

हो तो सहायता देनी चाहिये अथवा छिपकर बैठे रहना चाहिए ?

वदला देने का अभिप्राय यह नही कि आप पानी से सहायता लेते है, इस कारण पानी को ही उसका वदला चुकायें। जैसे एक सेठ की एक दुकान से लिया हुआ रुपया उसकी दूसरी दुकान पर जमा करा देने से कर्ज चुक जाता है, उसी प्रकार एक से सहायता लेकर दूसरे को सहायता देने से भी वदला चुक जाता है। अगर कोई आदमी यह कहता है कि मैंने जिस दुकान से रुपया लिया है, उसी दुकान पर रुपया दू गा, दूसरी पर नही, तो ऐसा कहने वाला क्या बहानेबाज नही कहलाएगा ? इसी प्रकार स्थावर जीवो से सहायता लेकर अगर त्रस जीवो को उतना वदला चुका देते हो तो आपकी आत्मा निर्मल वनेगी।

त्रस जीवो के भी भेद करके जो आपके ज्यादा नजदीक हैं, उन पर पहले ध्यान दे सकते हो और वही से वदला देना आरम्भ कर सकते हो। इस प्रकार अन्तिम श्वास तक कर्ज चुकाते रहना चाहिए। अधिक न कर सको तो पाच बातो के त्याग से भी कर्ज चुका सकते हो। वे पाच वातें यह हैं—वन्ध, वध, छेद, अतिभारारोपण और अन्न-पानी समय पर न देना। किसी पशु को कष्टकर वन्धन से बाध देना, उसे मारना-पीटना, उसकी चमडी का छेदन करना, शक्ति से अधिक वोझा लादना और समय पर उसे खाना-पाना न देना, यह पाच वातें त्यागकर आप अपना कर्ज चुका सकते है।

गाडे वन्धन मे वाधने से तो अहिंसा-व्रत टूटता है,

में एक पुस्तक में पढ़ा था—इस चमड़े के लिए पशु को बुरी तरह घात किया जाता है। भारत में पहले जूतों के लिए एक भी पशु का घात नहीं किया जाता था किन्तु मुर्दा पशुओं का चमड़ा ही जूते बनाने के काम आता था। मगर विदेशियों ने जीते पशुओं का चमड़ा पसन्द किया है। इस कारण लाखों पशु मारे जाते हैं और दयाधर्मी कहलाने वाले लोग भी ऐसे चमड़े को काम में लाते हैं। गृहस्थी लोग चमड़े का उपयोग करना सवथा न त्याग सकें यह बात दूसरी है किन्तु विदेशी चमड़े का त्याग तो उन्हें भी करना चाहिए। ऐसे चमड़े के लिए विशेषतः गाय का कत्ल किया जाता है। ऐसा होते हुए भी घड़ी के पट्टे, सन्दूक और बूट आदि उसी चमड़े के बने हुए काम में लाना कितनी निर्दयता है? जरा विचार तो करो कि इन वस्तुओं के निमित्त कितने पशुओं का चमड़ा क्रूरता के साथ उतारा जाता है।

शालिभद्र कहता है—जो आभूषण चक्रवर्ती के लिये भी दुर्लभ है उन्हें हम प्रतिदिन निर्माल्य करके फेंक देते हैं और हमारे यहा मोरी में कस्तूरी बहती है। यह सब पिताजी की धर्माराधना का प्रताप है। इस प्रकार की दिव्य वस्तुएं देने वाले का ऋण न चुकाना चोरी होगी।

कुछ लोग कहते हैं—सबका बदला किस प्रकार चुकाया जा सकता है? पानी पेड़ पृथ्वी आदि के उपकार का बदला उन्हें कैसे दिया जाय? वे कुछ लेते तो हैं नहीं मगर आपको जिनसे सहायता मिलती है वे सहायता देने वाले पदार्थ दाता है और आप सहायता लेने वाले है। ऐसी हालत में जब सहायता का बदला देने का अवसर उपस्थित

१५ : रत्न-कंबलो की खरीद

जिस समय की यह कथा है, उस समय भारतवर्ष मे राजगृह की वडी प्रतिष्ठा थी । वह भारत का सम्पन्न नगर माना जाता था । वहा के सम्राट् श्रेणिक का वर्चस्व तो सर्वत्र था ही, मगर सम्पत्तिशाली नागरिको की प्रसिद्धि भी कम नही थी । राजगृह की इस प्रसिद्धि से प्रेरित होकर कुछ व्यापारी वहा रत्न-कम्वल वेचने के लिये आये । उन रत्न-कम्वलो का कपडा रत्नो के समान था । कम्बलो की बनावट मे अद्भुत कौशल से काम लिया गया था । उस कम्वल को ओढ लिया जाय तो कैसी ही सर्दी या गर्मी क्यो न हो, असर नही करती थी । उस समय भारत की कला बहुत उच्च श्रेणी पर पहुच चुकी थी । अतएव इस प्रकार के कम्बलो का बनना आश्चर्य की वात नही है । उस कम्बल मे एक विशेष गुण और भी था । वह यह कि अगर वह मैला हो जाय तो अग्नि मे डाल देने से स्वच्छ हो जाता था—जलता नही था ।

सभव है यह बात किसी को असभव प्रतीत हो । मगर जो लोग पुद्गलो की विचित्र शक्ति को समझते हैं, उन्हे इसमे असभव जैसी वात मालूम न होगी । हम भारतीयो मे ऐसी दैन्य भावना आ गई है कि हम अपने देश के प्राचीन विज्ञान के विकास पर पहले अश्रद्धा ही प्रकट करते है । जब वही वात कोई पाश्चात्य वैज्ञानिक यन्त्रो द्वारा प्रत्यक्ष दिखला देता है तो फिर कहने लगते हैं—यह बात तो हमारे शास्त्रो मे भी लिखी है । मेरा विश्वास है कि अगर भारतीय लोग इस अश्रद्धा से वचकर और ऐसी बातो को सभव मानकर,

परन्तु खोलने से भी क्या व्रत का भग हो जाता है ?
नही !

लेकिन तेरहपंथियो का कथन है कि दया करके कोई साधु किसी पशु को अगर छोड देता है तो उस साधु को चौमासी प्रायश्चित आता है तो श्रावक को पाप क्यो नही लगेगा ? यह निर्दयता सिखलाने का मार्ग है ।

शालिभद्र कहते है—ससार बधन को ढीला करके कर्ज चुकाना ही ठीक है । भोग विलास में पडे रहना ठीक नही ।

शालिभद्र को आप भोगी ही न समझे । शालिभद्र की कथा भी भोग की कथा नही है । भोग में डूबा रहने वाला तो वर्तमान जीवन में ही नरक का निर्माण कर लेता है वह किसी काम का नही रहता । अतएव यह देखो कि वास्तव में शालिभद्र ने किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत किया है ।

शालिभद्र ने अपनी स्त्रियो से कहा—ससार के इन भोगो मे न फसे रह कर ससार के कल्याण के साथ अपना कल्याण करना चाहिए । यह जीवन की सार्थकता है । यह सुख हमे मार न डाले इस बात की सावधानी रखना बहुत आवश्यक है । जिसने दिया है उसकी भेंट किये बिना हडप कर जाना चोरी है । यह सुख-सम्पत्ति धर्म-पिता की दी हुई है । धर्म को अर्पण किये बिना इस चोरी से कैसे बच सकेंगे ।

❀❀

पहले सिक्के के द्वारा लेन-देन नही होता था, वरन् एक चीज के वदले दूसरी चीज खरीदी जाती थी। अतएव कवल पसन्द करने वालो ने उसका वदला पूछा, मगर उनके घर मे कोई ऐसी चीज ही नही निकली जो वदले मे देने योग्य होती। खरीददार कम्वल की तोल का सोना देने को कहते, मगर व्यापारी इसके लिए तैयार न हुए। उन्हे ऐसा करने मे नुकसान मालूम होता था।

कम्वल का वदला सुन-सुन कर खरीददारो ने कम्बलो को वैसे ही छोड दिया, जैसे मखमल-सा कोमल और नरम जान कर धोखे मे आकर पकडा हुआ साप छोड दिया जाता है। सब लोग कहने लगे—बरावरी का सोना दे रहे है, फिर भी अगर कम्वल नही वेचते तो चाहते क्या हो ? ऐसा कपडा भी किस काम का जो सोने के तोल मे भी न मिल सकता हो! रहने दो। रक्खे रहो। जिसके घर आकाश से धन वरसता होगा। वही तुम्हारे कम्वल खरीदेगा।

पहले के लोग यह देखते थे कि इतना जो दे रहे है सो इसमे कुटुम्व का कितने दिनो तक पोषण होगा! इस वात का विचार करके ही लोग वदला दिया करते थे।

राजगृह के वाजार मे उन कवलो को कोई न ले सका। दलालो ने भरसक कोशिश की, मगर कुछ भी नतीजा न निकला। अन्त मे दलाल व्यापारियो को राजा श्रेणिक के पास ले गए। राजा श्रेणिक ने तथा चेलना, नन्दा आदि रानियो ने कवलो को वहुत पसन्द किया। राजा ने सोचा—किसी के लिये ले और किसी के लिये न ले तो ठीक नही होगा। यह विचार कर उसने सोलहो कम्वल खरीद लेने का निश्चय किया और उसका वदला पूछा।

दृढ़ विश्वास के साथ उनकी खोज में लग जाएं तो वे विज्ञान के विकास में सर्वश्रेष्ठ भाग अदा कर सकते हैं। हमारे दर्शनशास्त्रों में बहुत-सी बातें सिद्धांतरूप में वर्णित हैं और उन्हें सिर्फ प्रयोग द्वारा यन्त्रों की सहायता से व्यक्त करने की ही आवश्यकता है। मगर ऐसा करने के लिये धैर्य चाहिये श्रद्धा चाहिये और उद्योगशीलता चाहिये। जहां इनका अभाव है वहां किसी बात का असम्भव कह कर सहज ही छुटकारा पा लेने के सिवाय और क्या चारा है? पुद्गलों की शक्ति अपरिमित है। वैज्ञानिक नई-नई शक्तियों की खोज करते रहते हैं फिर भी उनकी खोज का कभी अन्त नहीं आएगा। नवीन-नवीन शक्तियां उन्हें विदित होती ही जाएंगी।

हवाई जहाज का आविष्कार होने से पहले लोग हमारे यहां के विमानों के वर्णन को गप्प मान लेते थे। लेकिन यह नहीं सोचते थे कि इस प्रकार की कल्पना एकदम निराधार नहीं हो सकती। जब वायुयानों का आविष्कार हो गया तो हमारे वर्णन की सत्यता प्रकट हुई। यही बात इन रत्न-कंबलों के विषय में कही जा सकती है।

व्यापारी रत्न-कम्बल लेकर राजगृह में आये और उनकी विशेषताओं का बखान करने लगे। बड़े-बड़े अमीर सुखी और छैले कम्बल लेने दौड़े। उस समय मगध और मगाध में राजगृह जैसा कोई नगर नहीं था। अतएव सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि वहां कैसे-कैसे लोग बसते होंगे। बहुत से लोग दौड़े-दौड़े आये और सभी को कम्बल पसन्द भी आ गये। नापसन्द होने के योग्य तो वह थे ही नहीं।

पहले सिक्के के द्वारा लेन-देन नही होता था, वरन् एक चीज के वदले दूसरी चीज खरीदी जाती थी। अतएव कवल पसन्द करने वालो ने उसका वदला पूछा, मगर उनके घर मे कोई ऐसी चीज ही नही निकली जो वदले मे देने योग्य होती। खरीददार कम्वल की तोल का सोना देने को कहते, मगर व्यापारी इसके लिए तैयार न हुए। उन्हे ऐसा करने मे नुकसान मालूम होता था।

कम्वल का वदला सुन-सुन कर खरीददारो ने कम्बलो को वैसे ही छोड दिया, जैसे मखमल-सा कोमल और नरम जान कर धोखे मे आकर पकडा हुआ साप छोड दिया जाता है। सव लोग कहने लगे—वरावरी का सोना दे रहे है, फिर भी अगर कम्वल नही वेचते तो चाहते क्या हो ? ऐसा कपडा भी किस काम का जो सोने के तोल मे भी न मिल सकता हो ! रहने दो। रक्खे रहो। जिसके घर आकाश से धन वरसता होगा। वही तुम्हारे कम्वल खरीदेगा।

पहले के लोग यह देखते थे कि इतना जो दे रहे हैं सो इसमे कुटुम्व का कितने दिनो तक पोषण होगा ! इस वात का विचार करके ही लोग वदला दिया करते थे।

राजगृह के वाजार मे उन कवलो को कोई न ले सका। दलालो ने भरसक कोशिश की, मगर कुछ भी नतीजा न निकला। अन्त मे दलाल व्यापारियो को राजा श्रेणिक के पास ले गए। राजा श्रेणिक ने तथा चेलना, नन्दा आदि रानियो ने कवलो को वहुत पसन्द किया। राजा ने सोचा—किसी के लिये ले और किसी के लिये न लें तो ठीक नही होगा। यह विचार कर उसने सोलहो कम्वल खरीद लेने का निश्चय किया और उसका वदला पूछा।

बदले में सोना देने को तैयार होने पर भी जब व्यापारियों ने कम्बल देना स्वीकार न किया तब राजा वहांमा बना कर दूसरे काम मे लग गया। व्यापारियों ने थोड़ी प्रतीक्षा के पश्चात् उत्तर मांगा। राजा ने कहा—बस इससे ज्यादा नहीं दिया जा सकता। हमारे पास जो धन है वह प्रजा के खून की कमाई है। इसे इस प्रकार नहीं उड़ाया जा सकता।

राजा श्रेणिक का यह उत्तर सुन कर व्यापारी बहुत निराश हो गये। जब राजगृह में ही कम्बल न बिक सके तो अन्यत्र कहां बिक सकते हैं! और इन्हीं म सारी पूंजी लग गई है तो दूसरा व्यापार किस प्रकार किया जाय! सब अपनी अपनी मेहनत को देखते हैं हमारी मेहनत को कोई नहीं देखता! हमारी कला का कोई मूल्य ही नहीं है!

व्यापारी श्रेणिक के दरबार से लौट कर राजगृह के बाहरी हिस्से मे किसी वृक्ष के नीचे आकर रोटी पानी की तजवीज म लगे। पनघट वहां से पास म ही था। व्यापारियों का मन ऐसा उदास था जैसे दाहसंस्कार में साथ गए हुए लोगो का होता है? वह यही सोच रहे थे कि इन कम्बलों के पीछे हम बर्बाद हो गये। सारा जीवन इनके तैयार करने में खपा दिया पूंजी सब लगा दी फिर इनकी कद्र करने वाला कोई न मिला! जब राजा श्रेणिक ही इन्हें न ले सके तो किसी दूसरे से क्या उम्मीद की जा सकती है!

व्यापारी इस प्रकार की चिन्ता में डूबे उदास चित्त बैठे। उसी समय शालिभद्र की दासियां पानी भरने के लिए उधर से निकली।

प्राचीन काल मे स्त्रिया या तो स्वय अपने घर के लिए पानी लाया करती थी या फिर उनकी दासिया लाती थी। वह दासिया आजकल की तरह नौकरानी नही होती थी, वरन् एक प्रकार से उस कुटुम्ब की ही सदस्या होती थी। वह अपनी स्वामिनी के घर को ही अपना घर समझती थी और उनकी सन्तान का विवाह आदि काज भी उसी घर से होते थे। शालिभद्र की दासियो ने व्यापारियो को चिन्तित देखा तो वे आपस मे कहने लगी—

पहली—अपने नगर मे जो लोग आते हैं, वे सब प्रसन्न और आनन्दित होते है। परन्तु ये व्यापारी दुःखी क्यो दिखाई देते हैं।

दूसरी—जहा तुम वहा मैं! मुझे दुःख का पता कैसे हो सकता है? उन्ही से पूछना चाहिए।

तीसरी—ये लोग दिखाई तो बाहर के ही देते हैं।

आपस मे इस प्रकार बात-चीत करके एक दासी ने व्यापारियो से पूछा—तुम लोग कोई व्यापारी जान पडते हो, परन्तु उदास क्यो हो?

व्यापारियो मे से एक ने अपने साथियो से कहा—राजगृह के सेठो से और राजा से कह-कह कर थक गये फिर भी अपना दुःख दूर नही हुआ। अब इन पानी भरने वाली दासियो से कहने पर क्या होगा? ये क्या दुःख दूर कर देगी?

दूसरे ने कहा—अहकार क्यो करते हो? देखो न, कितनी नम्रता के साथ वह पूछ रही है। उसकी वाणी मे

सहानुभूति है और चेहरे पर भी नरमता है। और तुम अहंकार में ही मरे जाते हो! इनका पुण्य तो देखो ये कैसे घर की दासियाँ हैं। इनके हाथ में कितने बहुमूल्य घड़े हैं। दासियाँ होकर भी रानियों-सी शान पड़ती हैं। जिस परिवार की यह दासिया हैं उस परिवार की स्थिति का अन्दाज इन्हीं से कर लो।

इसके बाद उस व्यापारी ने प्रश्न करने वाली दासी की तरफ उन्मुख होकर कहा—बाई तुम दयावाली हो इसी कारण हमारा दुःख पूछती हो तो फिर हमें बतलाने में हर्ज ही क्या है? हम माग सोलह रत्न-कम्बल लाये हैं। इनके ओढ़ लेने पर न सर्दी लग सकती है न गर्मी लग सकती है। इनकी खास विशेषता यह है कि मैले हो जाने पर इन्हें आग में डाला जा सकता है। कम्बल उसमें साफ हो जाएंगे। हमने अपना सारा जीवन इनके बनाने में लगाया है। इन्हें बेचने की इच्छा से राजगृह में आये थे। मगर कम्बल का उचित बदला देकर खरीदने वाला यहाँ कोई न मिला। महाराज श्रेणिक तक ने एक भी कम्बल नहीं लिया। अब हम इस चिन्ता में हैं कि इन्हें बेचने के लिए कहाँ ले जायें।

व्यापारी की व्यथा सुन कर दासियाँ आपस में मुस्करा कर कहने लगी—

पहली—शायद अपने सेठजी से इनकी मुलाकात नहीं हुई।

दूसरी—अब भी मुलाकात नहीं हुई तो राजगृह की नाक कट जाएगी।

तीसरी—राजगृह मे इतने धनाढ्यो के होते हुए भी कबल नही विके तो अव क्या विकेगे ।

चौथी—करो न दलाली जिससे भद्रा माता खरीद ले । और इन बेचारो की चिन्ता मिट जाय !

इसके वाद एक दासी ने व्यापारी से कहा—वस यही तुम्हारी चिन्ता है ! तुम लोग हमारी हवेली चलो । हमारी भद्रा माता तुम्हारे सव कम्वल खरीद लेगी और तुम्हे मु ह मागे दाम मिलेगे । तुम मागने मे भले ही कसर रखो, देने मे वे कसर नही रखेगी ।

व्यापारियो मे से एक कहने लगा—राजा श्रेणिक से वडा यहा कौन होगा ? जव उन्होने ही कम्वल न लिए तो दूसरे से क्या आशा की जा सकती है ? ऐसो दशा मे इनके कहने से ही वृथा चक्कर लगाने से क्या लाभ ?

दूसरे ने कहा—हम लोग व्यापारी है । हमे चक्कर का हिसाव नही देखना चाहिए । अव तक तुम सारे नगर मे घूमते फिरे, क्या किसी ने इतना भी आश्वासन दिया था ? इनसे आश्वासन तो मिल रहा है ! अगर हम लोग इनके साथ न चले तो पछतावा ही वाकी रह जायगा । इसलिए चक्कर खाना पडे तो खाना पडे, परन्तु पछतावे के लिए गु जाइश नही रहने देना चाहिए । आप लोग चले या न चले मैं तो अवश्य जाऊगा ।

इतना कह कर एक व्यापारी जाने को उद्यत हुआ । उसे जाते देख शेप उसके साथी भी तैयार हो गये । दासिया उन्हे साथ लेकर शालिभद्र के घर आई । व्यापारियो को

बाहरी बैठक में बिठला कर कहा—तुम सब यहीं ठहरो। हम भद्रा माता की आज्ञा लेकर तुम्हें भीतर बुलवा लेंगे।

दासियाँ भीतर चली गईं और व्यापारी बाहर ठहरे रहे। शालिभद्र की हवेली को देख कर व्यापारी चकित रह गए। आपस में कहने लगे—सारे राजगृह में ऐसा महल कहीं नजर नहीं आया। कवल चाहे बिकें या न बिकें यह महल देखने को मिल जाय तो यही बहुत है।

सेठानी भद्रा भीतर ऊँचे आसन पर बैठी हुई थी। दासियाँ हँसती हुई उनके पास पहुँची। सेठानी समझ गईं कि ये किसी काम से मेरे पास आई हैं वृथा समय खोने वाला हमारे यहाँ कोई नहीं है।

रुपयों का खयाल आप करते होंगे और सभी करते हैं मगर समय का विचार करने वाले विरले ही होते हैं। समय का विचार रखने वाला उसे वृथा नष्ट न करने वाला कभी दुःखी नहीं होता। उसे प्रत्येक आवश्यक काम के लिये समय मिल जाता है।

भद्रा ने दासियों से पूछा—आज इस समय यहाँ आने का क्या प्रयोजन है? तब दासियों ने कहा—एक ऐसी बात है माँ जी जिससे राजगृह की नाक जा रही है।

प्रश्न होता है—राजगृह की इज्जत न जाने की फिक्र इन दासियों को क्या है? क्या नगर की प्रतिष्ठा न जाने देने की किसी को चिन्ता करनी चाहिए?

'अवश्य!

दूसरों के विषय में आप ठीक फैसला दे सकते हैं।

मगर अपनी सोचिये । आपमे इतना आलस्य घुस गया है कि अगर आपके उठने मात्र मे किसी का काम होता होगा तब भी शायद आप मुश्किल से ही उठेगे ! अगर राजगृह की नाक जाती थी तो इससे शालिभद्र का क्या बिगड़ता था ? उसके घर किस बात की कमी आ जाती ? क्या स्वर्ग से पेटिया आना वन्द हो जाता था ? नही । मगर अपने नगर की प्रतिष्ठा रखने का महत्व जानने वाले ही जानते है । दासिया जानती थी कि भद्रा माता अपने देखते-देखते नगर की आवरू नही जाने देगी ।

दासियो ने भद्रा से कहा—मा जी, राजगृह नगर मे कुछ व्यापारी रत्नकम्वल लेकर आये हैं । कम्बल ऐसे है कि पानी के वदले आग से साफ होते हैं । उनके ओढ लेने पर वर्षा, गर्मी, सर्दी आदि का तनिक भी असर नही होता। मगर कीमती वहुत है । इस कारण किसी ने नही खरीदे यहा तक कि महाराज श्रेणिक ने भी नही खरीदे । व्यापारी निराश होकर जा रहे थे । यह हमे वुरा मालूम हुआ ।

भद्रा ने गम्भीरता से कहा—वे राजा है । अवसर नही होगा तो नही लिये । हमे उनकी निन्दा करने की आवश्यकता नही । रह गया उनका निराश होकर जाना, सो तुम उन्हें यहा लेती क्यो नही आई ?

एक दासी—ले तो आई हैं ।

भद्रा—तो ठीक किया । उन्हे भीतर वुला लो । वेचारे वाहर खडे प्रतीक्षा कर रहे होगे ।

दासिया प्रसन्न होकर आपस मे कहने लगी—माजी

कितनी दयालु है ? हम बड़ी पुण्यवती है कि इनकी सेवा करने का हमें सौभाग्य मिला है। व्यापारियो को साथ म मे आती तो पश्चात्ताप रहता या फिर दौड कर आना पड़ता।

व्यापारी लोगों को भीतर चलने के लिए कहा गया। व्यापारी यह सोचकर प्रसन्न हुए कि कम्बल बिकें या न बिकें भीतर से इस महल को देख ही लगे ? वे सब बुलाने वाली दासी के पीछे-पीछे चल।

व्यापारी शालिभद्र के महल की ऋद्धि देखकर आश्चर्य करने लगे और कहने लगे—यह ऋद्धि की कैसी कारीगरी है ? क्या मनुष्य कभी ऐसा कर सकता है ? दूसरे ने कहा हम लोग कहा करते है कि पुण्य और पाप की बातें पोप लीला मात्र है। लेकिन यहां तो पुण्य के साक्षात् दर्शन हो रहे है। यह सब वैभव पुण्य के प्रताप बिना कैसे सम्भव हो सकता है ? हम लोग बड़े-बड़े राजाओ के महलो मे गये है सेठ-साहूकारों की हवेलिया भी हमने देखी है परन्तु इस ऋद्धि के सामने उनकी क्या बिसात है ?

तीसरा व्यापारी बोला अच्छा ही हुआ कि यहां राजा श्रेणिक ने कम्बल नही खरीदे। वह खरीद लेते तो यहां आने का सौभाग्य ही न मिलता और न यह अपूर्व वैभव देखने को मिलता।

चौथे ने कहा—अगर हमने पुण्य को सच्चा समझ लिया है तो चलो प्रतिज्ञा करो कि भविष्य में पाप से बचने का निरन्तर प्रयत्न करते रहेगे।

मित्रो ! जरा इन व्यापारियो की भावना पर विचार

करो। ऋद्धि देखने मात्र से उनके हृदय के पट खुल गये हैं।

इतने मे व्यापारी भद्रा के पास जा पहुचे। दासियो ने उनसे कम्वल लेकर भद्रा को वतलाए। देवलोक के वस्त्र पहनने वाली भद्रा को यह कम्वल कव पसन्द आने लगे। लेकिन भद्रा विचार करती है—वे कपडे देवलोक के हैं और ये मनुष्य लोक के हैं। देवलोक के वस्त्रो के साथ इनकी तुलना करके इन्हे तुच्छ समझ लेना और व्यापारियो को निराश करना उचित नही है। मनुष्य की शक्ति का ध्यान रखते हुए ही इन कम्बलो के महत्त्व को देखना चाहिये।

कम्बल देखकर भद्रा ने कहा—कम्बल वहुत अच्छे हैं। रूप-रङ्ग अच्छा है और पोत भी अच्छा है। गुण भी जो बताया गया है, अच्छा है। अव इनका मूल्य बतादो।

व्यापारियो ने शालिभद्र के घर को देखकर उसकी सम्पत्ति का मोटा अनुमान लगा लिया था। दासियो ने भी उनसे मु ह मागे दाम की वात कही थी। मगर व्यापारियो ने सोचा—अभी-अभी हम लोग पुण्य-पाप की बात सोच रहे थे, अतएव ईमान छोडना ठीक नही है।

व्यापारियो ने दूसरो को तथा राजा श्रेणिक को एक-एक कम्बल का मोल सवा-सवा लाख स्वर्ण-मोहर वतलाया था। वही उन्होने भद्रा माता को वतला दिया।

भद्रा—सोलह कम्वलो की कीमत वीस लाख स्वर्ण-मोहरें तो कही, मगर एक वडी अडचन है। कम्बल तुम्हारे पास सोलह हैं और वहुए मेरे यहा वत्तीस है। मैं किसे कम्वल दू? और किसे न दू? मुझे न कोई वहू खारी है, न अधिक प्यारी है। वत्तीसो को समान दृष्टि से देखती हू।

घर में सबको समान दृष्टि से न देखने के कारण बड़ी हानि होती है। घर घर में आज जो कलह है उसका मुख्य कारण यही विषम व्यवहार और पक्षपात है। जहां कपट ने प्रवेश किया वहीं गड़बड़ हुई और घर में फूट पड़ी! फूट सम्पत्ति के विनाश की अग्रिम चेतावनी है।

प्रतापी पूज्य श्री चौथमल जी महाराज साधुओं के आहार-वितरण के सम्बन्ध में अत्यन्त सावधान रहते थे। कदाचित गोचरी में दो सोम आ जाते तो उनके टुकड़े-टुकड़े करके सब साधुओं को बराबर-बराबर बांट देते थे। कोई न लेना चाहता तो बात दूसरी थी मगर वे अपनी ओर से समान वितरण ही करना चाहते थे। उनका कथन था कि बिना इन्कार किये किसी की वस्तु खा लेना सह-धर्मी की चोरी है।

तात्पर्य यह है कि जहां वस्तु का समान रूप से विभाग नहीं होता वहां क्लेश होने की सम्भावना रहती है और जहां क्लेश हुआ वहां परिवार छिन्न-भिन्न हो जाता है।

इसी बात को ध्यान में रखकर भद्रा कहने लगी—मैं सब बहुओं को समान समझती हूं। अब यह कम्बल किसे दूं और किसे न दूं? मैं और कम्बल नहीं खरीदती हूं तो तुम्हें निराशा होती है अतएव इन सोलह कम्बलों के बत्तीस टुकड़े कर दो ताकि सबको एक-एक आ जावे। तुम व्यापारी हो। फाड़ने का काम अच्छी तरह कर दोगे।

भद्रा की बात बड़ी गम्भीर है। कुटम्ब में सुख-शांति रखने के लिए इस प्रकार का निष्पक्ष व्यवहार होना अतीव आवश्यक है। यह एक आदर्श है जो प्रत्येक कुटम्ब के बड़

बूढे को अपनाना चाहिए । इसके विरुद्ध जो लोग विपम व्यवहार करते है कोई चीज लाकर अपने लडके को देते है और भाई के लडके को नही देते, उन्हे क्या कहना चाहिये ?

तो इस नीचता के कारण कभी-कभी कितना अनर्थ होता है, यह वात मेरी अपेक्षा भी आप ज्यादा समझ सकते हैं । भद्रा की वात स्त्रीवर्ग के लिए विशेष रूप से विचारणीय है । वह कहती है कि मेरे लिए सभी वहुए समान हैं। ऐसी दशा मे कभी कलह हो सकता है ?

'नही ।'

एक की ओर अधिक अनुराग आया कि दूसरी की ओर विराग आएगा और फिर क्लेश का नङ्गा नाच हुए विना नही रहेगा । इस पक्षपात से हजारो घर वर्वाद हो गये है । भले ही सव वहुए समान गुणवाली न हो, एक आज्ञा मानती हो, और दूसरी न मानती हो, तव भी भेद-भाव रखना उचित नही है ।

भद्रा सदैव निष्पक्ष व्यवहार करती थी । यही कारण है कि इतने वहुमूल्य और असाधारण कम्वलो के टुकडे करवाना उसने स्वीकार किया मगर यह स्वीकार नही किया कि एक को कम्वल दें और दूसरी को न दें ।

व्यापारी लोग भद्रा की आज्ञा सुनकर आश्चर्य मे डूब गये । वे सोचने लगे—यह कैसा घर है जहा ऐसे बहुमूल्य कम्वलो के टुकडे करवाए जाते हैं । फिर उन्हें ध्यान आया—कही ऐसा न हो टुकडे करवा कर कम्वल लेने से इन्कार कर दे । यह सोच कर व्यापारियो ने कहा—पहले कम्वलो का मूल्य वीस लाख स्वर्ण-मोहरें आप दिला दीजिए । उसके

बाद जैसी आपकी इच्छा होगी वैसा किया जाएगा ।

भद्रा मन ही मन कहने लगी इनका कहना अनुचित नहीं । बेचारों को विश्वास कैसे हो ! मगर कम्बलों के टुकड़े हो जावें और फिर लेने से इन्कार कर दिया जाय तो ये कितनी मुसीबत में फंस जाएंगे ।

आज के लोग होते तो चिढ़ जाते और कहते—'हमारा इतना भी विश्वास नहीं ! ऐसे लोग अपनी स्थिति जबर्दस्ती दूसरों के सिर मढ़ते हैं। उचित तो यही है कि ऐसे अवसर पर सामने वाले की स्थिति पर विचार किया जाय ।

भद्रा ने भण्डारी को बुलाकर कह दिया—यह कम्बल पसन्द आ गये हैं । इनकी कीमत बीस लाख सोनैया चुका दो । उनके बदले कोई और चीज लेना चाहें तो वह दे दो और उनकी परीक्षा करवा दो जिससे उन्हें कसर न पड़े । इसके बाद इन्हें सुरक्षित रूप से इनके घर पहुंचा दो । इनके पास जोखिम रहेगी । बिना रक्षा के कहीं संकट में न पड़ जाय ।

भण्डारी व्यापारियों को भण्डार में ले गया । व्यापारियों ने शालिभद्र का भण्डार देखा तो उनके आश्चर्य का पार न रहा । हीरे वहां परों तले कुचले जाते हैं । माणिकों को कोई सम्भालता ही नहीं है । मूंगों का कोई पार ही नहीं है और दूसरे रत्न कांच की तरह ढेरों पड़े हैं । व्यापारी सोचने लगे—कुबेर का भण्डार भी क्या इससे बढ़कर होगा ?

आप इस वर्णन में अत्युक्ति न समझें । इतिहास के अनुसार दौलताबाद के एक नवाब ने जब देवगिरी का किला तोड़ा था तब वहां के राजा ने उसे ढाई मन हीरे संधि में दिये थे । जब एक मनुष्य के पास इतना हीरा हो सकता

हैं तो वह सम्पत्ति तो देवलोक की थी उसमे असभव जैसी कौन-सी वात है ?

कम्वलो के व्यापारी इस ऋद्धि को देखकर चकित हो गये और कहने लगे—इतनी ऋद्धि आई कहा से होगी ? अवर घूजे, भूत कमावे और आकाश मे हल चले तव भी इतनी ऋद्धि नही हो सकती । फिर यह कहा से और कैसे आई ?

लोग समझते है कि हमारे पुरुषार्थ से लक्ष्मी आती है । हम कमाते है इसीलिए हमारे पास ऋद्धि आती है । मगर विचारणीय यह है कि दो व्यापारी समान रूप से पुरुषार्थ करते है और एक को लाभ तथा दूसरे को हानि होती है । इसका कारण क्या है ? इसके अतिरिक्त ऋद्धि तो जीवन के सहारे ही है और जीवन किसने कमाया है ? इस बात पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि ऋद्धि वास्तव मे पुण्य से मिलती है । अतएव धन के लोभ मे पडकर पाप मत करो । पाप से धन का विनाश होगा, धन का लाभ नही हो सकता । पाप से प्रवृत्ति करने से ऋद्धि नष्ट हो जाएगी और नरक का मेहमान वनना पडेगा ।

व्यापारियो के अन्त करण मे इसी प्रकार का विवेक जागृत हुआ ।

भद्रा की आज्ञा के अनुसार भण्डारी ने वीस लाख सोनैयो का वदला चुका दिया । भद्रा के वुलाने पर व्यापारी फिर उसके पास गये । भद्रा ने उनसे पूछा—कम्वलो का मूल्य तुम्हे मिल गया ?

व्यापारियो ने कहा—माजी मूल्य मिल गया है और

आपके घर से हम लोगों को जो विवेक मिला है वह और भी बड़ी चीज है। आपका घर देखकर हमें सुकृत्य का फल याद आया है।

भद्रा—यह ऋद्धि मेरी नहीं मेरे पति की दी हुई है। उन्होंने दीक्षा ली थी। जब वे दीक्षा लेने के लिये जाने लगे तो हमें अच्छा नहीं लगा था। हमने सोचा कि हमें छोड़कर न जाते तो अच्छा था। मगर वे नहीं माने उन्होंने तपस्या की और सयम का पालन किया। उनके ऊपर हमारा भी उत्कृष्ट भाव रहा। वे अब किसी स्वर्ग म उत्पन्न हुए है और वहां से ये ऋद्धि भेज रहे है। इस ऋद्धि में हमारा कुछ भी नहीं है। तटस्थ रूप से देख रेख करना ही हमारा कार्य है।

व्यापारी कहने लगे—आपकी बात से यही तत्त्व और मिल गया। हम लोग आपस में यही सोच रहे थे कि यह ऋद्धि कहा से आई? अब मालूम हुआ कि तप और सयम मे से इसका विकास हुआ है। माताजी आपका भाग्य सराहनीय है कि आपके पति ने असीम सम्पत्ति त्याग कर दीक्षा ली। उस सयम-लक्ष्मी को भी धन्य है जिसमें से यह ऋद्धि निकली है।

भद्रा ने व्यापारियो से कहा—कम्बलो का मूल्य तुम्हे मिल गया है। अब इनके दो-दो टुकड़े कर दो।

व्यापारी—आपकी ऋद्धि देखते हुए तो इनके दो क्या और भी अधिक टुकड़े करना मामूली बात है लेकिन मूल्य वान् कम्बलो के टुकड़े करने में हमारे तो हाथ कापते है। क्या यह नहीं हो सकता कि इनमें से एक कम्बल को एक

दिन एक बहू ओढ ले और दूसरे दिन दूसरी बहू ओढ ले।

भद्रा—यही तो कठिनाई है भाई ! एक दिन काम मे लाया हुआ कपडा हमारे यहा दूसरे दिन काम मे नही आता ।

व्यापारी हैरान थे । चकित होकर कहने लगे—तो क्या ये केवल एक ही दिन ओढे जाएगे ?

भद्रा—यह मेरी मनुहार से । नही तो ऐसा कपडा यहा ओढता ही कौन है ! तुम्हे शका हो तो जब तक तुम कबलो के टुकडे करते हो तब तक मैं अपनी बहुओ को बुलवाए लेती हू । तब देख लेना, वे कैसे कपडे पहिनती है । वास्तव मे यह कम्बल बहुओ के ओढने के लिए नही खरीदे है, खरीदे इसलिए है कि नगर की इज्जत न चली जावे । तुम्हारी सारी पूजी इन्ही मे रूक रही है और मेरे घर मे सहज रूप मे धन की कमी नही है । इसलिए मैंने इन्हे ले लिया है । और कोई कारण नही है ।

इतना कह कर भद्रा ने दासी को आज्ञा दी कि जरा बहुओ को बुला लाओ । दासी बुलाने गई । सास का बुलौआ पाते ही सब बहुए एकदम खडी हुई । वे सासू की आज्ञा के पालन को अपने जीवन का धन और प्राणनाथ का दान समझती थी ।

बहुत-सी बहुओ को अपना बालम तो प्रिय लगता है परन्तु सास-ससुर काटे से लगते हैं । वे समझती है कि पति तो सासारिक मनोरथ पूरा करता है पर यह सास-ससुर किस काम के ? अज्ञान के कारण ऐसी खोटी समझ तो हो ही रही है, तिस पर यह उपदेश मिल पाता है कि

सास-ससुर की सेवा करना एकान्त पाप है। फिर तो कहना ही क्या है ! यह तो जलती आग में घी होमने के समान है।

राग तीन प्रकार का है—कामराग दृष्टिराग और स्नेहराग ! भोग की आशा से होने वाला राग काम राग कहलाता है। स्नेहराग दसवें गुणस्थान की स्थिति में पहुँचने पर छूटता है। गुरु से और धर्म से राग होना भी प्रशस्त स्नेह राग है। लेकिन तेरापंथी भाई राग को एकांत पाप बतलाते है। उनके कथनानुसार अपने धर्मगुरु के प्रति राग होना भी एकान्त पाप ठहरता है। यह यहां तक उचित है इस पर शांति और निष्पक्ष भाव से विचार करने की मैं प्रेरणा करता हूँ।

शालिभद्र की स्त्रियां कामराग की चेरी नहीं थी। उन्हें विषयभोग का ही मोह होता तो वे सास का हुक्म पाते ही खड़ी न हो जाती। वे सास के आदेश को अपने सिर का आभूषण समझती थी। उन्हें विदित था कि यह सब सुख और वैभव इन्हीं की कृपा का फल है। यही हमारे प्राणनाथ की जननी है। इनका हुक्म न मानने से हमारी अधोगति होगी।

बत्तीसों बहुएं उठ खड़ी हुई। प्रथम तो वे देव सम्बन्धी वस्त्र और आभूषण पहिने थी दूसरे उनका भाग्य भी कुछ कम नहीं था। इसलिये उनकी सुन्दरता का कहना ही क्या है ?

बत्तीसों बहुएं रुमझुम करती हुई अपने महल से ऐसी उतरी जैसे स्वर्ग से अप्सराएं उतर रही हो। सब के आभू-षणों का सम्मिलित स्वर सुन कर व्यापारी चौंक उठे। यह

मन ही मन सोचने लगे यह क्या चमत्कार है । इसी समय सब बहुए भद्रा के सामने आकर खडी हो गई । व्यापारी उनके दिव्य वस्त्र देख कर सोचने लगे—यह इन कबलियो को कब पसन्द करेगी ?

व्यापारियो को उनके वस्त्र और आभूषण देखकर आश्चर्य हुआ मगर बहुओ की आज्ञाकारिता देखकर कि इन सबने किस फुर्ती के साथ सास के हुक्म का पालन किया है और कितनी नम्रमता के साथ सास के सामने खडी हैं, व्यापारियो को बडा ही आश्चर्य हुआ । उन्होने सोचा—इनके व्यवहार से यही परिणाम निकलता है कि बडो की आज्ञा मानोगे तो फलोगे-फूलोगे और अगर केवल वस्त्रो और आभूषण पर ही फूल गये तो वही दशा होगी जैसे चना फूल कर दाल हो जाता है । अर्थात् जैसे चना पहले पुरुष था परन्तु फूलने के कारण उसे स्त्री (दाल-दर) होना पडे । फूलने से पहले वह उग सकता था, फूलने पर अपनी वह शक्ति भी खो बैठता है ।

देवलोक की सम्पत्ति का भोग करते हुए भी जो अपने बडे-बूढो की आज्ञा विनय-पूर्वक स्वीकार करते है, उन्ही की कथा पुण्य कथा है । ऐसे महाभागो की कथा ही लोकोपकारी होती है ।

भद्रा की बहुओ के वस्त्र देखकर व्यापारी सोचने लगे—हम अपने बनाए हुए कम्बलो पर अभिमान करते थे, लेकिन इन वस्त्रो को देखकर समझ गये कि हमारा गर्व व्यर्थ था और गर्व करना अच्छा नही है ।

मैं पूछता हू कि शालिभद्र की जो बहुए देवलोक के

वस्त्र पहिनती हैं वे क्या ऐसे कम्बल खरीदेंगी ! आज की सेठानियों को खादी के कपड़े दिये जाए तो क्या वे लेंगी? लोग मूछों पर ताव देते है कि हमारी भी पत्नी है। मगर जो पत्नी पति की आज्ञा नही मानती उसका पति पति ही कैसा ? कभी सेठानी के सामने खादी रख कर परीक्षा कर देखो कि वह क्या कहती है!

अज्ञान के कारण आज अधिकांश स्त्रियों को बारीक और/मुलायम वस्त्र प्रिय लगते है पति का हुक्म प्रिय नहीं लगता ?

आखिर भद्रा के कहने पर व्यापारियों ने कम्बलों के बत्तीस टुकड़े कर दिये। भद्रा व्यापारियों से एक-एक टुकड़ा लेती जाती है और एक-एक बहू को देती जाती है। बहुए अपनी सास द्वारा दिए हुए उपहार को हर्ष पूर्वक दोनों हाथों से ले रही है।

बड़े को वस्तु देने और उससे लेने में भी विनय की आवश्यकता होती है। मनुष्य म जितनी ज्यादा विनय-शीलता होगी उसकी पुण्याई उतनी ही ज्यादा बढेगी।

सास से कम्बल लेकर बहुओं ने कहा—हम सब पर आपकी बडी कृपा है। हम सदा इसके लिए लालायित थी कि अपनी सास का दिया कपड़ा पहिने। आज अपने अनुग्रह पूर्वक प्रेम के साथ यह वस्त्र दिया है हमें अत्यन्त प्रसन्नता है। हम सद्भागिनी हैं कि आपके हाथ से हमें वस्त्र मिला। आज की घडी धन्य है कि हमें आप-सी कृपालु सास की प्रसादी प्राप्त हुई है।

मालवा प्रान्त म एक त्यौहार मनाया जाता है। उसे

गाज का त्यौहार कहते हैं। स्त्रिया खूब गहने कपड़े पहिने होती हैं फिर भी उस त्यौहार के दिन का वटा हुआ एक सफेद धागा अपनी चूडियो मे वाध लेती हैं। उस दिन आपस मे स्त्रिया एक कथा कहती हैं। सक्षेप मे वह इस प्रकार है—'एक रानी थी। वस्त्र-आभूषण आदि ऋद्धि उसके पास थी। परन्तु उसने गाज का धागा अपनी चूडियो मे नही बाधा। इस कारण उसकी समस्त ऋद्धि गायब हो गई। जब उस रानी ने धागा वाधा तव कही ऋद्धि वापस लौट कर आई। इस कथा मे कौन जाने क्या रहस्य छिपा हुआ है?

सिर मे राख लगाना कोई अच्छा नही समझता। तेल सिन्दूर का टीका लगाना भी अच्छी वात नही मानी जाती। लेकिन भैरव और करणीजी के मन्दिर मे जाकर वही राख और टीका लगाने मे कोई वुराई नही समझी जाती। इसका मर्म इतना ही है कि वस्तु तो वही है जो साधारण अवस्था मे अच्छी नही समझी जाती थी, किन्तु वडो के सस्कार मे उसी वस्तु के विषय मे भावना वदल गई है। भावना वदलने से उसके प्रति प्रेम हो गया है। आज आप न मालूम किन-किन देवी-देवताओ को मानते हैं—पूजते और उनकी जूठन खाने को तैयार हो जाते हैं, किन्तु अपने वुजुर्ग-देव को भूल जाते हैं घर के वुजुर्ग-देवो का आदर न करके वाहर वालो का आदर करना वैसा ही है, जैसे गोद के वालक को छोडकर पेट के वालक की आशा करना।

जैसे रेशम और मलमल के वस्त्र पहिनने वाली स्त्री अगर अचानक खादी को अपना ले तो आश्चर्य होता है उसी प्रकार प्रसन्नतापूर्वक कवल के टुकड़े अपनाए जाने पर व्यापा-

रियों को आश्चर्य हुआ ।

बहुओं ने सास के प्रति जो कृतज्ञता प्रकट की थी उसके उत्तर में भद्रा ने कहा—तुम भाग्यशालिनी हो। तुम सबने आकर मेरा घर पवित्र किया है ।

इस प्रकार परस्पर सद्भावना प्रकट करने के बाद सब बहुएं अपनी-अपनी जगह लौट गई और व्यापारी अपने घर लौट गये । भद्रा अपनी जगह पर ही बैठी रही । कई दासियां भद्रा के पास बैठी थी उनमें से एक ने कहा—माजी हमने आज जैसा चमत्कार पहले कभी नहीं देखा था ।

भद्रा—क्या चमत्कार देखा आज ?

दासी—हमें मालूम ही नहीं था कि देवलोक के कपड़े पहिनने वाली बहुओं में सास के प्रति इतना आदरभाव होगा ! उन कपड़ों के सामने यह कम्बल ऐसे ही है जैसे कपड़ों के सामने छाल के वस्त्र ! मगर इन्होंने आज सीता का स्मरण दिला दिया । इन कम्बलों को व इतने प्रेम से ग्रहण करेंगी यह कौन समझ सकता था ? वास्तव में आप राम की माता कौशल्या से भी ज्यादा पुण्यशालिनी है । उनके यहां एक ही सीता थी आपके यहां बत्तीस सीताएं बसती है ।

भद्रा—इन कम्बलों को खरीदने का रहस्य तुम्हारी समझ में आया ?

दासी—समझ में आया भी होगा तो न मालूम क्या समझ में आया होगा ? आप ही अपने मुख से समझाइये तो कृपा होगी ।

भद्रा—तुमने खबर दी थी कि व्यापारी निराश और उदास होकर जा रहे हैं और नगर की नाक जा रही है ।

इसीलिए मैंने यह कम्वल खरीद लिये। लेकिन कम्बल लेकर नगर की प्रतिष्ठा कायम रखना ही मेरा उद्देश्य नही था। मगर बहुओ की कसौटी करना भी मेरा उद्देश्य था। मेरे यहा किसी चीज की कमी नही है। मैं चाहती तो कम्वल खरीद कर तुम्हे दे सकती थी या किसी रिश्तेदार के घर भेंट भेज सकती थी। राजा श्रेणिक इन्हे नही खरीद सके, अतएव उन्हे भेंट दे सकती थी। मैं लोभिनी भी नही हू। कम्बलो का लोभ होता तो टुकडे न करवाती। पूरे नही होते थे तो ताले मे वन्द करके रख लेती मगर यह सब न करके और एक-एक के दो-दो टुकडे करवा कर मैने वहुओ को वुलवा कर उन्हीं के हाथ मे दे दिये। तुम लोगो के हाथो उनके पास नही भेजे। इसमे भी एक रहस्य था।

रिश्तेदारो के यहा भेजती तो उनके घर तकरार होती। इसके अतिरिक्त उनके यहा भेजना उनका सम्मान नही वलिक अपमान करना होता, क्योकि वे इन्हे खरीद नही सके थे। कदाचित् उन्हे अपमान न मालूम होता और मुझे भी अहकार न होता तो भी उनके घर कलह तो मच ही जाता। इसलिए मैंने विचार किया कि ये कम्वल मेरे घर मे रहे तो ठीक है। मेरे यहा देव कृपा से सम्पत्ति आती है और दूसरो के घर कमाई से आती है। इसलिए इन शैतानी कपडो का जिनका ये वदला नही दे सकते, उनके घर भेजना उनकी लज्जा हरण करना एव उनके घर मे कलह के वीज वोना है।

क्या आप भी इतनी दूर की सोचते है? क्या आप यह सोचते हैं कि हम जो वस्त्र किसी को भेट देते हैं उससे

उसकी लाज लुटेगी या बचेगी ? सोचिये लाज कैसे वस्त्रों से रहती है ?

मोटे वस्त्रों से !

और आप अपने सम्बन्धियों को कैसे वस्त्र भट देते है ?

बारीक !

तो उनकी लज्जा लूटने के लिए भेंट देते है या लज्जा रखने के लिए ?

एक सज्जन कहते थे—स्त्रियां बारीक कपड़ पहिनती है। उन्हे उपदेश दीजिये। पर मैं पूछता हू कि उन्हे बारीक वस्त्र पहिनाता कौन है ? जो कपड़ा हम दे रहे है उससे लाज रहेगी या नही प्रतिष्ठा बचेगी या घटेगी इत्यादि विचार किये बिना ही बारीक से बारीक वस्त्र खरीद कर लाना कहा तक उचित है ? भेड़ की तरह एक को देखकर दूसरा भी उसके पीछे-पीछे चलने लगता है। क्या अपनी बुद्धि से काम न लेना मानवीय बुद्धि और विवेक का अप मान करना नही है।

बहिनें यह न समझें कि मारवाड़ मे कभी खादी आएगी ही नही। सूर्य निकलने पर तो जागना ही पड़ता है मगर पौ-फटने पर जागने वाला होशियार समझा जाता है।

भद्रा कहती है—इसी विचार से मैंने यह कबल अपने सबंधियों के घर नही भेजे। सबधियों के घर वैसी ही वस्तु भेजना चाहिए जैसी वे बदले में भेज सकते हों ऐसा न करने पर उनका अपमान होता है। राजा श्रेणिक के यहां न भेजने का भी कारण है। महाराज के भण्डार म कमी

तो कुछ है नही, फिर भी न मालूम क्या सोचकर उन्होने कम्वल नही खरीदे। उनके यहा कम्बल भेजना उनकी ऋद्धि और बुद्धि का अपमान करना है और कदाचित् कम्बल न लेती तो देश का और नगर का गौरव घट जाता। इस प्रकार का विचार करके मैंने कम्बल ले तो लिये, मगर सम्बन्धियो के घर और महाराज के घर नही भेजे।

हा, एक बात और रह गई। मैंने तुम्हे वह कम्बल क्यो नही दे दिये तुम मुझे बहुओ से कम प्यारी हो, इस-लिए तुम्हे नही दिये, यह बात नही है। बात यह है कि तुम्हे कम्बल दे देती तो तुम्हारे पैर बन्धन मे आ जाते। तुम आलस्य से घिर जाती और तुम्हारी कार्यशक्ति कम हो जाती। इसके अतिरिक्त उन्हे ओढ कर जहा तुम जाती, सेठानिया लज्जित हो जाती और टीका करती—दासी होकर भी इतनी शौकीन ? इस प्रकार सेठानियो को लज्जित होना पडता और तुम्हे टीका सुननी पडती।

मैंने सोचा—वहुए देवलोक के वस्त्र पहिनते-पहिनते कही मृत्युलोक को—अपने देश को तो नही भूल गई है ? दिव्य ऐश्वर्य को पाकर वे मेरी भक्ति को विस्मरण तो नही कर वैठी ? यह जानने के लिए ही मैंने कम्वल दिये हैं। कवल क्या फटे, उनका और मेरा भ्रम फटा है। कवलो को फडवा कर मैंने उनकी भावना की परीक्षा कर ली है। मैंने ऐसा न किया होता तो उनके प्रेम की परीक्षा कैसे होती ? और तुम्हे जो आश्चर्य हुआ था सो कैसे होता ?

❀❀

१६ चेलना की चाह

शालिभद्र की सभी पत्नियों ने आज यही कम्बल के टुकड़े ओढे हैं । आज उनके हृदय में कुतूहल है प्रीति है और अपूर्वता का आभास है । मनुष्य मिठाई खाते-खाते उकता जाता है तो चने खाने की इच्छा करता है और चने पाकर वह इतना प्रसन्न होता है कि मिठाई उसके सामने तुच्छ है । यही स्थिति आज शालिभद्र की पत्नियों की है।

कम्बल के टुकड़े ओढ कर वे सब शालिभद्र के सामने गईं । अपनी पत्नियों को सदा से विपरीत वस्त्र ओढ़ देख कर शालिभद्र ने हंसते हुए कहा—आज यह नवीनता कहाँ से आई । कम्बल क्यों ओढ़ रखे हैं ? क्या पिताजी के स्वर्ग में कपड़ों की कमी हो गई है ? मेरी पेटी तो नित्य की भांति ही मेरे पास आई है । क्या तुम्हारी पेटी आने में कोई गड़बड़ हो गई है ? अगर गड़बड़ थी तो कल वाले कपड़े ही क्यों न पहिन लिये ? लेकिन देवलोक से पेटियाँ आने में भूल नहीं हो सकती । जब मेरे पास आई है तो तुम्हारे पास क्यों न आई होगी ? पिताजी कभी भेदभाव नहीं कर सकते । तुम्हारे और मेरे बीच किसी प्रकार का मतभेद भी नहीं हुआ कि पिताजी तुम्हारे ऊपर रुष्ट हो जाए और पेटिया भेजना बन्द कर दे । फिर क्या कारण कि आज तुम सब यह कम्बल के टुकड़ ओढ़-ओढ़ कर आई हो ?

शालिभद्र की पत्नियाँ उसका प्रश्न सुन कर हंसने लगी । उनमें जो सबसे बड़ी थी वह कहने लगी—आप देवलोक के वस्त्रों को बहुत अच्छे और सुन्दर समझते हैं

पर यह वस्त्र वहुत प्रेम के हैं। इनमे बडा रहस्य छिपा है। देवलोक के वस्त्र तो न मालूम किस शक्ति से उतरते हैं, ससुरजी अपने हाथ से देने नही आते, लेकिन यह वस्त्र सासूजी ने स्वय अपने हाथ से दिये है। यह उनकी प्रसादी है। इन्हे पहिन कर हमें जो आनन्द मिला है, वह स्वर्गीय वस्त्रो से नही मिला।

शालिभद्र ने आश्चर्य के साथ कहा--क्या यह कपडे माताजी ने दिये हैं ? उन्होंने खरीदे हैं ? बिना आवश्यकता खरीदने की क्या वात थी ?

पत्नी ने कहा--इन कपडो के कारण देश की प्रतिष्ठा नष्ट होती थी और नगर की नाक कट रही थी। व्यापारी उदास होकर लौट रहे थे। कोई खरीददार नही मिलता था। सासूजी ने खरीद कर देश की और नगर की लाज रख ली है और व्यापारियो की चिन्ता मिटा दी है।

इतना कह कर शालिभद्र को पिछली घटना सुनाई गई। शालिभद्र को विस्मय हुआ कि माताजी कितनी दूरदर्शिनी है और उनका मातृभूमि के प्रति कितना गाढा प्रेम है।

सचमुच मातृभूमि की वडी महिमा है। 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'। अर्थात् मातृभूमि स्वर्ग से भी वढकर है। मित्रो ! भारत आपकी मातृभूमि है। राणाप्रताप ने अपनी मातृभूमि की महिमा समझी थी। वह अपनी मातृभूमि का दुलारा लाल था। माता की भक्ति के लिए वह १८-२० वर्ष तक अरावली की बीहड पहाडियो मे भटकता रहा और कष्ट पाता रहा, मगर जीते जी उसने मातृभूमि का अपमान नही होने दिया। मगर आज के

अधिकांश लोगों में यह भावना दिखाई नहीं देती। वह समझते हैं—जिसने जन्म दिया वह हमारी माता है। भूमि माता कैसे हो सकती है? उन्हें नहीं मालूम कि जन्म देने वाली तो सिर्फ माता ही है मगर जन्म भूमि बड़ी माता है जिसके अन्न-पानी से उनकी माता के शरीर का निर्माण हुआ है।

भारत आपकी मातृभूमि है। जो मातृभूमि की भक्ति के महत्त्व को समझेगा वह देवलोक के वस्त्रों को भी धिक्कार देगा।

अपनी स्त्री की बात सुनकर शालिभद्र लज्जित-सा हुआ। वह सोचने लगा—मेरी पत्नियों ने मेरी माता के प्रेम के महत्त्व को समझ लिया मगर मैं कब जानूंगा? मैं कब उस महत्त्व को समझूंगा? साथ ही उसे यह जान कर प्रसन्नता भी हुई कि मेरी पत्नियां मेरी माता पर गहरी आस्था और प्रेम भक्ति रखती हैं। यह सब धर्म का ही प्रताप है।

बिना अवसर के किसी बात की परीक्षा नहीं होती। सोने की कसौटी आग में तपाने पर ही होती है। शालिभद्र ने सोचा—स्वर्ग के वस्त्र पहिनने वाली स्त्रियों को यहां के वस्त्र पसन्द आ जाना इनके प्रेम की कसौटी है। स्वर्गीय अनुपम वस्त्रों के आगे कम्बलों के इन टुकड़ों को अधिक महत्त्व देना इनके प्रेम का परिचायक है। आज इन्हें इतना आनन्द हो रहा है जैसा पहले कभी नहीं हुआ था। इससे निश्चय हुआ कि मेरी पत्नियां सिर्फ कपड़े-लत्तों के लिए प्रेम नहीं करती। इनका प्रेम वास्तविक है—हार्दिक है।

आज की स्त्रिया होती तो कम्बल के टुकडे पाकर नाक भौंह सिकोडती और शायद जली-कटी सुनाने से भी न चूकती। मगर धन्य है उस शालिभद्र की स्नेहशीला पत्निया, जो स्वर्गीय वस्त्रो को भी तुच्छ समझ कर सास के दिये साधारण उपहार को अनमोल समझती है और उसे पाकर अपूर्व आनन्द अनुभव कर रही हैं।

शालिभद्र विचारने लगा—मेरी पत्निया तो माता के प्रति प्रेम की परीक्षा देकर उत्तीर्ण हो चुकी, मैं कब उत्तीर्ण होऊगा ? तैतीस परीक्षार्थियो मे से बत्तीस परीक्षा देकर उत्तीर्ण हो जावे और एक कारणवश परीक्षा न दे पावे तो उसके हृदय मे जैसी ग्लानि होती है, वैसी ही ग्लानि का अनुभव शालिभद्र करने लगा।

शालिभद्र की पत्नियो ने उस दिन वही कम्बल ओढे। दूसरा दिन हुआ। नित्य की भाति आकाश से फिर वस्त्रो और आभूषणो की पेटिया उतर आईं।

शालिभद्र की पत्निया आपस मे विचार करने लगी—स्वर्ग के कपडे पहिनते-पहिनते हमे इतने दिन हो गए, मगर उनसे हमने अपना ही तन ढका है। किसी को दान नहीं दिया। देवलोक के कपडे ठहरे, किसी को दे दें तो उसे पहनने मे लज्जा होगी, क्योकि ऐसे कपडे पहिनना उसकी हैसियत के बाहर है। सभी लोग उसकी ओर उ गलीउ ठाए गे।

मैन्चेस्टर का मलमल आप शौक से पहनते है। अगर आप किसी श्रमजीवी को वह दे दे तो वह बेचारा क्या करेगा ? ऐसे कपडे गरीबो को देना उन्हे गडहे मे गिराना है। उन्हे तो मोटी खादी चाहिए। वही उनके काम आ

सकती है।

शालिभद्र की पत्नियां सोचने लगीं—अब तक तो कपड़ों को देने की अनुकूलता ही नहीं थी आज अनुकूलता है। यह कम्बल किसी को दिये जाए तो अच्छा होगा। फेंक देने से क्या लाभ है? यह मर्त्यलोक के वस्त्र हैं वे देने में कोई हानि भी नहीं है।

इस विचार से सबको प्रसन्नता हुई। उन्होंने कहा—सासू के हाथ का प्रेम का कपड़ा दूसरों से भी प्रेम उत्पन्न करेगा यह बड़े आनन्द की बात है। मगर प्रश्न यह है कि दिये किसे जाए? घर में दास-दासियों की संख्या इतनी है कि एक-एक टकड़ा भी उनके पल्ले न पड़ेगा। फिर भी किसे दें और किसे न दें? तो जिस प्रकार इन कम्बलों से सासू ने अपनी परीक्षा की है उसी प्रकार हम लोग किसी की परीक्षा करें। ऐसा करने से दान भी हो जाएगा और यह परीक्षा भी हो जाएगी कि अपने घर में किसी की नीयत तो खराब नहीं हो जाएगी क्योंकि जब तक अपनी नीयत खराब न होगी तब तक नौकरों की भी नीयत खराब नहीं होगी। अगर हम में धर्म है हमारा धर्म छूटा नहीं है तो अपने घर में रहने वालों मे और घर आने वालों म भी धर्म रहेगा। उनका धम नहीं छूटेगा। उनकी नीयत म तब तक खराबी नहीं आ सकती जब तक अपनी नीयत में खराबी नहीं आई है। अगर अपने घर में रहने वालो की नीयत खराब हो जाय तो उसका प्रायश्चित हम करना चाहिए।

इस विचार से वे प्रसन्न हो उठीं। उन्हें अपने धम की परीक्षा करने म किसी प्रकार की हिचकिचाहट नहीं

हुई । सब कहने लगी–मैं अपने धर्म की परीक्षा करूगी ।

निर्णय हुआ कि कम्बलो को चौक मे उतार कर डाल दिया जाय । अगर बिना पूछे कोई ले जाय तो समझना चाहिये कि हमारे भी धर्म मे कमी है ।

सब ने स्नान किया और देवलोक के कपडे पहन लिये । उतरे हुए कम्बल चौक मे डाल दिये गये । सब से पहले रास्ते मे झाडू लगाने के लिए भगिन चौक मे गई । कम्बल के बत्तीसो टुकडे एक जगह पडे हुए अद्भुत प्रकाश कर रहे थे । भगिन उस प्रकाश को देखकर चोकी कि कही आग तो नही लग रही है । डरती-डरती वह नजदीक गई । नजदीक जाने पर मालूम हुआ कि यह कम्बल हैं । उसने सोचा—किसी महारानी के कपडे गिर गये दीख पडते हैं ।

यह भगिन उस जाति की स्त्री है जिसे लोग हीन समझते है । फिर भी वह इतनी निष्ठावान् है कि बीस लाख मोहरो की कीमत के कपडे सामने पडे देखकर भी उसकी नीयत मे फर्क नही आया । अभी प्रकाश भी नही हो पाया है और देखने वाला भी कोई नही है । वह उठाकर चल दे तो कौन रोकने वाला है ? वह कम्बलो को घर पर रखकर फिर काम पर आ सकती है । अभी समय भी काफी हैं । फिर भी वह स्वामी-सेवक के व्यवहार को भली-भाति समझती है । उसने कम्बल नही उठाये । उसने सोचा—ये कपडे मेरे योग्य नही है और इन पर मेरा अधिकार भी नही है । ये स्वामी के जान पडते हैं । उन्हे सूचना देना ही उचित है । ठीक ही हुआ कि मैं पहले ही आ पहुची । दूसरा आता तो क्या ठिकाना था कि वह इन्हें छोडता या उठा ले जाता । फिर शायद मैं बदनाम

होती । अब इन वस्त्रों को स्वामी के घर पहुंचा देना उचित है ।

शालिभद्र की पत्नियां अपने-अपने महल के झुज्जे में बैठी भंगिन की चेष्टाएं देख रही थी और हंस रही थी। इतने में भंगिन द्वार पर आ गई । उसने पुकार कर कहा जरा देखिए तो सही यह क्या है ? भंगिन की आवाज सुनकर उन्होंने बाहर की ओर देखा । भंगिन ने अपने भाग्य की सराहना करते हुए कहा—भला हो इन कपड़ों का जिनकी बदौलत आज इन देवियों के दर्शन हुए। उसने प्रकट में कहा—जरा नजर तो कीजिये ये कपड़े कैसे पड़े हैं ?

शालिभद्र की पत्नियों ने कहा—चलो अपनी परीक्षा हो गई । हम में धर्म है इसी से इस भंगिन की नीयत नहीं बिगड़ी । नहीं तो यह उठाकर चम्पत हो सकती थी ।

शालिभद्र की पत्नियों में से एक ने कहा—ले जाओ ले जाओ ये तुम्हारे लिये पड़े हैं।

मेहतरानी सोचने लगी मैं चुपचाप उठा ले जाती तो चोरी के पाप में डूबती । मेरा धर्म चला जाता ।

लेकिन मेहतरानी को सहसा विश्वास न हुआ कि वास्तव में ये कीमती वस्त्र मेरे लिए डाल दिये गये हैं । उसने सोचा—शायद मजाक किया गया है । यह सोचकर वह सेठानियों के चेहरे का भाव तोड़ने के लिये उनकी ओर देखने लगी । पर उनके चेहरे पर हास्य का कोई लक्षण उसे दिखाई न दिया । तब उसने कहा—सचमुच ये मेरे लिए हैं ? सेठानियों ने कहा—हाँ हां तुम्हारे लिये तो है ही । ले जाओ और कोई पूछे तो हमारा नाम ले लेना ।

मेहतरानी के प्रमोद का पार न रहा। उसे जैसे कुवेर का कोष मिल गया हो! उसने सोचा—पहले अपना काम निपटा लू और तब ये वस्त्र ले जाऊगी। पुरस्कार पाकर काम मे ढील देना उचित नही है। यह सोचकर उसने चौक बुहार डाला।

छोटी समझी जाने वाली कौमो मे आज भी जितनी ईमानदारी देखी जाती है, उतनी वडी समझी जाने वाली कौमो मे है या नही, यह कहना कठिन है। एक गृहस्थ एक वार शौच जाने के इरादे से स्टेशन से वाहर निकले। स्टे-शन के वाहर ही पाखाना वना हुआ था। मगर वह पाखाने मे शौच नही जाना चाहते थे। उन्होने भगी से पूछा—कही वाहर टट्टी जाने की जगह भी है? भगी ने एक मैदान वत-लाते हुआ कहा–आप वहा टट्टी हो आइए। मै वुहार लू गा। वह चले गये और जब लौटकर आये तो भगी को एक-दो आने पैसे देने लगे। भगी ने कहा--पाखाने मे टट्टी जाने वालो से एक पैसा और मैदान मे जाने वालो से दो पैसा लेने का नियम है। मैं नियमानुसार आपसे दो पैसे ले सकता हू न कम और न ज्यादा। उन गृहस्थ ने कहा—अच्छी बात है। मैं तुझे पुरस्कार के रूप मे ज्यादा देता हू, ले ले। तव भगी बोला—आज आपसे पुरस्कार ले लू गा तो मेरी नीयत ठिकाने नही रहेगी और फिर मैं सभी से पुरस्कार की आशा रखने लगू गा। इस कारण मैं नियत रकम से ज्यादा नही ले सकता।

यह वृत्तान्त पैसे देने वाले भडारी जोरावरमलजी ने स्वय ही मुझे सुनाया था। जव एक गरीव भगी की भी यह नीयत है तो उन वहिनो और भाइयो से क्या कहा

जाय भी मोटरों और घोड़ागाड़ियों के निमित्त तो सैकड़ों ही नहीं हजारों रुपये उड़ा देते हैं किन्तु धर्म के नाम पर, खरीदने की शक्ति होते हुए भी दो पैसे की चीज के लिये हाथ फैला कर कहते है—हमें दो हमे दो। तात्पर्य यह है कि कई एक मालदारो की भी निष्ठा वैसी नही रहती जैसी उस गरीब मेहतर की थी। यह क्या उचित कहा जा सकता है ? कोई वात्सल्य भाव से भेंट दे यह बात दूसरी है लेकिन मुह से मांग कर लेना कितनी बेहूदी बात है। जिसकी निष्ठा ही ठिकाने नही है वह धर्म की सेवा कैसे करेगा ?

जो व्यक्ति धर्म मे निष्ठा स्थापित करना चाहता है उस आकांक्षा पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। एक भंगिन ने भी जिसे आप नीच जाति समझते है लाखों सौनैयो की कीमत के माल पर नीयत नही बिगाड़ी और न मुह से याचना की तो जो लोग उच्च कुल में जन्मे है उन्हे विशेष रूप से इस ओर ध्यान देना चाहिए।

आज के लोग तो इनाम-इकरार पाकर काम खराब कर देने की भी परवाह नही करते परन्तु उस भंगिन ने माल बहुत प्रेम से बुहारा।

भारतवर्ष में सभी वर्ण वाले अपने वर्ण पर रहे हैं किन्तु उनका आपस मे प्रेम अवश्य रहा है। अर्थात् राजा का प्रेम भंगी पर भी रहा है और भंगी का प्रेम राजा पर रहा है। कोई किसी से घृणा नही करता था। इसी कारण भारत की सामाजिक व्यवस्था सुचारु रूप से चलती रही है।

अपना नियत कर्त्तव्य वजाने के वाद भगिन कम्वलो को लेकर अपने घर गई। उसने विचार किया—ये कपडे मिले है तो इनका उपयोग भी कर लेना चाहिए। यह विचार कर उसने वत्तीस टुकडो मे से एक टुकडा ओढ लिया और झाडू तथा टोकरी लेकर राजद्वार झाडने चल दी। जिस कपडे को राजा श्रेणिक भी नही खरीद सके इसे ओढ कर भगिन आज मेहतरानी वन गई।

भगिन मेहतरानी कहलाती है। सोचने की वात है कि अगर वह नीच काम करती है--जैसा कि लोग मानते है, तो उसे यह पदवी क्यो दी गई है ?

भारत ने भगी को सफाई का काम किस तत्त्व की प्रेरणा से सौंपा होगा, यह कहना कठिन है। विनीता नगरी जव वसी थी तव भगवान् ऋषभदेव ने भगियो का वर्ग किसलिए वनाया ? उस वर्ग को यह नीच काम क्यो सौंपा ? और सबसे वडी वात तो यह है कि उस वर्ग ने यह स्वीकार ही क्यो किया ? अगर आज स्त्रियो को समझाया जाय कि वालक की अशुचि उठाना बुरा है—घृणित है तो उन्हें उस काम से घृणा हो जायगी। इसी कारण जव रोगी की सेवा करने का अवसर आता है तो सेवा करने वाली को भाग्यवान् आदि ऊंचे विशेषणो से सवोधित किया जाता है, जिससे कि सेवा करने वाली को अपने कार्य के प्रति घृणा न हो और हर्षपूर्वक वह काम करे। इसी प्रकार भगियो को न जाने क्या कह कर यह काम सौंपा गया होगा ? इसी कारण भगी को महत्तर-पद दिया गया है—नीचतर पद नही दिया गया है।

कम्वल ओढ कर मेहतरानी वाजार मे होकर गई

और राजा के द्वार के सामने झाड़ने लगी। रास्ते में जिस किसी ने उस रत्न–कम्बल ओढ़े देखा उसकी दृष्टि उस पर ठहर गई। सब ने सोचा उसे ठहरा कर कबल के विषय में पूछताछ करें। मगर उसने उत्तर दिया—मुझे काम करना है। देरी हो गई है। इस समय ठहर नही सकती और वह बिना ठहरे चलती गई है। लोग चकित रह गये कि जिस रत्न कम्बल को महाराजा श्रेणिक भी नही खरीद सके थे वह मेहतरानी के पास कसे आ गया ? किसी ने कहा कफन का होगा। दूसरे ने उत्तर दिया इसे खरीदा ही किसी ने था कि कफन में इसे मिला होगा।

सबेरा हो चला था। महारानी चेलना अपने महल के झरोखे में बठी प्रात कालीन शोभा का निरीक्षण कर रही थी। उसी समय मेहतरानी झाड़ने के लिये पहुची। महारानी की दृष्टि तत्काल उस पर पडी और कम्बल देखकर वह आश्चर्य में डूब गई। रानी को यह पहिचानते देरी न लगी कि यह वही कम्बल है जो दरबार में बिकने आया था और मैंने एक कम्बल खरीदने के लिये महाराजा से निवेदन किया था मगर यह बहुमूल्य कम्बल मेहतरानी के पास कैसे आ गया ?

कई लोग भगिन के पास खड़ होकर उसी कम्बल के विषय मे पूछताछ कर रहे थे। भंगिन परेशान थी और शायद सोचती थी कि ये लोग कैसे निकम्मे है जो अपना–अपना काम छोड़ कर यहा जमा हुए है। मैं अपना काम नियत समय पर न करती अर्थात जल्दी शालिभद्र के घर की तरफ न जाती तो य कम्बल कैसे मिलते ?

आखिर महारानी ने मेहतरानी को आवाज दी।

मेहतरानी सोचने लगी—आखिर इस कम्वल के प्रताप से ही आज मुझे महारानी के दर्शन करने का सौभाग्य मिल रहा है। फिर उसने कहा—'जी अन्नदाताजी।'

महारानी ने किंचित् रुखाई प्रकट करते हुए पूछा—सच वता यह कम्वल कहा से लाई ?

मेहतरानी—अन्नदाता, मैं चोरी करके तो ऐसी चीज ले ही कैसे सकती हू ? आप सरीखे किसी दाता से मुझे मिल गया है।

महारानी—इसे देने वाला दयालु कौन है ?

मेहतरानी—मैं पहले-पहल शालिभद्र के यहा झाड़ू लगाने जाती हू। वहा मुझे ऐसे-ऐसे वत्तीस कम्वल मिले है।

महारानी—तूने ऐसा क्या काम किया था कि इतने कम्वल इनाम मे पाये ?

मेहतरानी—वही जो आपके यहा करती हू।

महारानी—सच-सच कह देना, चुराकर तो नही ले आई है ?

मेहतरानी—महारानीजी, चुराकर लाती तो क्या वाजार मे ओढकर निकलती ?

भगिन की वात सुनकर महारानी सन्नाटे मे आ गई। उसका चेहरा उदास हो गया। सोचने लगी—ओफ ! मैं महारानी होकर भी जिस वस्तु से वचित रह गई वही मेहतरानी को अनायास प्राप्त हो गई ! जिसके घर ऐसे वहुमूल्य कवल भगिन को दे दिये जाते हैं, उसके यहा कैसे

कपड़े पहने जाते होंगे !

रानी उदास होकर वहां से चल दी। पास बड़ लोग सोच रहे थे कि व्यापारियों के पास कुल सोलह कंबल थे। जिसने सोलहों कंबल खरीद कर और एक-एक के दो-दो टुकड़े करके भगिन को दे दिये वह कितना भाग्यवान पुरुष होगा।

सारे नगर में आज यही चर्चा थी। जो सुनता आश्चर्य करता और सोचता इतनी सम्पत्ति शालिभद्र के पास कहां से आई होगी? लेकिन वे लोग कुछ भी निश्चय न कर सके।

रानी मन ही मन बहुत खीझी। इस खीझ को प्रकट करने के उद्देश्य से वह कोपभवन में चली गई। वह अपने आपको धिक्कारती और सोचती थी कि—मैं मगध की साम्राज्ञी कहलाती हू फिर भी एक रत्न-कम्बल नहीं पा सकी और एक मामीक भगिन उसे ओढ़े फिर रही है। ऐसी दशा में महारानी कैसे रही !

महाराजा श्रेणिक को सूचना दी गई कि आज महा रानीजी उदास होकर कोपभवन में है। श्रेणिक ने सूचना पाकर सोचा—रानी प्रजा की माता है। उसका उदास रहना उचित नही है। यह सोचकर श्रेणिक रानी के पास आये और उन्होंने उदासी का कारण पूछा।

रानी ने कहा—मैंने आपसे एक रत्न-कम्बल खरीदने की प्रार्थना की थी। मगर आपने उस प्रार्थना को स्वीकार नही किया। आपने सोचा होगा इतनी रानियों में एक रत्न-कम्बल लेने से आपस में तकरार होगी। यह विचार

कर आपने एक भी कम्वल नही लिया । मै मानती हू कि राजा का कोष प्रजा के कठिन परिश्रम से भरता है और अनेक कम्वल खरीदना-प्रजा के प्रति अन्याय होता । लेकिन एक कम्वल खरीद लेना तो कोई वडी वात नही थी । क्या आप नही जानते कि हम सव रानिया आपस मे हिल-मिल कर रहती हैं । एक कम्वल खरीदने से हमारी परीक्षा भी हो जाती । या तो हम एक-एक दिन उसे ओढ लेती या फिर जिसे आपकी इच्छा होती उसी को आप दे देते । मगर एक कम्वल तो ले लेना ही उचित था । वेचारे व्यापारी वडी आशा लेकर मगध की राजधानी मे आये थे । वे निराशा लेकर लौटे । इससे राज्य की प्रतिष्ठा और मर्यादा को क्या क्षति नही पहुची है ? इसके अतिरिक्त देश के कला-कौशल को इससे कितनी हानि पहुचेगी, आपने यह भी सोचने का कष्ट नही किया । आपके लिये धन इतना मूल्यवान हो गया कि उस पर आपने राज्य की प्रतिष्ठा को, कला-कौशल के उत्कर्ष को और पटरानी की साध को भी निछावर कर दिया ।

राजा श्रेणिक हठीले पुरुष नही थे कि अपने पुरुषत्व के अभिमान मे आकर पत्नी की उचित वात को भी अस्वीकार कर देते । वस्तुत पत्नी के समुचित परामर्श को स्वीकार कर लेने जितनी उदारता तो पति मे होनी ही चाहिये । यद्यपि रानी के कथन मे उलहने की प्रधानता थी, फिर भी उस उलहने मे जो परामर्श छिपा था उस पर श्रेणिक का ध्यान गया । उन्होंने कहा—महारानी मुझसे भूल अवश्य हो गई है । पर उसका प्रतिकार भी हो सकता है । उन व्यापारियो को बुलाकर एक कम्वल खरीद लू गा ।

राजा ने उसी समय व्यापारियों को बुला लाने का आदेश दिया। व्यापारी अपने ठहरने की जगह अपने धन-माल की हिफाजत में लगे हुए थे। इसी समय राजा के आदमी वहाँ जा पहुँचे। उन्होंने राज-दरबार में उपस्थित होने की राजाज्ञा उन्हें सुनाई। राजा का आदेश सुनकर व्यापारी चिन्ता में पड़ गये। सोचने लगे—क्या राजा चुंगी मांगना चाहता है? हमने सुना था राजा श्रेणिक धर्मराज्य करते हैं और उनके राज्य में चुंगी नहीं ली जाती। फिर क्या हमसे चुंगी ली जाएगी?

व्यापारी अनमने भाव से राजा के पास पहुँचे। राजा ने उनसे कहा—तुम लोग जो कम्बल लाये थे उस समय तो जचे नहीं थे। मगर महारानी की इच्छा एक कम्बल खरीदने की है। इसलिए एक कम्बल दे दो और उसका मूल्य कुछ अभी ले लो कुछ फिर ले लेना।

राजा के खजाने में किसी प्रकार की कमी नहीं थी। फिर भी उसने व्यापारियों की परीक्षा करने के उद्देश्य से यह कह दिया कि कीमत का कुछ भाग अभी और कुछ फिर से लेना। राजा ने सोचा—ये व्यापारी परदेश से आये हैं। देखना चाहिए इनके मन में मगध के प्रति विश्वास है या नहीं? एक व्यापारी ने कहा महाराज आप मगध के पुण्यशाली सम्राट हैं। कम्बलों की कीमत कहीं डूब नहीं सकती यह बात हम भली भांति समझते हैं। मगर अब सब कम्बल बिक चुके हैं और उनकी कीमत भी हम लोग पा चुके हैं।

राजा श्रेणिक व्यापारी की बात सुन कर दङ्ग रह गये। कहने लगे क्या इस नगर में ऐसा भी कोई ऋद्धि-

शाली है जो वह रत्न-कम्वल खरीद सके ।

व्यापारी—हा महाराज ! आपके राज्य मे ऐसे-ऐसे सम्पत्तिशाली मौजूद है जो एक क्या सोलह रत्न-कम्वल खरीद सकते है। शालिभद्र ऐसे ही श्रीमान् हैं। उन्हे घर के काम-काज की चिन्ता ही नही है। उनकी माता ने उन्हे इस चिन्ता से परे ही रख छोडा है। हम लोगो ने उन्हे देखा भी नही। पर हमारे सभी कम्वल उनके यहा खरीद लिए गए हैं और उनका मूल्य भी हमे चुका दिया गया है ।

'शालिभद्र' ! यह कौन-सा नया सेठ है, जिसे मैं पहिचानता भी नही ! राजगृह के सभी वडे-वडे सेठ मेरे यहा आते जाते है, मगर शालिभद्र तो कभी आया नही जान पडता ।

राजा सोचने लगे—मै राज्य का स्वामी हू। सव ऋद्धिया मेरे सामने उपस्थित रहती हैं। लेकिन मैं एक भी कम्वल न खरीद सका और मेरे एक ही प्रजाजन ने सोलह कम्वल खरीद डाले ! मैं एक सेठ का मुकाविला नही कर सका ! अव भी मुझे अपनी ऋद्धि का गर्व हो तो वह मिथ्या गर्व है ।

राजा ने व्यापारियो को विदा किया और वह रानी के पास पहुचे। समस्त वृत्तान्त सुना देने के पश्चात् राजा ने कहा—महारानी, आश्चर्य यही है कि मैं राजा होकर भी एक कम्वल नही खरीद सका और एक ही सेठ ने सोलह कम्वल खरीद लिये।

रानी मन ही मन कहने लगी—अभी तो इन्हे खरीदने की वात पर ही आश्चर्य हो रहा है, परन्तु जब यह

सुनेंगे कि वे सब कम्बल भंगिन को दे दिए गए तो कैसा मालूम करेंगे ?

राजा आगे बोले—शालिभद्र के घर सोलह कम्बल खरीदे गये हैं तो उनमें से एक कम्बल मोल खरीदा जा सकता है। उसे नगद कीमत चुका दी जायगी। वह चाहेगा तो नफा भी दे देंगे।

क्या राजा का नगर में कोई विश्वास नहीं करता था जो उन्हें कहना पड़ा कि उसे नकद कीमत चुका दी जायगी ? वास्तव में बात यह है कि बुद्धिमान् लोग आपस में उधार का लेन-देन नहीं रखते। इससे स्नेह-सम्बन्ध कायम रहता है और प्रीति टूटने का अवसर नहीं आता। इसी अभिप्राय से राजा ने नकद कीमत दे देने की बात कही है।

राजा श्रेणिक अगर आजकल के राजाओं के समान होता तो घर में सोना पहिनने की निषेधाज्ञा के समान रत्न कम्बल न ओढ़ने की आज्ञा जारी कर सकता था। मगर प्राचीनकाल के राजा कृत्रिम उपायों से अपनी मर्यादा रखने का प्रयत्न नहीं करते थे। यही कारण है कि उनकी जो मान-मर्यादा थी उसका शतांश भी आज के राजाओं को प्राप्त नहीं है।

राजा श्रेणिक का भेजा हुआ सेवक भद्रा के घर पहुंचा। भद्रा को सूचना दी गई। भद्रा विचार करने लगी—आज तक कभी राजा का आदमी यहां नहीं आया। आज उसके आने का क्या कारण हो सकता है ? मेरे यहां न किसी का लेन-देन है और न मैंने किसी की फरियाद ही की है। हमारे खिलाफ भी किसी की कोई शिकायत नहीं हो

सकती। लेकिन उनकी छत्र-छाया मे रहते है। वह मालिक हैं। उनका आदमी आया है तो सौभाग्य की बात है।

भद्रा ने राजा के आदमी को सत्कार के साथ भीतर लाने का हुक्म दिया। जब सामने आया तो भद्रा ने उचित आदर करके उसके आने का कारण पूछा।

भद्रा—सौभाग्य की वात है कि आज हमारे महाराज ने हमे याद किया है। कहो, महाराज की क्या आज्ञा है?

आदमी—सुना है, आपके यहा रत्न कम्बल खरीदे गये हैं। महारानी जी आज हठ चढ गई है। उनका कहना है कि कम्वल न लेने से उसका अपमान हुआ है। अतएव महाराज ने मुझे आपके पास भेजा है कि कम्बल नकद लागत मूल्य मे या कुछ नफा लेकर दे दें।

भद्रा—वस, इसलिए भेजा है।

भद्रा सोचने लगी—महाराज ने कम्वल मगाया है। और वह भी नकद दाम चुका कर! दरअसल वे अन्तर्यामी हैं। वे हृदय से हृदय की भावनाए पहिचानते है। वे हुक्म देकर भी कम्बल मगवा सकते थे, मगर वाह रे दयालु राजा। उन्होने सोचा होगा—यो ही हुक्म देकर कम्बल मगवाने से भद्रा को दु ख होगा। उन्होने मेरी हृदय की भावनाओ को पहिचान लिया है। इसी कारण तो नकद कीमत चुकाने की वात कहला भेजी है।

मित्रो! आपको भी अन्तर्यामी वनना चाहिये। कम से कम अपनी स्त्री के अन्तर्यामी तो वनना ही चाहिये। पति को पत्नी का और पत्नी को पति का हृदय तो पहिचानना ही चाहिये। दोनो को एक-दूसरे की भावनाओ को समझना और उनकी कद्र करना चाहिए। मगर इस ओर

कौन ध्यान देता है ? पत्नी को वस्त्रों और आभूषणों की चिन्ता से अवकाश नहीं और पति विषय भोग में फंसा रहता है । कौन जिसके अन्तरंग को पहिचाने ? पति-पत्नी गुरु-शिष्य और राजा प्रजा अगर हृदय से हृदय को पहिचानने का प्रयत्न करें तो किसी प्रकार की गड़बड़ ही क्यों हो ?

भद्रा सोचती है – जो राजा अपनी प्रजा की भावनाओं का सम्मान करता है उसके लिए प्रजा तन मन धन निछावर कर दे तो कौन बड़ी बात है ! प्रजा के स्वामी होकर भी महाराज नकद दाम देकर कम्बल मगा रहे हैं इसी से प्रकट है कि व किसी को सताना नहीं चाहते । ऐसे अन्तर्यामी राजा के लिए मैं प्राण भी निछावर कर सकती हू कम्बल की तो बात ही क्या है ?

भद्रा ने राजा के आदमी से कहा—आप महाराज का सन्देश लेकर आए सो अच्छा हुआ । मगर मेरे यहां बहूए ऐसी सुकुमार हैं कि यहां का बारीक से बारीक और मुलायम से मुलायम वस्त्र भी वे नहीं पहिचान सकती । ऐसे वस्त्रों से भी उनका शरीर छिलता है । ऐसी दशा में उनसे कम्बल नहीं ओढे जा सकते थे ।

आदमी—आश्चर्य है देवी ! अगर ऐसा है तो आपकी बहुए क्या पहिनती है ?

भद्रा—बहुए देव-वसन पहिनती है । मेरे पति देव हुए हैं । वे कृपा करके देव-वसन देते हैं । उन्ही को बहुए पहिनती है । मैंने यह कम्बल सिर्फ नगर की प्रतिष्ठा कायम रखने के लिये ही खरीद लिए थे । उन्हे खरीदते ही प्रत्येक कम्बल के दो-दो टुकड़े करवा लिए थे और बहुओं को बाँट

दिये थे। वहुओ ने प्रेम के साथ मेरे हाथ से कम्बल ले लिए, मैंने गनीमत समझी। उन्होने शायद ही उन्हे ओढा हो। स्नान करके शरीर पौंछ कर निर्माल्य वस्त्रो मे डाल दिया होगा। अव विचारणीय वात तो यह है कि निर्माल्य वस्तु महाराज को कैसे भेट करू ?

निर्माल्य वस्तु न देने के भद्रा के कथन मे रहस्य है। उसे समझना होगा। आजकल के लोग प्राय झूठी चीज दूसरो को देकर उनका अपमान करते हैं। मगर ऐसा करना मनुष्यता की अवहेलना करना है। भद्रा के कथन मे एक रहस्य यही है। दूसरा रहस्य यह कि मानव-शरीर कैसा ही सुन्दर क्यो न हो, वह पवित्र वस्तु को भी अपवित्र बना देता है। शरीर के ससर्ग से उत्तम से उत्तम वस्तु भी घृणित हो जाती है। अतएव मनुष्य उत्तम आभूपण पहनने, वढिया वस्त्र धारण करने अथवा सरस भोजन करने से ही उत्तम नही हो सकता, वरन् श्रेष्ठ कर्त्तव्य करने से ही श्रेष्ठ वनता है। लोग अहकार मे पडकर धर्म को भूल जाते हैं, परन्तु कल्याणकारी तत्त्व की ओर कभी ध्यान नही देते। भद्रा सेठानी को इन वातो का ज्ञान था। इसी कारण वह निर्माल्य वस्तु न देने के लिए कह रही है।

निर्माल्य का अर्थ है—काम मे आई हुई अपवित्र वस्तु। सवा लाख स्वर्ण-मोहरो के मूल्य का वस्त्र शरीर पर ओढा गया तो शरीर ने उसकी कद्र वढाई या घटाई ?

'घटाई !'

मनुष्य-शरीर जव ऐसा है तो फिर लोग किस विचार

से मूछों पर ताव देते हैं ! क्या वस्तु को बिगाड़ने वाले ही मूछों पर ताव दिया करते हैं ! सरस से सरस भोजन को भी विष्टा बना देने वाले और वस्त्रों को निर्माल्य कर देने वाले भी मूछों पर ताव देते हैं । इस पर मनुष्य को लज्जित होना चाहिये या मूछो पर ताव देना चाहिये ? भद्रा कहती है—महाराज को निर्माल्य वस्त्र दू तो कैसे दू ?

मित्रों ! जब राजा को भी अशुद्ध वस्तु नही चढ़ती तो भगवान् को कैसे चढ़ेगी ?

> देहो देवालय प्रोक्तो जीवो देव सनातन ।
> त्यजेदज्ञाननिर्माल्य सोऽहं भावेन पूजयेत् ॥

तुम्हारा शरीर देवालय है । इसमें चिदानन्द आत्मा देव विराजमान है । अज्ञान निर्माल्य है । आप भगवान् को निर्माल्य अज्ञान कैसे चढाते है ?

अज्ञान क्या है ? यही कि हम जो मार रहा है उस मारने वाले को हम अपना शत्रु समझते है यही अज्ञान है । यह अज्ञान भगवान् को नही चढ सकता । ऐसे अवसर पर ज्ञान की शरण लेना ही भगवान् की सच्ची पूजा है इस प्रकार की पूजा करने वाले आत्म—स्मरण के द्वारा परम कल्याण के पात्र बनते हैं ।

भद्रा को पता नही था कि वहुओं ने कम्बल भंगिन को दे दिए हैं । उसका अनुमान था कि उन्होने शरीर पोंछ कर कम्बलो को निर्माल्य वस्त्रो में डाल दिया होगा । इसी कारण भद्रा ने राजा के आदमी को यह उत्तर दिया ।

भद्रा का उत्तर सुनकर वह चकित रह गया और भद्रा के घर से चल दिया ।

भद्रा के घर से लौट कर आदमी जव राजा के पास पहुचा, उस समय राजा, रानी चेलना के भवन मे थे । दोनो कम्वलो की ही चर्चा कर रहे थे और आदमी के लौटने की प्रतीक्षा कर रहे थे । आदमी को खाली हाथ आता देखकर राजा को आश्चर्य हुआ । वह सोचने लगा—क्या शालिभद्र ने नकद दामो पर भी कम्वल देना स्वीकार नही किया ! क्या मेरा प्रताप इतना घट गया है ? प्रजा को तो उचित है कि वह मेरी आज्ञा पाकर ही वस्तु दे दे, मगर नकद कीमत और नफा पर भी क्या कम्वल देने को शालिभद्र तैयार नही हुआ ? क्या मेरा भाग्यफल इतना निर्वल हो चुका है ?

आदमी के आने पर राजा ने पूछा—कम्वल नही लाये ?

आदमी ने कहा—सेठानी भद्रा ने वडी प्रार्थना के साथ कम्वलो के विषय मे जो निवेदन किया है, उसे सुनिये । उन्होने कहा कि नगर की प्रतिष्ठा के लिये मैंने सोलह कम्वल खरीदे थे । उनके वत्तीस टुकडे करवा डाले थे ।

राजा ने आश्चर्य के साथ कहा—रत्न-कम्वलो के टुकडे करवा डाले । क्यो !

आदमी—सेठानी ने कहा कि मेरे यहा वत्तीस वहुए हैं । मेरे लिए सव समान हैं, कोई प्रिय और कोई अप्रिय नही है । अत सव को वरावर वटवारा करने के लिए वत्तीस टुकडे करवाए थे ।

राजा—अच्छा, तो देने के लिए क्या कहा ! एक या

दो टुकड़े ही क्यों नहीं दिये ?

आदमी—भद्रा ने कहा कि मेरी बहुए देवलोक के वस्त्र पहिनती है। उन्हें कम्बल कब पसन्द आने लगे !

राजा—क्या कहा देवलोक के वस्त्र पहिनती है !

रानी ने नौकर की बात सुनकर अपने आप को धिक्कारते हुए कहा—हम एक कम्बल के लिए तरसती हैं और चाहती है कि एक मिल जाय तो सब रानियां कभी कभी ओढ़ लिया करें और उसकी बहुओं को वे कम्बल पसन्द नहीं है ! हमारा रानी होने का गर्व एकदम मिथ्या है।

राजा ने पूछा—जब भद्रा की बहुओं को कम्बल पसन्द नहीं है और वे उन्हें नहीं ओढ़ती है तो फिर एक कम्बल या उसका एक टुकड़ा देने में क्या हर्ज था ?

आदमी—सेठानी ने एक-एक टुकड़ा अपनी बहुओं की परीक्षा के लिये दिया था। बहुओं ने उन्हें प्रेम-पूर्वक ले लिया और इस प्रकार अपनी सास के प्रति आदर प्रकट किया।

उन्होंने अपने व्यवहार से प्रकट कर दिया कि देवलोक के वस्त्र पहिनने पर भी वे अपनी सास की अवहेलना नहीं करतीं। इस प्रकार बहुओं ने वह कम्बल प्रेमपूर्वक ले तो लिए, मगर ओढ़े नहीं होंगे। जैसे प्रतिदिन पहिने हुए कपड़े उतार कर निर्माल्य वस्त्र भण्डार में डाल दिए जाते हैं उसी प्रकार कम्बल भी शरीर पोंछकर भण्डार में डाल दिये होंगे। अतएव भद्रा ने प्रार्थना की कि निर्माल्य वस्त्र मैं अपने महाराज को कैसे दे सकती हूं ?

सेवक की बात सुनकर राजा और रानी के आश्चर्य

का ठिकाना नही रहा। राजा ने रानी की ओर एक खास तरह की नजर से देखा, जिसका आशय यह था कि क्या निर्माल्य वस्त्र भण्डार मे से भी कम्बल मगवा ले ?

रानी सोचने लगी—इन निर्माल्य कम्वलो ने तो हमको ही निर्माल्य वना दिया।

राजा और रानी आपस मे कहने लगे अपना सुकृत सभालो ! हम लोग तो एक कम्वल के लिए तरस रहे है और भद्रा के घर सोलह कम्वलो के वत्तीस टुकडे कर दिये गए। और फिर वे निर्मालय वस्त्रो मे फेक दिये गये। उनके और अपने पुण्य की तुलना करो। रानी कहने लगी मैं रानी हू, मगध के विशाल साम्राज्य की स्वामिनी कह-लाती हू और भद्रा मेरे राज्य मे रहने वाली प्रजा है। फिर भी उसका सुकृत देखकर आज मैं निर्माल्य वन गयी हू। मुझे खयाल आ रहा है कि सवा लाख स्वर्ण-मोहरो के मूल्य का वस्त्र भी जिस शरीर को छूकर निर्माल्य हो गया तथा शरीर पर पडने के कारण मै अव उसे नही ले सकती, किन्तु घृणा करती हू, वह शरीर कैसा है ? आत्मन् ! तू किस शरीर मे भूला हुआ है ? निर्माल्य वस्त्र का उपयोग करने से घृणा होती है तो यह आत्मा किन-किन निर्माल्य वस्तुओ का सेवन करता है, यह देखने की मुझे अन्त प्रेरणा हुई है। कम्वल मुझे इशारा कर रहे हैं कि निर्माल्य होने के कारण आपने मुझे तो त्यागा, मगर भीतर भरे हुए निर्माल्य पदार्थो का त्याग कव किया जायगा ?

मित्रो ! चर्बी-लगे वस्त्र पवित्र हैं या निर्माल्य ?

'निर्माल्य !'

दूध के कटोरे में शराब का एक बूंद डाल दिया जाय तो पवित्र बना रहेगा या अपवित्र हो जायगा ?

'अपवित्र हो जायगा'।

उसे पीना पसन्द करोगे ?

नहीं !

गूम से साफ की गई विदेशी शक्कर भी धनी बिस्कुट आप खा जाते हैं तो फिर क्या कहा जाय ? आपमें भी रानी चेलना जैसी चेतना होनी चाहिए। चेलना चाहती तो निर्माल्य कम्बलों में से कम्बल मंगवा लेती और अग्नि में डालकर उन्हें पवित्र करवा लेती। मगर क्या उसने ऐसी इच्छा भी की ? नहीं। फिर आप भी तो चेलना के भाई बहिन ही हैं। *फिर कैसे कहते हैं कि चर्बी के वस्त्र पानी* में धो लेने पर पवित्र हो गये।

राजा श्रेणिक ने रानी से कहा—महारानी अपने घर में और शालिभद्र के घर में उतना ही अन्तर है जितना सरोवर और सागर में होता है। अपना घर सरोवर-सा है और शालिभद्र का घर सागर के समान। अतएव हम गर्व का आश्रय न लेकर उसके पूर्वकालीन सुकृत की सराहना करनी चाहिये। जिनकी लक्ष्मी दया दान और सुकृत्यों के प्रभाव से है उनकी लक्ष्मी के सामने अहंकार और डाह नहीं करना चाहिये।

प्रत्येक वस्तु में गुण और अवगुण दोनों ही मिलते हैं। उस वस्तु को देखने के दृष्टिकोण भी भिन्न-भिन्न होते हैं। एक आदमी किसी की महान् ऋद्धि देखकर ईर्ष्या से

जल उठेगा और पाप का बंध कर लेगा और दूसरा जो सम्यग्दृष्टि और ज्ञानी है, विचार करेगा कि इस ऋद्धि को देखकर हमे सुकृत्य की शिक्षा लेनी चाहिये।

राजा-रानी के हृदय मे शालिभद्र की ऋद्धि देखकर अगर ईर्ष्या होती तो वे कोई न कोई उपाय खोज कर उसे छीन लेने का प्रयत्न करते। वे सोचते थे कि हमारी प्रजा होकर भी हमारे महल से ऊचा महल और हमारी ऋद्धि से अधिक ऋद्धि क्यो? मगर श्रेणिक ऐसे राजा नही थे। वे प्रजा को अपनी सन्तान समझते थे और उसके उत्कर्ष मे आह्लाद अनुभव करते थे। इसी कारण उस समय राजा और प्रजा के वीच गहरा स्नेह-सम्बन्ध था और चारो ओर सुख-शाति का साम्राज्य था।

कोणिक की रानी पद्मावती ने अपने पति के हृदय मे यह ईर्ष्या उत्पन्न कर दी थी कि राजा होते हुए भी आपके पास हार और हाथी नही है, किन्तु वहिलकुमार के यहा राज्य की सर्वोत्तम विभूतिया हैं। पद्मावती ने कोणिक के दिल मे ईर्ष्या की जो आग उत्पन्न की उसकी ज्वालाओ मे एक करोड अस्सी लाख मनुष्य भस्म हो गये। मगर महारानी चेलना इस कोटि की रानी नही। वह सम्यक् दृष्टि श्राविका थी। उसे मालूम था कि ईर्ष्या करके आग भडकाना अपने लिए अशुभ कर्मों का वन्ध करना है। ज्ञानी पुरुप ईर्ष्या की आग मे दूर रहते हैं और इसी कारण उन्हे सन्ताप नही भोगना पडता। पराई सम्पदा देखकर वे यही सोचते है कि यह सब सुकृत्यो का फल है, अतएव सुकृत्य करना ही उचित है।

एक किसान की अच्छी खेती देखकर, उसकी अच्छाई

के कारण लोभकर दूसरा किसान अपनी खेती अच्छी बना ले यह तो न्यायसंगत है परन्तु ईर्ष्या से प्रेरित होकर उसकी खेती में आग लगा देना क्या बुद्धिमत्ता है ? रानी चलना इस तथ्य को भली भांति जानती थी। वह ईर्ष्या की आग में झुलसने से बची रही ।

राजा श्रेणिक रानी से कहने लगे—रानी शालिभद्र के पुत्रयों को देखो । इस नगर में जिन वस्त्रों को कोई न खरीद सका हम तुम भी लेने में संकोच कर गये वही वस्त्र शालिभद्र के घर पांव पोंछ कर फेंक दिये गये ! शालिभद्र के घर में और अपने घर में कितना अन्तर है ? सच है संसार में कहीं अभिमान करने को अवकाश नहीं है । यहां सवत्र एक से एक बढ़कर मिल सकते है । दीपक भले ही गर्व करे मगर सूर्य गर्व नही करता और कहता है- गर्व किस बूते पर किया जाय मैं तो देखते-देखते ही अस्त हो जाता हू । चन्द्रमा कहता है—मैं गर्व करने के योग्य नहीं क्योंकि राहु मुझे ग्रस लेता है और काला स्याह बना देता है । जब गगनबिहारी सूर्य और चन्द्रमा भी गर्व नही करते तो हम किस प्रकार गर्व करें ? हमारे पास अभिमान की सामग्री ही क्या है ?

इस प्रकार विचार करते-करते राजा श्रेणिक को शालिभद्र से मिलने की इच्छा हुई । उसने सोचा—जिसकी ऋद्धि ऐसी अनुपम है देखना चाहिये वह स्वयं कैसा है ! वह अपने साथ क्या-क्या सुकृत्य लाया है यह तो अनुमान से ही जाना जा सकता है परन्तु उसके पुण्य के व्यंजक लक्षण शरीर पर क्या-क्या है यह तो प्रत्यक्ष देखा जा सकता है । शालिभद्र को प्रत्यक्ष देखने पर ही पता चल सकेगा ।

नास्तिक लोग लक्ष्मी को निर्हेतुक मानते हैं। उनके अभिप्राय से विना ही किसी कारण के लक्ष्मी यो ही मिल जाती है। मगर आस्तिको का कहना है कि जिनके शरीर पर सुलक्षण है और जो सुकृत लेकर आया है, उसी के यहा लक्ष्मी आती है।

ब्रह्मदत्त राजा भिखारी वनकर जङ्गल मे गया था। उसके पैरो के निशान देखकर एक निमित्तवेत्ता ने सोचा—इस ओर कोई चक्रवर्त्ती गया है। वह इस आशा से दौड गया कि चक्रवर्त्ती मिल जायगा तो मैं निहाल हो जाऊगा। मगर आगे जाने पर उसे चक्रवर्त्ती के वदले एक भिखारी दिखाई दिया। यह देखकर निमित्तवेत्ता रोने लगा। ब्रह्मदत्त ने उससे रोने का कारण पूछा। निमित्तवेत्ता ने कहा—मैं चक्रवर्त्ती के दर्शन की अभिलाषा से दौडा आया था लेकिन यहा तो तुम्हारे दर्शन हुए। मैंने सोचा था—चक्रवर्त्ती के मिलने पर मैं माला माल हो जाऊ गा—मेरा भाग्य जाग उठेगा। पर अव मैं इसलिए रोता हू कि भाग्य न जागा तो न सही, पर मेरा शास्त्र ही झूठा हो रहा है।

ब्रह्मदत्त ने कहा—पण्डित तुम्हारा शास्त्र झूठा नही है। मैं चक्रवर्त्ती ही हू मगर समय के फेर से मुझे भिखारी वनना पडा है। जव मेरा भाग्य फिर से पलटे तव तुम मेरे पास आना। मैं तुम्हे एक गाव दू गा।

तात्पर्य यह है कि झूठ-कपट का सहारा लेने से लक्ष्मी नही मिलती। लक्ष्मी के साथ सुकृत्यो का सम्वन्ध रहता है और शरीर पर से वह प्रकट हो जाता है। यह सम्वन्ध देखने के लिए ही राजा श्रेणिक, शालिभद्र को अपने पास वुलाने का विचार कर रहा है। △

शालिभद्र-श्रेणिक-समागम

शालिभद्र को देखने की अभिलाषा राजा श्रेणिक के हृदय में बलवती हो गई । अतएव उसने अपने मन्त्री और पुत्र अभयकुमार को बुलाया—और कहा—अभय ! जाओ शालिभद्र सेठ को सत्कार के साथ यहाँ ले आओ । मैं उसे देखना चाहता हूँ ।

राजा शालिभद्र की सम्पदा नहीं देखना चाहता शालिभद्र को देखना चाहता है । अब आप विचार कीजिए कि बड़ा कौन है—शालिभद्र या शालिभद्र की सम्पदा ?

शालिभद्र !

लोग लक्ष्मी को देखना चाहते है मगर लक्ष्मीपति को नही देखना चाहते । यह चाह रावण की चाह सरीखी है । रावण ने सीता को तो चाहा मगर राम को न चाहा । इसका फल क्या रहा ?

नाश !

इसी प्रकार अधिकांश लोगो को लक्ष्मी चाहिए लक्ष्मीपति नही चाहिए । दाम चाहिए, राम नही चाहिए ।

श्रेणिक आकर शालिभद्र की लक्ष्मी को देखना चाहता तो दौड़कर उसके घर जाता । मगर वह तो लक्ष्मीपति को देखना चाहता था । इसी कारण उसने अभयकुमार को भेजा कि वह शालिभद्र को बुला लावे ।

आप लोग पाप का सग्रह करके लक्ष्मी चाहते हैं । अर्थात् राम का तिरस्कार करके सीता चाहते हैं । रावण

ने राम को दूर रखकर मीता को अपनाने का जैसा उपाय किया था, वैसा ही उपाय आप पुण्य को दूर रखकर लक्ष्मी को अपनाने के लिए करते है। किन्तु राजा श्रेणिक अपने घर और शालिभद्र के घर मे सरोवर तथा समुद्र सरीखा अन्तर देखकर भी लक्ष्मी को नही वरन् लक्ष्मीपति को देखना चाहता है ।

अभयकुमार, शालिभद्र के विषय मे सब वृत्तान्त सुन चुके थे । उन्होने कहा—महाराज ! सब आपका ही प्रताप है । जिस राजा के राज्य मे शालिभद्र सरीखे सम्पत्तिशाली पुण्यवान गृहस्थ निवास करते है, उस राजा की कहा तक बडाई की जाय ?

श्रेणिक—तो जाओ शालिभद्र को बुला लाओ । उसे दूसरे के साथ बुलाना उचित नही होगा, यह विचार कर तुम्हे भेजता हू ।

अभय०—मेरे लिये तो एक पथ दो काज होगे । आपके आदेश का पालन भी हो जायगा और उस ऋद्धि-मान का दर्शन आपसे भी पहले मुझे हो जायगा ।

प्रधान अभयकुमार बडी शानशौकत के साथ शालि-भद्र के घर गया । प्रधान, राजा का दूसरा अग होता है, फिर अभयकुमार तो राजा का पुत्र और इस समय प्रति-निधि भी था । इसलिए यह कहा जा सकता है कि राजा ही शालिभद्र के यहा चला ।

भद्रा को सूचना दी गई कि अभयकुमार प्रधान उसके यहा आ रहे हैं । वह सोचने लगी—शायद उन कम्बलो के सिलसिले मे ही आ रहे होगे । मेरे यहा जो कुछ है,

यह मैं उनके सामने हाजिर कर दूंगी । यह सोचकर भद्रा ने अपने मुनीम आदि कर्मचारियों को सामने भेजकर आदर-पूर्वक अभयकुमार को ले आने के लिए भेजा । मुनीम आदि ने अभयकुमार के सामने जाकर जिस प्रकार की नम्रता दिखलाई उसे देखकर अभयकुमार बहुत प्रभावित हुआ । वह सोचने लगा—भद्रा और शालिभद्र की नम्रता एवं सज्जनता की बानगी यही चखने को मिल रही है ! जैसे डंके की आवाज सुनकर फौज का हाल मालूम हो जाता है उसी प्रकार कर्मचारियों का व्यवहार देखकर उनके स्वामी के व्यवहार का पता चल जाता है ।

मार्ग में मुनीम आदि ने अभयकुमार का बड़े ठाठ के साथ स्वागत किया और पांवड़े बिछाते हुए भद्रा के घर लाये । घर आने पर भद्रा ने अभयकुमार को उत्तम और उच्च आसन पर आसीन किया और उसकी आरती उतारी । आरती के पश्चात् अतिशय नम्रता के साथ भद्रा बोली—आपने आज मेरी कुटिया पावन की है इसके लिए मैं अत्यन्त आभारी हूं । आपकी सेवा के लिए मैं तैयार हूं । आज्ञा हो सो फरमाइए ।

अभयकुमार ने कहा—मैं जानता हूं कि शालिभद्र भोगपुरन्दर है और इसी कारण शायद वह यहां दिखाई नहीं दिये । उन्हें महाराज ने एक बार दर्शन करने बुलाया है । महाराज उनसे मिलने के लिए बहुत आतुर हैं ।

भद्रा भीतर ही भीतर अत्यन्त प्रसन्न हुई । जिसके बेटे के दर्शन के लिए मगध सम्राट् लालायित हों उसे प्रसन्नता क्यों न हो ? फिर उसने सोचा—अगर मैंने बेटे

को राजा के घर भेज दिया और वहा उसे राज्यपवन लग गया तो अनर्थ हो जाएगा ।

भद्रा अपने पुत्र को राजा के घर नही भेजना चाहती, इसका कारण समझना चाहिए । आप सोचते होगे, शालिभद्र की सुकुमारता का विचार करके माता उसे नही भेजना चाहती । मगर वास्तव मे भद्रा की भावना दूसरी ही है । वह सोचती है—शालिभद्र स्वर्गीय भोग-विलास भोग रहा है । उसकी दृष्टि ऊची है । राजदरबार मे जाने से उसे वैसा ही कष्ट होगा जैसा मनुष्यलोक मे आने पर देवो को होता है । इसके अतिरिक्त वह स्वतन्त्र विचारो का है । उनके जैसे विचार अभी है, उन्हे देखते हुए नही कहा जा सकता कि ससार की असारता देखकर वह सहन कर लेगा । राज दरबार मे वह जायगा तो सम्भव है कि किसी दूसरे विचार से वह प्रभावित हो जाय और फिर हाथ से निकल जाय । अतएव उसे राजा के पास भेजने की अपेक्षा राजा को ही यहा लाना उचित होगा । राजा के यहा आने पर उसकी किसी भावना को ठेस नही लगेगी और वह यह सोचकर कि राजा भी उसका सम्मान करता है, ससार में उलझा रहेगा । राजा के आने से शालिभद्र अपने पुण्य को वडा समझेगा और ससार मे उसे विराग नही होगा ।

ग्रन्थकारो का कथन है कि शालिभद्र इतना अधिक सुकुमार था कि पृथ्वी पर उसका पैर ही नही टिकता था । वह सूर्य और चन्द्रमा की किरणे भी नही देखता था । लेकिन यह तो आलकारिक वर्णन है । इस भाषा के मर्म को समझना चाहिए । अलकारो को कल्पना के द्वारा दूर करके वस्तुतत्त्व का विचार किया जाय तभी असली तत्त्व

हाथ लगता है।

प्राय लोग सन्तान को गुलाम बनाने का प्रयत्न करते हैं। वे चाहते हैं—लड़का पैसा लावे फिर चाहे जिसकी गुलामी करनी पड़े तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन पहिले के लोग पैसे की अपेक्षा स्वाधीनता की भावना को अधिक कीमत समझते थे। भद्रा माता नहीं चाहती थी कि राजा के सामने पहुंचकर शालिभद्र को किसी भी प्रकार की आत्मग्लानि अथवा हीनता का बोध हो। वह सोचती थी—शालिभद्र सिंह है। वह किसी प्रकार के पलान को सहन नहीं कर सकता। घोड़ा और गधा तो पलान को सहन करते हैं सिंह नहीं। इसके अतिरिक्त शालिभद्र जिस रूप में यहां देखा जा सकता है उस रूप में राजदरबार में नहीं क्योंकि अंगूठी के नग की जैसी शोभा अंगूठी में जड़े रहने पर होती है वैसी अलग होने पर नहीं रहती।

यही सब विचार कर भद्रा ने आवेदन किया—शालिभद्र के बदले एक बार मैं महाराज के दर्शन करना चाहती हूं। कोई आपत्ति न हो तो आज्ञा दीजिए। अगर महाराज फिर आज्ञा देंगे तो शालिभद्र भी क्या दूर है?

अभयकुमार ने विचार किया—शालिभद्र का अपमान नहीं होना चाहिए। यह परिवार अपनी विनम्रता के कारण ही हमें राजा मानता है अन्यथा यह देवलोक का खाते-पीते है। इन्हें हमसे क्या सरोकार है? हमारी परवाह इन्हें क्यों होने लगी? अगर इनमें विनयशीलता न होती और अविनीतता होती तो कह सकते थे कि हमें राजा के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। देव जिनका रक्षण

और पालनपोषण करता है, उनका कौन क्या विगाड सकता है ? मगर भद्रा वड़ी नम्रता के साथ आवेदन कर रही है। ऐसी स्थिति मे शालिभद्र की स्वतन्त्रता मे वाधा पहुचाना उचित नही है। शालिभद्र को ले जाने की अपेक्षा महाराज को यहा लाना ठीक है।

माता भद्रा को साथ लेकर अभयकुमार महाराज श्रेणिक के पास चले। भद्रा के साथ अनेक दासिया थी और मुनीम-गुमाश्ते आदि भी थे। भद्रा वडे ठाठ के साथ रवाना हुई। वह ऐसी जान पडती थी, मानो इन्द्राणी हो। भद्रा को राजा के पास जाते देखकर नगर के लोग अनेक प्रकार के विचार वितर्क करने लगे। कोई उन्हे आदर के साथ उपहार देता था। कोई उनके दर्शन करके अपना अहोभाग्य समझता था। कोई कहता था—यही भद्रा माता अपने नगर की लाज वचाने वाली है। कोई कहता—आज राजा के यहा इनके जाने का कारण क्या है ? कही भगिन ने वे कम्वल चुरा तो नही लिये थे ? इस प्रकार नगर के वाजार मे और घरो मे तरह-तरह की वाते होने लगी।

भद्रा, राजा के यहा पहुची। सूचना पाकर श्रेणिक उनसे मिलने के लिये आये।

प्राचीन काल मे घूघट या पर्दे की ऐसी प्रथा नही थी। अव तो वहुत से लोग समझते हैं कि लाज पर्दे मे ही रहती है, विना पर्दे के रह ही नही सकती, मगर ऐसा समझना भ्रम है, पहले की स्त्रिया पर्दा करती होती तो राजाओ से कैसे मिलती और किसमे इतना साहस है जो कह सके कि भद्रा माता लज्जाहीन थी ? यहा तो भद्रा

का ही प्रसग है पर ज्ञाताधर्म में थावच्चा कुमार की कथा आई है उसमें स्पष्ट उल्लेख है कि उनकी माता महाराज श्रीकृष्ण से मिलने गई थी। जब थावच्चा कुमार दीक्षा लेने लगे तो उनकी माता ने कृष्णजी के पास जाकर कहा-दीक्षा महोत्सव के लिए और सब वस्तुए तो है परन्तु छत्र और चामर नही हैं सो आप दीजिए।

इस प्रकार के कथानकों स मालूम होता है कि प्राचीन काल में पर्दे की कैद नही थी। पर्दे की प्रथा मुसलमानों के समाने में आरम्भ हुई है। जैसे लोग चाम में ही धरम मानते है। उसी प्रकार पर्दे में ही लज्जा मानते हैं। मगर दोनों मान्यताए भूल से भरी हैं। घू घट काढ़ लेना असली लज्जा नही है। असली लज्जा है—पर-पुरुष को भ्राता पुत्र समझना और वैसा ही उनके साथ व्यवहार करना।

भद्रा ने महाराज श्रेणिक को बहुमूल्य भेंट दी। महाराज ने अभयकुमार से पूछा—क्या शालिभद्र तुम्हारे कहने पर भी नही आये ?

राजा के प्रश्न के उत्तर म अभयकुमार ने भद्रा की ओर सकेत करते हुए कहा—यह शालिभद्र की माता आप से कुछ निवेदन करने आई हैं। इनका कहना है कि पहले यह आपसे निवेदन करलें फिर शालिभद्र क्या दूर है ?

श्रेणिक आजकल के राजाओं जैसे होते तो शालिभद्र के न आने पर आग उगलने लगते अपने हुक्म का अपमान समझकर भद्रा को दुत्कार देते। मगर राजा श्रेणिक ने सोचा—यह पुण्याई और ही है जो पुत्र को न भेजकर माता स्वय आई है। फिर अभयकुमार से कहा—इनका

कथन अगर तुम्हे ठीक मालूम हुआ हो तो यह मुझसे भी कह सकती हैं ।

राजा की आज्ञा पाकर भद्रा कहने लगी—शालिभद्र का स्वभाव ऐसा है कि चन्द्रमा और सूर्य की किरणे भी वह सह नही सकता और पृथ्वी पर उसका पैर नही टिकता । उसे नही मालूम कि सूर्य किधर उगता है और किधर अस्त होता है ।

यह वर्णन, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अलकारमय वर्णन है । इसे आलकारिक रूप मे ही समझना चाहिए । इसका शाब्दिक अर्थ लगाने से सत्य का ज्ञान नही होगा । इस कथन का वास्तविक अर्थ इस प्रकार है—शालिभद्र रवि–शशि की किरणे सहन नही कर सकता, इसका अर्थ यह है कि शालिभद्र ने अभी तक गर्मी और सर्दी सहन नही की है अर्थात् उसके सामने कभी कठोर प्रसग उपस्थित नही हुआ है । शालिभद्र का पैर पृथ्वी पर नही टिकता, इस कथन का आशय यह है कि वह किसी के आश्रित नही है, स्वतन्त्र है और सुकुमार है । उसे सूर्य के उदय अस्त की खबर नही है, इसका अर्थ यह है कि वह किसी प्रकार की व्यवस्था करने के प्रपच मे नही पडता ।

भद्रा ने आगे कहा—मैं जो निवेदन कर रही हू उसे आप सत्य समझिये । वह लक्ष्मीपति है । आप इस स्थान को समीप ही समझते हैं लेकिन उसके लिए यह हजार कोस दूर है । अतएव उसे यहा न बुलाकर आप ही वहा पधारने का अनुग्रह करें तो अच्छा है क्योकि जो स्थान मेरे पुत्र के लिये हजार कोप दूर-सा है वह आपके लिए

सन्निकट है। आप यह सोचते होंगे कि शालिभद्र आपका प्रजाजन है और आप राजा होकर उसके पास क्यों जायें तो दूसरी बात है। पर वह आपका ही बालक है। बालक दूर रहे तो उसके माता—पिता प्यार करने उसके पास जाते ही हैं। इस पर भी आप न पधारना चाहें और उसे ही बुलाना चाहें—आप उसे अपना बालक न मानें तो आपकी मर्जी ! फिर जैसा आपका आदेश होगा पालन किया जायगा।

भद्रा ने चतुराई से अपना पक्ष उपस्थित किया। राजा श्रेणिक निरभिमान व्यक्ति थे। वे उसके सामने देखने लगे।

इसके बाद भद्रा ने फिर कहा—महाराज ! आप नरेश हैं प्रजा के पिता हैं। अगर आप मेरी लाज रखना चाहते हैं अगर आप मुझे सम्मान देना चाहते हैं तब तो अवश्य ही मेरी कुटिया को पावन कीजिये। सम्भव है आपको कई प्रकार के अनुकूल प्रतिकूल परामर्श देने वाले मिलेंगे। कोई कहेगा कि प्रजा के घर जाने में राजा का गौरव घटता है पर आप इन बातों पर विचार न करके अपने स्वतन्त्र विचार पर आ जाइये। अगर शालिभद्र पर आपकी थोड़ी-सी भी प्रीति हो तो अधिक विचार मत कीजिये।

जिसकी जिस पर प्रीति हो जाती है वह उसके बल अबल को नहीं देखता। माता प्रीति के वश होकर अपने बालक की अशुचि उठाती है। वह अनुभव करती है कि मैं ऐसा करके बालक की रक्षा कर रही हूँ। अगर अपने बालक की अशुचि उठाने वाली माता से कोई दूसरा अपने

लक की अशुचि उठाने के लिए कहे और उसे मन चाहा
नताना देने का प्रलोभन दे, तो क्या वह अशुचि उठाने
ो तैयार होगी ? कभी नही, क्योकि दूसरे के बालक के
ति उसमे आत्मीयता नही है—प्रीति नही है। हा, प्रीति
ोने पर वह पडौसी के बालक की अशुचि बिना मेहनताने
 ही उठा सकती है। तात्पर्य यह है कि असली चीज
ीति है।

इसलिए भद्रा ने कहा—अगर शालिभद्र को आप
पना पुत्र मानते है उस पर आपकी प्रीति है, तो आपको
धारना ही पडेगा। अगर आपका उस पर प्रेम ही न हो
ो फिर कोई जोर नही।

भद्रा ने राजा के समक्ष नम्रता प्रदर्शित की। यद्यपि
उसे अहकार आ सकता था कि हम राजा का दिया क्या
ाते है और क्यो उसके यहा जावें ? भद्रा देवबल से भी
काम ले सकती थी मगर उसने देवबल की अपेक्षा आत्म-
बल अर्थात् नम्रता और कोमलता को ही अधिक समझा
और उसी का उपयोग किया।

भद्रा की भद्रतापूर्ण विनीत वाणी सुनकर राजा अपने
मन्त्री से सलाह करने लगा। उसने पूछा—क्यो अभय !
तुम्हारी क्या सलाह है ?

अभयकुमार—मुझे तो जाने मे कोई हानि नही जान
पडती वल्कि मेरी भी यही प्रार्थना है कि शालिभद्र के
घर अवश्य पधारिये। जब आप जाएगे तो अवश्य सोचेंगे
कि आप ऐसे स्थान पर नही गये, जहा आपको नही जाना
चाहिए था।

राजा—तो फिर ठीक है । आगे तुम चलो पीछे से मैं भी आता हू ।

अभयकुमार चलने को उद्यत हुए । साथ ही यह विचार भी होने लगा कि राजा के साथ और कौन-कौन आए ? बड़े बड़े लोगों को राजा के साथ चलने का निमन्त्रण दिया गया । बड़ों के साथ छोटे आदमी नौकर चाकर भी जाते है । जिन बड़ो को राजा का निमन्त्रण मिला था उनके नौकर अपने स्वामियो से कहने लगे—आप अपने साथ मुझे अवश्य ले चले । किसी ने कहा—हुजूर मै आपकी सेवा में रहूगा तो ठीक रहेगा । इस प्रकार शालिभद्र के घर जाने के लिए लोगा मे होड़-सी मच गई ।

इस प्रकार अनेक बड़े-बड़े लोगों के साथ राजा श्रेणिक ने शालिभद्र के घर जाने के लिए प्रस्थान किया । मगध-सम्राट को शालिभद्र के घर जाते देख नगरवासियो में एक प्रकार की हलचल-सी मच गई । विशाल जनसमूह राजा के पीछे हो गया मानो किसी उत्सव के अवसर पर राजा का जुलूस निकल रहा हो । लोग सोचने लगे—जिस शालिभद्र को देखने के लिए मगधप स्वयं जा रहे है वह पुण्यशाली शालिभद्र कैसा होगा !

वस्तु महगी तभी होती है जब बड़े लोग उसकी मांग करते है । इसी प्रकार जिसे श्रेणिक देखना चाहते हैं उसे कौन देखना न चाहेगा ? इसी कारण बहुत-से लोग अपनी सम्पत्ति का अभिमान त्याग कर राजा श्रेणिक के पीछे-पीछे हो लिये थे । लोगा में उत्कंठा इतनी प्रबल हो उठी थी कि कोई अगर पगड़ी पहिन पाया तो और कोई कपड़े ही नही

पहन सका। किसी ने कपडे पहिन लिये तो उसे पगडी पहि–नने का समय न मिला। मतलब यह है कि लोग राजा के साथ शालिभद्र के घर जाने के लिए इतने उत्सुक हो उठे कि उन्हे वस्त्र धारण करने का भी खयाल न रहा।

राजा चले जा रहे थे और दुदुभि बज रही थी। प्रश्न हो सकता है कि दुदुभि क्यो बजती है ? इसका उत्तर समझने के लिये यह देखना चाहिये कि हाथी के गले मे घण्टा क्यो बाधा जाता है। हाथी का पैर इतना धीमा पडता है कि पास बैठे लोगो को भी उसके निकल जाने की खबर नही पडती। अतएव हाथी के निकलने की सूचना देने के लिए उसके गले मे घटा बाध दिया जाता है। हाथी के समान बडे आदमियो की चाल भी धीमी होती है, तिस पर भी राजा की चाल का तो कहना ही क्या है ! इस–लिए राजा के साथ उसका राजसी ठाठ रहता है कि लोग उसे पहिचान ले।

अभयकुमार भद्रा के साथ पहले ही शालिभद्र के घर पहुच चुके थे। भद्रा ने कहा—आपकी कृपा से ही महराज मेरे यहा पदार्पण कर रहे हैं। मगर मुझे तो यह भी नही मालूम की महाराज का स्वागत-सत्कार किस प्रकार किया जाता है ? अतएव आप ही हमारे पथप्रदर्शक बनिये।

अभयकुमार ने भद्रा की प्रशसा करते हुए कहा—जिस प्रकार सोने को रगने की आवश्यकता नही होती, उसी प्रकार आपके यहा किसी तैयारी की आवश्यकता नही है। आपके यहा तो सभी प्रकार की तैयारिया पहले ही हैं।

भद्रा ने मोती-माणिक आदि रत्नो से भरे हुए थालो

को लिए मुनीम आदि को अपने साथ लिया और अत्यन्त उत्साह और ठाठ के साथ राजा के सामने आकर वह उन्हें मना कर घर में लाई।

शालिभद्र का घर क्या था दिव्य और अद्वितीय महल था। उसे देखकर राजा सोचने लगा—अब तक मैं सोचा करता था कि स्वर्ग है या नहीं? आज यह सन्देह तो मिट गया परन्तु यह सन्देह होने लगा है कि स्वर्ग पहले बना है या महल?

राजा बहुत विचार करने पर भी किसी निर्णय पर न आ सका। धीर होकर भी वह इस महल में आकर भौचक्का-सा रह गया और घबराने लगा जैसे किसी बन्दर को जङ्गल से लाकर राजसी भवन में छोड़ दिया गया हो। इतने ही में भद्रा ने आकर कहा—महाराज पधारिये।

राजा ने आश्चर्यपूर्वक कहा—महल तो यह आ गया है अब कहां चलना है? तब भद्रा बोली—महल यह नहीं है महाराज यह तो दास-दासियों के रहने का स्थान है। यह सुनकर राजा के आश्चर्य का कोई पार नहीं रहा। वह उठ खड़ा हुआ और भद्रा के पीछे-पीछे आगे बढ़ा। दूसरी भूमि पार करते जैसे ही राजा ने तीसरी भूमि में प्रवेश किया कि प्रकाश की चकाचौंध में उसकी आंखें तिल मिला उठीं। वहां प्रकाश इतना तीव्र था कि आंखें ठहरती ही नहीं थीं जैसे अनेक सूर्य एक ही स्थान पर इकट्ठे हो गये हों।

भद्रा ने राजा को भौचक्का-सा खड़ा देखकर और आगे चलने के लिए निवेदन किया। राजा विचार करता

है—आगे कहां चलूं ? यही मणिमंदिर है और यही आखें नही ठहरती तो आगे क्या हाल होगा ? फिर भी वह अभय-कुमार के साथ आगे वढा । इस तीसरी भूमि तक तो राजा के साथ और भी कुछ लोग आये थे, मगर इससे आगे वढने की हिम्मत किसी की न हुई ।

चौथी भूमि पर पहुच कर राजा और अभयकुमार चित्रलिखित-से रह गये । राजा को भ्रम होने लगा—यह मनुष्यलोक ही है या स्वर्गलोक मे आ पहुचे है ? यहा मनु-ष्यलोक सम्वन्धी कोई वस्तु ही दिखाई नही देती ।

भद्रा राजा के हाव-भाव देखकर उनके मन की वात समझ रही थी । उसने सोचा महाराज यहा तक आकर ही इतने घवरा गये है तो सातवी मजिल तक इन्हे कैसे ले जा सकूगी । ये मेरे मकान तक और उसमे भी चौथी मजिल तक आ गये यही वहुत है । अव शालिभद्र को तीन मजिल नीचे उतार कर मिलाना ही उचित होगा । इस स्थान पर दोनो की मुलाकात होने मे कोई हर्ज नही है । इसमे शालिभद्र अपना सम्मान ही समझेगा, अपमान नही ।

भद्रा ने दोनो के लिए सिंहासन डलवा दिये । राजा और अभयकुमार को उन पर वैठने के लिए कहा । उसने यही भी कहा—अव आपकी आज्ञा हो तो शालिभद्र को आपके पधारने की सूचना दे दी जाय । राजा सोच ही रहे थे कि अव और आगे न चलना पडे तो अच्छा है । भद्रा ने उनके मन की वात कह दी । राजा ने सोचा—गनीमत हुई कि इन्होने स्वय ही ऐसा कह दिया । उसने भद्रा की

बात स्वीकार कर ली । दोनों सिंहासन पर बैठ गये और महल ऊपर चली गई ।

पिता और पुत्र दोनों चकित थे । उन्होंने जो कुछ देखा था एकदम अपूर्व असाधारण और अलौकिक था । जो दृश्य कभी कल्पना में भी नहीं आ सकते थे वह आंखों के आगे आ रहे थे । दोनों पिता और पुत्र एक-दूसरे के सामने देख रहे थे । पहले तो किसी के मुख से बोल ही न निकला अन्त म राजा कहने लगा—यहां साक्षात स्वर्ग ही उतर आया जान पड़ता है । मैंने भगवान् महावीर के मुख से स्वर्ग की जैसी रचना सुनी थी हूबहू वही यहां दृष्टि-गोचर हो रही है । आश्चर्य तो यह है कि इस महल को बनाया किसने होगा ? यह कब और कैसे बन गया ?

राजा स्वयं बहत्तर कलाओं का पण्डित है । पहले के राजा सभी कलाएं सीखते थे । कोई काम ऐसा नहीं होता था जिसे करना व न जानते हो । वे सभी कलाओं के मर्मज्ञ होते थे । इसलिये श्रेणिक सोचते हैं यह महल बना कैसे होगा ? कैसे-कैसे हीरे यहां जड़े हुए हैं ? कैसी अद्भुत इनकी बनावट है और इनमें से कैसी सुगन्ध फूट रही है । मेरी समझ में ही नहीं आता कि यह सब रचना हुई किस प्रकार है ?

राजा कहता है—हम राजा हैं । करोड़ों मनुष्यों के स्वामी कहलाते हैं । सभी पर हमारी हुकूमत चलती है और सभी हमारे सहायक हैं । करोड़ों की सहायता से भण्डार भरे हैं और उनसे महल बने हैं । फिर भी वह महल इनके आगे झोंपड़ी की हैसियत भी नहीं रखते । यह तो साक्षात्

ही स्वर्ग जान पड़ता है।

अभयकुमार अतिशय बुद्धिशाली था। वह जैन शास्त्रो का ज्ञाता था। उसने कहा—पिताजी, इन महलो से हमे कई प्रकार की शिक्षा मिलती हैं। यह महल और यह वैभव पुण्य की भौतिक प्रतिमा है। पुण्य दान मे रहता है, आदान मे नही। जो दूसरो का सत्त्व चूस-चूस कर आप मोटा होना चाहता है, वह मोटा भले ही बन जाय पर पुण्य के लिहाज से वह क्षीण हो जाता है, पुण्य के वैभव से वह दरिद्र होता रहता है। इसके विपरीत जो आधी मे से भी आधी देता है, वह ऊपर से भले ही दरिद्र दिखाई देता हो पर भीतर ही भीतर उसका पुण्य का भण्डार बढता जाता है और फिर उसी पुण्य के भण्डार मे से ऐसे महलो का निर्माण होता है और यह वैभव उसके चरणो मे लौटने लगता है। असल पूंजी पुण्य है। जहा पुण्य है, वहा सहायको की आवश्यकता नही। पुण्य अकेला ही करोडो सहायको से भी प्रबलतर सहायक है। यह पुण्य त्याग और सद्भाव मे ही रहता है। भोग पुण्य के फल हैं किन्तु पुण्य को क्षीण बना देते है।

आप लोग सेठ कहलाते हैं तो क्या भोग भोगने के लिए ही ? बढिया खाने और पहिनने के लिए ही ? जरा विचार तो करो कि आपको सेठ कौन कहता है ? जो आपसे अधिक धनवान् हैं, वे आपको सेठ कहते है या गरीब ? अगर गरीब लोग आपको सेठ मानते है तो क्या वास्तव मे ही आप गरीबो के सेठ बने हैं ? सिर्फ सेठानी के ही सेठ तो नही बने हुए हैं ? सच्चा सेठ वह है जो विचारता है कि मैं गरीबो के परिश्रम का खाता हू और जो गरीबो को

शान्ति पहुंचाता है वह सेठ ग्रामस्थविर पद का अधिकारी होता है। जो शरीर से अच्छा काम करके अच्छा खाता-पीता है वह तो क्षम्य है मगर जो ऊंचा काम किये बिना ही ऊंचा खाता-पीता है वह अपने लिए नरक का निर्माण करता है।

अभयकुमार कहता है—पिताजी ! यह महल हमें परोपकार में लग जाने की प्रेरणा करता है। यद्यपि आप परोपकार में पहले ही से संलग्न हैं किन्तु यह और अधिक लगने की प्रेरित कर रहा है।

आपने भी सुन्दर और भव्य इमारतें देखी होंगी। लेकिन उनको बनवाने वाला यहां तक की उनमें से अनेकों का वंशज भी प्राप्त मिलना कठिन है ! वे आज कहां हैं ? जिनके भवन विलास लोगों के हृदय में ईर्ष्या उत्पन्न करते थे अब वे कहां चले गये ? कुछ पता है उनका ? जब आप किसी भवन की सुन्दरता को देखकर मुग्ध हो जाते हैं तब उसके निर्माण कराने वाले की स्थिति पर भी तो विचार कर लिया करें। यह भी देख लिया करें कि ऐसे सम्पत्तिशालियों का भी प्राप्त ठिकाना नहीं है तो हमारी सम्पत्ति किस गिनती में है ? क्या वह इस योग्य है कि उस पर मद किया जाय ?

इधर अभयकुमार और राजा श्रेणिक में बातचीत हो रही थी उधर भद्रा माता शालिभद्र के पास पहुंची। भद्रा को आते देख शालिभद्र आश्चर्यपूर्वक विचार करने लगा—आज कोई विशेष बात जान पड़ती है जो माता स्वयं आई है। वह उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर विनय

प्रदर्शित करने लगा। उसे आज माताजी के व्यवहार मे कुछ चञ्चलता दिखाई दे रही थी।

शालिभद्र के पास पहुचकर भद्रा ने कहा—वेटा! जल्दी चलो, देर का काम नही है। तुम्हारे घर महाराजा श्रेणिक पधारे हैं। रमणिया और सेज छोडकर उनके पास चलना है।

माता की बात सुनकर शालिभद्र आश्चर्य मे पड गया। वह सोचने लगा—आज माता घबरा कर यह क्या कह रही हैं? आज तक ऐसी जल्दबाजी तो इन्होंने कभी नही की। माता आज रमणियो को और सेज को छोडने के लिये कहती है, तो क्या मैं भोगो मे ही डूबा हू? कोई इन भोगो को छुडा भी सकता है? क्या यह भोग अनित्य है?

शालिभद्र ने कहा—माता, आप जो उचित समझें, करे। मैं चल कर क्या करूगा?

भद्रा—वह अपना स्वामी है—मगध का राजा है। वह इन्द्र की होड करने वाला नरेन्द्र है। उसी की छत्र-छाया मे हम सब रहते है। उसके कुशल मङ्गल मे अपना कुशल-मङ्गल है। वह तो कृपा करके तुम्हारे घर आया है और तुम्हे होश ही नही। तुम्हे कष्ट से बचाने के लिए मैंने कितना प्रयत्न किया, कितनी दौड-धूप की और तुम्हारा यह हाल है! तुम्हे सेज पर से उठने मे ही आलस्य आ रहा है!

शालिभद्र की निद्रा मानो उड गई। वह सोचने लगा—आज माताजी मुझे जगाने आई हैं। राजा की कुशल मे हमारी कुशल है, तो क्या मेरा यह असीम वैभव व्यर्थ है?

यह माया इतनी कच्ची है ?

इसी बीच भद्रा ने फिर कहा—तुम लक्ष्मी के गर्व में भूलकर मेरी बात पर ध्यान नहीं देते। तुम्हें क्या पता है कि जिस राजा के यहां तुम्हारे जैसे सैकड़ों धनिक खड़े रहते हैं फिर भी जिनका दर्शन नहीं पाते वह राजा स्वयं तुम्हारे यहां आये हैं? फिर भी तुम नहीं उठते! यह महल और वैभव तभी तक तुम्हारा है जब तक उनकी कृपा है। उनकी वक्र दृष्टि होते ही इन महलों से बाहर निकलना पड़ेगा और इनका स्वामी कोई दूसरा हो जाएगा।

शालिभद्र सोचने लगा—राजा श्रेणिक ऐसा है! उसी की दया पर मेरा ऐश्वर्य टिका है? यह माया ऐसी है कि राजा की अकृपा से बदल जाएगी? सारा संसार इसी तरह अस्थिर है।

भद्रा ने अपना भाषण जारी रखा—बेटा वे राजा हैं। प्रसन्न हैं तो खूब अप्रसन्न हैं तो खूब। रूठ जाए तो न मालूम क्या कर गुजरें? तुम्हें अभी राज धर्म का भान नहीं है! इसलिए जल्दी करो। वह कहीं यह न सोचने लगें कि हम इतनी दूर से आये और शालिभद्र को कुछ परवाह ही नहीं है! ऐसा हुआ तो गजब हो जायगा। यह आमोद-प्रमोद तो फिर भी हो जाएंगे मगर राजा को फिर प्रसन्न करना कठिन है।

भद्रा की यह बातें सुनकर शालिभद्र ऐसा जाग उठा जैसे सोता हुआ केसरी सिंह जाग उठा हो। वह सोचने लगा—क्या मुझ सिंह पर आज कोड़े की चोट कसी जाने वाली है? लेकिन मैं यह सहन नहीं कर सकता। फिर

उसकी विचारधारा का प्रवाह सहसा पलट गया। सोचने लगा—मैं अपने पिताजी की दी हुई सम्पत्ति भोगता हू, उस पर भी राजा मेरा नाथ है और मैं अनाथ हू ? वह चाहे तो क्षण भर मे इसे छीन सकता है ! इससे तो यही प्रकट होता है कि सम्पत्ति ही अनाथ बनाने वाली है। मैंने सुकृत नही किए। पूर्वभव मे सुपात्रदान और अभयदान नही दिये। प्राणीमात्र पर समभाव धारण नही किया। इसी का यह फल है कि आज राजा मेरा नाथ बनकर आया है। अगर दूसरे को अनाथ किया और फिर अपने को नाथ माना। इसी व्यवहार का बदला राजा आज माग रहा है। अगर मैं सच्चा नाथ बना होता तो आज अनाथ बनने का अवसर ही क्यो आता ? राजा मेरा नाथ बनकर क्यो मेरे सिर पर सवार होता ! मैं कच्चे घडे जैसी सम्पत्ति का स्वामी बना हू, इसी कारण राजा मेरा नाथ बन रहा है। माता ने आज वह बात सुनाई है जो पहले कभी नही सुनी थी। लेकिन माता का इसमे दोष ही क्या है ? वास्तविकता तो वास्तविकता ही है। वह आज नही तो कल सामने आये बिना न रहती। अनित्य वस्तु पर आधिपत्य जमाकर नाथ बनने वाले को यह सत्य तो कभी न कभी अनुभव करना ही पडता है। मैं इस भवन महल मे भूला था, अपने अक्षय भण्डार के गरूर मे चूर था और अपनी बत्तीस रमणियो का नाथ मानकर फूला नही समाता था। वह अभिमान ही मुझे अनाथ बनाये था।

मित्रो ! शालिभद्र की सम्पत्ति स्वतन्त्र, देवप्रदत्त है, फिर भी उस पर नाथ खडे हो गये है तो आपको भी अपनी-अपनी स्थिति पर विचार करना चाहिए। अनित्य

वस्तु पर अधिकार करके नाथ बनने वाले अनाथ ही रहते हैं।

जिस घर को आप अपना समझते हैं उसमें क्या चूहे नहीं रहते ? फिर यह घर आपका ही है उनका नहीं है ऐसा क्यों ? आप भी चूहे की तरह ही थोड़े दिनों में उसे छोड़कर नहीं चल दंगे ? फिर किस विचार पर आप इतराते हैं ? वास्तव में संसार में आपका क्या है ? कौन-सी वस्तु सदा आपका साथ देने वाली है ? जिस वस्तु को पाकर आपके सकल संकट टल जाएंगे ? किसके संयोग से आपकी कामना पूरी हो जाने वाली है । शाश्वत कल्याण का द्वार किससे खुल जाता है ? इस बात पर जरा विचार कीजिये ।

शालिभद्र सोचता है—इस घर को मैं अपना घर समझता था । इस सम्पत्ति को मैं अपनी सम्पत्ति मानता था । अब मालूम हुआ है कि यह सब तभी तक मेरा है जब तक राजा की मुझ पर कृपा है । राजा की अकृपा होते ही मेरी समस्त सम्पदा परायी हो जायगी । ऐसी स्थिति में मैं इस सम्पत्ति का नाथ नहीं रहा । मैं तो अनाथ ही ठहरा ।

मित्रो ! आपकी भी यही स्थिति है या नहीं ? क्या चित् सम्पत्ति न छूटे तो उसका अभिमान तो छोड़ दो ! जिस सम्पत्ति पर अभिमान करते हैं वह पल भर में ही क्या पराई नहीं हो सकती ? राजा चाहे तो तत्काल उसे अपने अधिकार में ले सकता है । सैकड़ों और हजारों के नोट अगर सरकार रद्दी कर दे तो वे अच्छी रद्दी के भाव भी नहीं बिकेंगे । आपकी स्थिति कितनी कच्ची है इस बात पर जरा विचार किया करो । शालिभद्र की कथा से इतना सीख लोगे तो बेड़ा पार हो जायगा ।

शालिभद्र कहता है—जो सम्पति पिता भेजते हैं, उसके विषय मे माता कहती हैं कि राजा की कृपा से ही वह तुम्हारे पास बनी हुई है, तो हे आत्मन् ! तू इस सम्पत्ति पर अभिमान मत कर। माता कहती है—अगर मैं राजा की आज्ञा शिरोधार्य न करूंगा तो राजा मेरी यह सम्पत्ति छीन लेगा। परन्तु इस सम्पत्ति की रक्षा की आशा मे मैं राजा को नाथ नही मान सकता। सम्पत्ति रहे या आज ही चली जाए, मैं एकमात्र परम पुरुष के सिवाय और किसी को नाथ नही मानूंगा। राजा ने घोडो पर सवारी की होगी, लेकिन आज वह क्या सिंह पर सवार होना चाहता है ?

मित्रो ! शालिभद्र के पास देव सम्पत्ति है। आपके पास अगर देव सम्पत्ति होती और ऐसा अवसर आ जाता तो आप देव को ही स्मरण करते ! मगर शालिभद्र जानता है कि देव अगर नाथ बना सकता है तो आज राजा उसका नाथ बनने क्यो आता ? उसने सोचा—मैं देव की सहायता नही लूंगा, मैं उन त्रिभुवन नाथ की सहायता लूंगा जो सहायता लेने वाले को भी त्रिभुवननाथ बना देता है। जब मैं उस परमपुरुष की शरण मे चला जाऊंगा तो फिर मेरा कोई नाथ नही रह जाएगा, बल्कि मैं स्वय उसी परमसत्ता मे मिल जाऊंगा। जब मैं इस ससार के चक्र से परे हो जाऊंगा तो मुझ पर राजा की आन ही क्यो रहेगी ?

लोग समझते हैं कि शालिभद्र विषय-भोग का कीडा था। भोग के अतिरिक्त उसने कुछ समझा ही नहीं था। अगर ऐसा होता और शालिभद्र आत्मचिन्तन न करता होता तो यकायक उसकी आत्मा मे यह जागृति कैसे उत्पन्न हो

जाती ? वह अब तक समझ रहा था कि मुझे कोई दुःख नहीं है मैं देवलोक से आई सम्पत्ति का भोग कर रहा हूं परन्तु आज उसे विस्मित हुआ कि मैंने सुकृत्य नहीं किये हैं। सुकृत्य किये होते तो ऐसी स्थिति में क्यों होता कि मुझे राजा की मान माननी पड़! माताजी ने आज मुझे चेतावनी दी है। उन्होंने समझा दिया है कि—अरे—शालिभद्र! तू कब तक सोता रहेगा? जाग उठ, देरी हो रही है।

मित्रों! क्या आपको भद्रा की बात जागृति-जनक मालूम होती है? राजा की तो एक आन माननी पड़ती है मगर पत्नी की तो प्रतिदिन पचास आन माननी पड़ती है। फिर भी आप जागृत नहीं होते! जरा अपने अन्तरात्मा को जगाओ। शालिभद्र ने माता की बात को चाबुक समझा। जिस सम्पत्ति को वह अपनी समझ रहा था उसे आज पराई समझने लगा। उसने कहा—मैं इसका नाथ नहीं हूं। मैं सम्पत्ति छिन जाने के भय से राजा को अपना नाथ नहीं मानूंगा। राजा रूठ जायगा तो सम्पत्ति छीन लेगा। वह भले छीन ले इस पर मुझे मोह नहीं है। राजा की इच्छा हो तो मैं स्वयं सारी सम्पत्ति उसे दे सकता हूं। सम्पत्ति देने से मुझे आनन्द ही होगा—लेशमात्र भी विषाद न होगा। हां इसे रखकर अनाथ बनने से मुझे कोई आनन्द नहीं है।

आप गुलाम के भी गुलाम बनना स्वीकार कर लेंगे पर अपने नाम नहीं छोड़ेंगे। जरा विचार कीजिये कि अनाथता खादी में अधिक है या मैनचेस्टर के कपड़ों में?

मनचेस्टर के कपड़ों में।

विस्कुट और हलवाई की दूकान की मिठाई मे अधिक अनाथता है अथवा घर की रोटी मे ?

'विस्कुट और हलवाई की चीजो मे'

आप जानते तो सभी कुछ है फिर भी अधिक अनाथ वनाने वाली चीजें नही छोड सकते । वल्कि हलवाई की दूकान की वनी चीजे मिल जाने पर वहिने तो यही समझेंगी कि चलो ठीक हुआ, चूल्हे-चक्की की खटपट मिटी और आरम्भ–समारम्भ से वचाव हुआ । मैं अगर अधिक आशा न करू तो क्या इतनी भी आशा नही कर सकता कि आप गुलामी के यह वन्धन तोड फेकेंगे । शालिभद्र राजा की आन न मानने के लिए सारी सम्पत्ति छोड देने को तैयार है, लेकिन यह समाज आज इतना अनाथ वन रहा है कि घोर पराधीनता मे डालने वाली चीजे भी नही त्याग सकता ।

मित्रो ! आत्मा पर विजय प्राप्त करो । जिन कामो से कम पाप लगेंगे वे काम अनाथता पैदा करने वाले होगे और जिन कार्यों के करने से अधिक पाप का वध होता है, उनसे उतनी ही अधिक अनाथता वढेगी । अगर समस्त पापो का परित्याग कर सको तो अत्यन्त श्रेष्ठ है । ऐसा सम्भव न हो तो वडे पापो का तो त्याग करो ।

शालिभद्र कहता है—यह ससार नाशवान् है । ऋद्धि, परिवार और मनुष्य शरीर भी नश्वर हैं । मैं इन अनित्य वस्तुओ के लिए नित्य की स्वतन्त्रता का घात नही करूगा । श्वास का विश्वास ही क्या ? यह तो पवन है । जव तक आता है, आता है, सहसा वन्द हो जायगा तो फिर नही

आयेगा ! फिर संसार पर रीझने का कारण ही क्या है ? विषयभोग विष के समान हैं यह बात मैं समझ गया हूं। ज्ञानहीन जन भले इन्हें अमृत माने लेकिन ज्ञान प्राप्त होने पर इनमें अनुराग रखना बुद्धिमत्ता नहीं है। जो अपने पाँव खड़ा कर लेता है उसे इन्द्र भी नहीं डिगा सकता ! अब मैं आत्मा से स्वतन्त्र बन जाऊंगा तो राजा या कोई और मेरे सामने क्या चीज ठहरेगी ?

माता ने मुझे राजा के भय से ऐसा भयभीत कर दिया है जैसे बालक को हौआ का डर दिखला कर रोने से रोक दिया जाता है। बालक हौआ से तभी तक डरता है जब तक उसे ज्ञान नहीं होता। यह ज्ञान होने पर कि हौआ नाम की कोई चीज ही नहीं है भय नहीं रहता। इसी प्रकार जो आत्मा की स्वतन्त्रता को नहीं पहिचानता होगा वह भले ही राजा से डरता रहे जिसने उस स्वतन्त्रता को समझ लिया है वह क्यों डरेगा ? राजा नाराज होकर करेगा क्या ? यही कि इस सम्पत्ति को ले जायगा। मगर मैं तो इसे तिनके की तरह त्यागने को तैयार ही हूं। जैसे भृगु पुरोहित ने सम्पत्ति को त्याग दी थी और राजा ले गया था उसी प्रकार मैं भी इस सम्पत्ति को वमन कर दिया है। अब कोई भी ले जाए ! मुझे सम्पत्ति के जाने की तनिक भी चिन्ता नहीं है।

इसके बाद शालिभद्र की विचारधारा नवीन दिशा की ओर बह चली। उसने विचार किया—माता का मुझ पर असीम उपकार है। माता ने आज तक कभी किसी काम के लिए आदेश नहीं दिया। उनका सिर्फ यही पहला आदेश है। अगर मैं इसका पालन नहीं करूंगा और राम

दूंगा तो उनके हृदय को गहरी चोट पहुचेगी । अतएव माताजी की प्रसन्नता के लिए एक वार राजा के समक्ष उपस्थित होने मे किसी प्रकार की हानि नही है ।

माता का विनय करना पुत्र का परम कर्त्तव्य है । जव तक पुत्र गृहस्थ जीवन से पृथक् होकर साधु नही बना है, तव तक माता उसके लिए देवता है । उसकी आज्ञा को भङ्ग करना पुत्र के लिए उचित नही है । ऐसा करने से मेरा जीवन दूपित होगा, अविनय का पाठ सिखाने वाला वन जायगा । मेरी दृष्टि से आत्मधर्म ऊचा है परन्तु माता का विनय करना भी आवश्यक है ।

इस प्रकार विचार कर शालिभद्र उठा और अपनी वत्तीसो पत्नियो को साथ लेकर, इन्द्राणियो सहित इन्द्र की भाति राजा के सामने जाने को तैयार हुआ ।

प्रश्न हो सकता हे कि उस समय क्या पर्दे की प्रथा नही थी ? अगर थी तो शालिभद्र की स्त्रिया, उसके साथ राज के पास कैसे जा रही है ? आज के रिवाज को देखते हुए तो यह वात ठीक नही जान पडती । पर आपको मैं पहले वता चुका हू कि भारतवर्प मे पहले पर्दे की प्रथा नही थी । मुगलकाल मे इस रिवाज का जन्म हुआ है । जव उस समय वादशाहो के जुल्म के कारण इज्जत वचाना कठिन हो गया तो पर्दा करने का उपाय निकाला गया था । आज वही उपाय रिवाज वन गया है । रिवाज किस प्रकार पैदा हो जाते हैं, इस सम्वन्ध मे एक उदाहरण लीजिए ।

'किसी सेठ के घर विवाह था । उन्ही दिनो सेठ के

घर में बिल्ली ब्याई थी। घर के लोग काम-काज के लिए इधर-उधर घूमते तो बिल्ली के बच्चे सामने आ जाते थे। बिल्ली रास्ता काट दे तो अपशकुन समझा जाता है। अतएव सेठ के घर वालों ने इस अपशकुन से बचने का उपाय सोचा। सेठ दयालु था। बिल्ली के बच्चों को कोई मार डालेगा इस विचार से वह उन्हें घर से बाहर नहीं निकलवा सकता था। अतएव यह तय किया कि बच्चों के सामने खाने-पीने की चीज रखकर उन्हें एक टोकरे से ढक दिया जाय। यही किया गया। जिस जगह विवाह होने वाला था उसी के पास बच्चे ढाँक गए थे। यद्यपि यह सिर्फ सामयिक आवश्यकता के कारण ही किया था लेकिन पीछे से वह रिवाज बन गया। सेठ के लड़कों ने इसे रिवाज बना लिया और ऐसा रिवाज कि बिल्ली के बच्चों को ढाँके बिना उनके घर विवाह ही नहीं होने लगा। जब विवाह होने को होता तो बिल्ली के बच्चों की खोज की जाती। उन्हें घर में लाया जाता दूध पिलाया जाता टोकरे से ढका जाता। तब कहीं विवाह हो सकता।

जिस प्रकार विवाह में बिल्ली के बच्चों का होना आवश्यक मान लिया गया था। उसी प्रकार पर्दे की प्रथा भी आवश्यक मान ली गई है। नतीजा यह हुआ है कि आजकल स्त्रियां आवश्यक बात कहने के समय तो टप्-टप् करती हैं मानो चोर ताक रही हो और गालियां गाने के समय सारी लाजशर्म को ताक में रख देती हैं। मगर शालिभद्र के जीवनचरित से इनकी आंखें खुल जानी चाहिए।

शालिभद्र अपनी पत्नियों के साथ राजा से मिलने चला। राजा की दृष्टि ऊपर की ओर लग रही थी।

स्त्रियो के आभूपणो की भकार उसके कानो मे पडी। अभयकुमार और राजा श्रेणिक ने उस ओर नजर फेरी और उसी समय शालिभद्र पत्नियो के साथ इस प्रकार आकर खडा हो गया, जैसे वादलो को फाडकर सूर्य निकल आया हो।

शालिभद्र को देखकर राजा चकित रह गया। अभयकुमार से कहने लगा—क्या यह शालिभद्र है ? इसे मनुष्य कहे या देव ? जान पडता है, कोई देव आकाश से उतरा है।

शालिभद्र का रूप सौन्दर्य देखकर राजा श्रेणिक की आखो की प्यास ही न वुझी और उसकी आखो की पुतलिया स्थिर हो गई। इसी समय शालिभद्र ने राजा को प्रणाम किया। राजा प्रेम मे विह्वल हो गया। उसने शालिभद्र को अपनी ओर खीचकर छाती से लगाया और फिर गोद मे विठा लिया। गोद मे विठाकर राजा शालिभद्र के ऊपर इस प्रकार हाथ फेरने लगा, जैसे माता अपने नन्हे से वालक पर हाथ फेरती है।

इधर शालिभद्र पर हाथ फिराकर राजा अपना हार्दिक प्रेम प्रकट कर रहे हैं, उधर शालिभद्र सोचते है—राजा ने मुझे खिलौना समझ रखा है ! मुझे देख-देखकर चकित हो रहे है, मानो मैं गुडिया हू। यह मेरे नाथ बनना चाहते हैं। मगर मैं स्वय अनाथ को नाथ नही वनाना चाहता। फिर हाथ फेर कर राजा मुझे घोडा क्यो वनाना चाहते हैं ?

लोग घोडे पर ता हाथ फेरते हैं मगर कभी किसी को सिंह पर हाथ फेरते भी देखा है ?

"नही।"

सिंह कभी हाथ नहीं फेरने देता। शालिभद्र भी सिंह प्रकृति का पुरुष है। वह सोचता है—मैं परमपुरुष के सिवाय और किसी को अपना नाथ नहीं बना सकता। शालिभद्र के हृदय में राजा के प्रति प्रेमभाव नहीं था। अतएव राजा का करस्पर्श उसे आनन्ददायक नहीं लगा। इसके अतिरिक्त शालिभद्र का शरीर मक्खन की भांति अत्यन्त कोमल था और राजा की हथेली कठोर थी। मक्खन जैसे आग के हल्के स्पर्श से भी मानो पिघलने लगा उसके समस्त वस्त्र पसीने से गीले हो गये।

भद्रा वहीं मौजूद थी। उसने कहा—महाराज इस जन्म में शालिभद्र ने किसी की सेवा नहीं की है। ऐसी अवस्था में यह आपकी सेवा भी कैसे कर सकता है? इसकी ओर से मैं आपको किस प्रकार सन्तुष्ट करूं?

अभयकुमार ने कहा—पिताजी इस फूल को तो डाली पर ही रहने देना ठीक है। यहां यह कुम्हला जायगा।

अभयकुमार के कथन का आशय राजा समझ गया और उसने ठीक है ठीक है कहकर शालिभद्र को छोड़ दिया। शालिभद्र राजा की गोदी में से उठा और सीधा अपने महल की ओर चल दिया। राजा की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखा। राजा उसकी ओर बराबर ताकता रहा कि वह भी एक बार इधर मुंह फेरेगा। मगर वह बिना मुंह मोड़े सीधा चला गया। राजा को कुछ निराशा हुई।

१८ : श्रेणिक का सत्कार

शालिभद्र के चले जाने पर भद्रा ने राजा श्रेणिक और अभयकुमार की अभ्यर्थना करते हुए कहा—'महाराज ! आज यही भोजन करने का अनुग्रह कीजिए यद्यपि यह घर आपका सत्कार करने योग्य नही है। आपके योग्य भोजन-सामग्री भी यहा नही है, फिर भी मेरी भक्ति रुकती नही है। मेरा दासभाव आज आपकी सेवकाई चाहता है। इस कारण मैं आपकी सेवा करना चाहती हू।

शालिभद्र इस सम्पत्ति-शक्ति का गुलाम नही था। मगर भद्रा मे वह जागृति नही आई थी। जिसे ससार मे रह कर दूसरे के आश्रय से अपना जीवन व्यतीत करना है, उसे भद्रा की भाति राजा की या राज्याधिकारियो की खुशामद करनी ही पडती है। राजा को रुष्ट न करके उचित सत्कार करना गृहस्थ का व्यवहार भी है। भद्रा इस ऋद्धि को छोडना नही चाहती और ऋद्धि की रक्षा राजा के द्वारा ही हो सकती है, इस कारण खुशामद करना स्वाभाविक है। लेकिन शालिभद्र इसे त्यागने को तैयार बैठा है। वह क्यो राजा की खुशामद करे ?

आज बहुत से लोग ऐसे मिलेंगे जो कहते हैं—हम शालिभद्र की तरह स्वतन्त्र हैं। अगर वे शालिभद्र की तरह माया के पास से मुक्त हो जाए, निस्पृह बन जाए और सम्पत्ति को अनाथ बनाने वाली समझकर त्याग करने को तैयार हो जाए तो उनका दावा कदाचित् माना जा सकता है। मगर जिनकी रग-रग मे माया के प्रति ममता रम रही है, जो धन के लिए छल-कपट करने से भी नही चूकते,

वे अगर माता-पिता आदि गुरुजनों के विनय का त्याग कर दें तो समझना चाहिये कि वे स्वतन्त्र नहीं किन्तु उच्छृंखल बने हैं। उनमें सच्चा स्वाधीनभाव नहीं आया है उद्दण्डता आई है। ऐसे लोगों का जीवन आगे नहीं बढ़ता ऊंचा नहीं चढ़ता। उनका पतन होता है।

भद्रा की नम्र वाणी सुनकर राजा ने विचार किया ऐसा यह घर है फिर भी मेरी भक्ति नहीं हो सकती? वास्तव मे लक्ष्मी का निवास वहीं होता है जहां नम्रता होती है—

पर कर मेरु समान आप रहे रजकण जिसा।

जिनका वैभव मेरु-सा है फिर भी जो रजकण बन-कर रहते हैं वे मनुष्यलोक मे भी देव हैं। भद्रा के घर वैभव बिखरा पड़ा है फिर भी वह कितनी नम्र है? इस चरित्र में धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ व्यावहारिक शिक्षा भी दी गई है और अहंकार को दूर करने का आदर्श उपस्थित किया गया है।

राजा ने सोचा—इन्द्र के वैभव की होड़ करने वाला वैभव इस घर मे बिखरा पड़ा है फिर भी भद्रा दासभाव दिखा रही है! धन्य है इसकी सज्जनता!

अहंकार का त्याग करके नम्रता रखने वाला मनुष्य रूप मे देव है चाहे वे कितने ही गरीब हों। जिसके सिर पर अहंकार का भूत सवार रहता है, वह धनवान होकर भी तुच्छ है नगण्य है। वह किसी योग्य नहीं।

भद्रा ने जिस नम्रता के साथ भोजन करने की प्रार्थना

की थी, उसे देखते हुए राजा अस्वीकार कैसे कर सकता था ? उसने प्रार्थना स्वीकार करली।

राजा की स्वीकृति पाकर भद्रा ने सहस्रपाक आदि तेल मगवाकर राजा तथा अभयकुमार की मालिश करवाई। राजा उस सुगधित तेल के सौरभ से दङ्ग रह गया। सोचने लगा, वाह ! यह कितना उत्तम तेल है !

मालिश हो जाने के वाद राजा श्रेणिक को स्नान-मण्डप मे रत्नो की चौकी पर बिठलाया गया। राजा स्नान-मण्डप की शोभा देखकर और भी मुग्ध हो गया।

स्नान कर लेने और शरीर पोंछ लेने के वाद राजा को देवदत्त वस्त्र पहिनने के लिये दिये गये। राजा उन अपूर्व दिव्य वस्त्रो को देख कर कहने लगा—यह वस्त्र हमारे काम के नही है। आज इन वस्त्रो को पहिन लेगे तो कल क्या पहिनेंगे ? अतएव अपने ही वस्त्र पहिनना उचित है। इन वस्त्रो से तो हमारी लाज नही रहेगी। इस प्रकार कह कर राजा ने अपने ही वस्त्र धारण किये।

इसके वाद राजा की दृष्टि अचानक अपनी उगलियो की ओर चली गई और तुरन्त ही उसके चेहरो पर उदासी दौड गई। वात यो हुई कि राजा की उगली मे एक अत्यन्त मूल्यवान् अगूठी थी। माणिक जडी वह अगूठी सारे राज्य का सार थी। माणिक ऊची कीमत का होता ही है। शास्त्रो मे भी कहा है कि माणिक सब मणियो का सार है। स्नान करते समय वह अगूठी किसी तरह निकल गई और पानी के साथ किसी ओर वह गई। राजा अपने हाथ मे वह अगूठी न देखकर अत्यन्त उदास हुआ। वह सोचने लगा—

मैंने आज राज्य का सार खो दिया ।

राजा देश का स्वामी होता है फिर भी अंगूठी गुम जाने से उसे चिन्ता हो गई । उसकी उगली अगूठी से खाली हो गई । राजा ने अपनी उगली की सगाई अगूठी से की थी और उसे ब्याह भी दिया था । लेकिन वह परणी' हुई अगूठी भी उसे छोड़कर चली गई । वह तो गई सो गई ही साथ ही राजा का अपमान भी कर गई । इसीलिये मीरां ने कहा है–

संसारी नो सुख काचो
परणीने रडावू पाछो ।
तेने घेर शिव जइए रे मोहन प्यारा ॥

जो परणगी उसे ही कभी न कभी रांड बनना पड़ेगा । मगर कुवारी रहने वाली रांड क्यों बनेगी ? यही बात मुदरी के लिए भी है । उगली को पहले से ही अगर नजरे मे न रखते तो आज वह खाली क्यों दीखती और चिन्ता किसलिए करनी पड़ती ? हिम्मत वाला मद हानि होने पर प्रकट म तो नही रोता मगर चित्त तो उसका भी उदास हो जाता है । राजा का मुह उतर गया ।

लोग गहने पहिन कर टेढे-टेढे चलते है मगर सच्चाई देखी जाय तो गहनों से कभी किसी को शान्ति नही मिलती ।

राजा के मुह की उदासी और खाली उगली देखकर मद्रा ताड़ गई । उसने अपनी दासियो म कहा—स्नान करते समय महाराज की मुन्दरी गिर गई है जाओ ढूढ लाओ ।

दासियां गई । मगर अगूठी न मालूम किस ओर वह गई थी । बहुत खोजने पर भी कही नही दिखाई दी । मद्रा

ने दासियो को एक खास इशारा करते हुए फिर खोज करने की ताकीद की। अवकी वार दासिया भद्रा का अभिप्राय समझ गई और एक थाल भरकर अगूठिया और दूसरे आभूपण ले आई। भद्रा ने थाल श्रेणिक के सामने रख दिया और कहा—महाराज, ये सभी आपकी ही तो हैं। आपको जो पसन्द हो रख लीजिए।

श्रेणिक के विस्मय का पार न रहा। उसने विचार किया—मैं एक अगूठी के लिये रोता था और यहा उनकी गिनती ही नही है। मेरी कीमती अगूठी इन अगूठियो के सामने कुछ भी नही है? और यहा वैसी अगूठी की कोई परवाह ही नही है! सचमुच आज मुझे सच्चे वाण लगे हैं। आज मैं ससार की सच्ची स्थिति समझ पाया हू। वह अगूठी उगली से क्या गिरी, मुझे वैराग्य दे गई?

भद्रा ने राजा की उगली मे अगूठी पहिना दी और गले मे हार डाल दिया। इसके अनन्तर कचन के पाट विछाकर सामने रत्नो की चौकियो पर रतन-जटित थाल रख दिये गये। राजा वह सब देखकर दग था। मन ही मन वह सोचता था—मेरी अगूठी की कई गुनी कीमत के तो यहा थाल ही मौजूद है! अब कौन सेवक है और कौन स्वामी? यह दिव्य सम्पत्ति इनके यहा है और राजा मैं कहलाता हू और ये दास कहलाते हैं।

सच पूछो तो भद्रा भी दास है और राजा भी दास है। नाथ तो शालिभद्र बना है। अलवत्ता भद्रा का विनय और राजा का तत्त्वचितन गजब का है! राजा की नीयत खराव होती तो झगडा पैदा कर सकता था कि तुम्हारे

मैंने आज राज्य का सार खो दिया ।

राजा देश का स्वामी होता है फिर भी अगूठी गुम जाने से उसे चिन्ता हो गई । उसकी उंगली अगूठी से खाली हो गई। राजा ने अपनी उंगली की सगाई अगूठी से की थी और उसे ब्याह भी दिया था । लेकिन वह परणी' हुई अगूठी भी उसे छोड़कर चली गई । वह तो गई सो गई ही साथ ही राजा का अपमान भी कर गई। इसीलिये मीरां ने कहा है–

संसारी नो सुख काचो
परणीने रडावू पाछो ।
तेने घर सिद जइए रे मोहन प्यारा ॥

जो परणगी उसे ही कभी न कभी रांड बनना पड़ेगा । मगर कुंवारी रहने वाली रांड क्यों बनेगी ? यही बात मुंदरी के लिए भी है । उंगली को पहले से ही अगर भरते मे न रखते तो आज वह खाली क्यों रहती और चिन्ता किसलिए करनी पड़ती ? हिम्मत वाला मर्द हानि होने पर प्रकट में तो नहीं रोता मगर चित्त तो उसका भी उदास हो जाता है । राजा का मुंह उतर गया ।

लोग गहने पहिन कर टेढ़े-टेढ़े चलते हैं मगर सच्चाई देखी जाय तो गहनों से कभी किसी को शान्ति नहीं मिलती ।

राजा के मुंह की उदासी और खाली उंगली देखकर भद्रा ताड़ गई । उसने अपनी दासियों से कहा—स्नान करते समय महाराज की मुंदरी गिर गई है जाओ ढूंढ लाओ ।

दासियां गई । मगर अगूठी न मालूम किस ओर बह गई थी । बहुत खोजने पर भी कहीं नहीं दिखाई दी । भद्रा

अपनी देखरेख मे तैयार हुई रसोई लेकर आ पहुची। रसोई देखकर राजा दग रह गया। उसने सोचा—हम तो अभी तक इतना भी नही जानते कि भोजन क्या होता है! इसे कहते हैं भोजन!

भद्रा ने राजा को मेवा और मिष्टान्न परोसा।

प्रश्न होता है—मेवा बडा या मिष्टान्न ?

'मेवा ?'

फिर आप बादामो को बिगाड कर बरफी क्यो बनाते है ? वास्तव मे आप यह जानते ही नही कि मेवा क्या है और मिष्टान्न क्या है!

वस्तु का मिठास उसकी स्वाभाविकता मे है। मेवे मे जो मीठापन है, वह उसी मे है। कई लोग दूध मे शक्कर डाल कर उसे मीठा करते हैं, यह अज्ञान है कुरुचि है। वस्तु को किस प्रकार मीठा बनाना चाहिए, यह बात लोग समझते नही है, फिर भी उसे मीठा बनाने का प्रयत्न करते हैं। अच्छी गाय के दूध मे जो स्वाभाविक मिठास होगी, वह मिठास क्या शक्कर डालने से आ सकती है ? नही। बहुतेरे लोग आम के रस मे शक्कर डालकर उसे मीठा बनाते हैं मगर जो आम-रस खट्टा है उसे शक्कर डालकर मीठा बनाना तो विकृति पैदा करना है। लोग अपनी विकृत रुचि के कारण वस्तुओ को विकृत कर डालते हैं।

वस्तु की परीक्षा पहले आखें करती है। एक कटोरा दूध का और एक रक्त का भरा हुआ हो तो दोनो में से कौन-सा कटोरा आखो को प्रिय लगेगा ? निस्सदेह दूध का कटोरा प्रिय लगेगा और रक्त देखकर घृणा होगी।

पास यह सम्पत्ति आई कहां से ? लेकिन शालिभद्र माता और राजा—तीनों धर्मप्रिय हैं । शालिभद्र की सम्पत्ति देख कर भी राजा के हृदय में डाह नहीं हुई । उसे पुण्य का यह फल देखकर आन्तरिक हर्ष हो रहा है ।

मित्रो ! आप लोगों को दुःख क्यों है ? अगर खाने पीने का दुःख हो तब तो सिर्फ आध सेर आटे की ही बात है और उसकी पूर्ति होना कठिन नहीं है । अगर असली दुःख यह नहीं है । असली दुःख ईर्ष्या का है । उसके पास अमुक वस्तु है और मेरे पास नहीं है इस भावना की पूर्ति के लिए जितना भी हो थोड़ा है । वास्तव में परायी वस्तु देखकर रोना पुण्य-पाप को न जानने का ही फल है ।

राजा श्रेणिक न तो व्रतधारी श्रावक था और न सामायिक ही जानता था सिर्फ समकितधारी दर्शन-श्रावक था । उसने पूनिया श्रावक की एक सामायिक खरीदनी चाही थी पर वह भी उसे नहीं मिल सकी । लेकिन आप सामायिक जानते हैं और करते हैं । अतएव दूसरे के धन को देखकर हृदय में होली न जलाओ । पुण्य-पाप को समझो ।

राजा अभयकुमार से कहता है—अभय पुण्य के फल को देखो तो सही । इस घर की स्त्रियां एक दिन पहिने गहनों को दूसरे दिन ऐसे फेंक देती हैं जैसे कोई फूल को दूसरे दिन फेंक देता है और फिर उसकी ओर देखता भी नहीं । मैं अपनी अंगूठी के लिये ही सूखा जा रहा था मगर इस घर में कोई एक दिन का गहना दूसरे दिन पहिनता ही नहीं है ।

राजा इस प्रकार कह रहा था उसी समय भद्रा

जबर्दस्ती पेट मे भोजन ठूसने के उद्देश्य से दस तरह के शाक और चटनी-आचार आदि का आसरा लेते हैं। इतना करके भी क्या आप अकेले जगल को पार कर सकते है ? नही, सिर्फ खाने मे ही शूर है। शूर तो वे हैं जो कडाके की भूख लगने पर चने चबा कर मस्त रहते है और जिन्हे आपके समान चोचले नही आते।

श्रेणिक सोचते है—भोजन की क्रिया आज मेरी समझ मे आई। भद्रा भोजन परोस कर ऐसी मीठी वोली कि उसका चित्त प्रसन्न हो गया। वह कहने लगा—वास्तव मे इस घर के लोग वडे समभदार है। सब देव के समान मालूम होते हैं। दरअसल देव के समान वही कहलाते है, जिनकी खाने-पीने आदि की क्रिया उच्च श्रेणी की है।

भोजन के पश्चात् तरह-तरह की वहुमूल्य वस्तुए उपहार मे देकर भद्रा ने राजा श्रेणिक को विदा किया। भद्रा के घर आकर यद्यपि श्रेणिक ने वहुमूल्य वस्तुए पाई, लेकिन उनसे भी अधिक मूल्यवान् जो वस्तु उसे मिली, वह थी हृदय की जागृति। पुण्य का प्रभाव प्रत्यक्ष देखकर मगध सम्राट् के हृदय मे एक अपूर्व जागृति उत्पन्न हुई। नवीन भावना लेकर वह भद्रा के घर से रवाना हुआ।

१६ : शालिभद्र की विरक्ति

[illegible] नेणिक के पास से हटकर शालिभद्र अपनी
[illegible] ऊपर चला गया। वह अपने स्थान पर
इस [illegible] जैसे कोई योगी परमात्मा के साथ आत्मा
की [illegible] हो। उसकी पत्निया उसका चेहरा देख

आंखो के बाद नाक भी बारी आती है। नाक सूंघ कर बतलाती है कि वस्तु कैसी है? प्याज का सूंघ कर ही नाक बतला देती है कि तामसिक वस्तु है। फिर भी लोग उसे खा जाते हैं। सूखी मछली बड़ी बदबू देती है फिर भी खाने वाले उसे भी नहीं छोड़ते। यह सब चीज आपके लिए हानिकारक है। मैं आपसे ऐसी चीज त्यागने के लिए नहीं कहता जिससे आपका निर्वाह ही न हो परन्तु जो वस्तु शरीर को और बुद्धि को हानि पहुंचाती है उसका त्याग अवश्य कर देना चाहिए।*

आंख और नाक के बाद जीभ परीक्षा करती है। मिर्च को अगर आप हाथ पर मलें तो हाथ जलने लगेगा। जीभ पर रखते हैं तो जीभ जलने लगती है। प्रतिदिन मिर्च का व्यवहार करने से कई लोगों को उसका तीखापन खटकता नहीं है फिर भी तीखापन तो है ही। कुछ दिनों तक आप मिर्च खाना छोड़ दीजिए और फिर खाइये तो आपको पता लगेगा कि उसमें कैसा तीखापन है। फिर भी भोजन-शूर लोग यह सब नहीं देखते। उनका भोजन जीभ के लिए ही होता। शरीर चाहे बिगड़े चाहे सुधरे इसकी उन्हें परवाह नहीं।

जीभ भोजन के विषय में पूरी जानकार है। सादे भोजन के सहारे सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया जा सकता है। बादाम की कतली पर दो महिने निकालना भी कठिन है। कहावत है—'जो रचे सो पचे।' लेकिन अधिकांश लोग

---

* इस व्याख्यान में बहुत से श्रोताओं ने कांदा लहसुन खाने का त्याग किया था।

जबर्दस्ती पेट मे भोजन ठूमने के उद्देश्य से दस तरह के शाक और चटनी–आचार आदि का आसरा लेते हैं। इतना करके भी क्या आप अकेले जगल को पार कर सकते है ? नहीं, सिर्फ खाने मे ही शूर है ! शूर तो वे है जो कडाके की भूख लगने पर चने चबा कर मस्त रहते हैं और जिन्हे आपके समान चोचले नही आते ।

श्रेणिक सोचते है—भोजन की क्रिया आज मेरी समझ मे आई । भद्रा भोजन परोस कर ऐसी मीठी बोली कि उसका चित्त प्रसन्न हो गया । वह कहने लगा—वास्तव मे इस घर के लोग बडे समझदार हैं । सब देव के समान मालूम होते है । दरअसल देव के समान वही कहलाते है, जिनकी खाने-पीने आदि की क्रिया उच्च श्रेणी की है ।

भोजन के पश्चात् तरह–तरह की बहुमूल्य वस्तुए उपहार मे देकर भद्रा ने राजा श्रेणिक को विदा किया । भद्रा के घर आकर यद्यपि श्रेणिक ने बहुमूल्य वस्तुए पाई, लेकिन उनसे भी अधिक मूल्यवान् जो वस्तु उसे मिली, वह थी हृदय की जागृति । पुण्य का प्रभाव प्रत्यक्ष देखकर मगध सम्राट् के हृदय मे एक अपूर्व जागृति उत्पन्न हुई । नवीन भावना लेकर वह भद्रा के घर से रवाना हुआ ।

१९ : शालिभद्र की विरक्ति

राजा श्रेणिक के पास से हटकर शालिभद्र अपनी पत्नियो के साथ ऊपर चला गया । वह अपने स्थान पर इस प्रकार बैठा जैसे कोई योगी परमात्मा के साथ आत्मा की भेट करा रहा हो । उसकी पत्निया उसका चेहरा देख

कर चिंतित हो गई आपस में कहने लगीं—आज स्वामी में बड़ा परिवर्तन दिखाई दे रहा है। आज इनका रूप भी कुछ निराला है।

आज प्रायः सर्वत्र गुलामी की उपासना हो रही है। लोगों ने परतन्त्रता को ही जीवन समझ रखा है। ऐसे लोगों को शालिभद्र का चरित खेद पैदा कर सकता है। अशक्त आदमी सूर्य के ताप को नहीं सह सकता। वह सूर्य को दोष देता है और चाहता है कि सूरज अस्त हो जाय तो अच्छा। इसी प्रकार आज लोगों की आत्मा कायरता के बन्धनों मे ऐसी बुरी तरह जकड़ गई है कि वे इस चरित का सहन नहीं कर सकते। मगर कायरों के चाहने से सूर्य अस्त नहीं हो जाता। वह अपने स्वभाव के अनुसार चमकता ही रहता है इसी प्रकार यह चरित भी सूर्य की भांति चमकता ही रहेगा।

शालिभद्र अपने मन में विचार करने लगा—सज्जन थोड़ा थोड़ा कैसे सह सकता है? वीर क्षत्रिय मृत्यु का आलिंगन करना पसन्द करता है मगर किसी का दू—तड़ाका सहन नहीं करता तो क्या मैं राजा की गुलामी सहन करूँगा? स्वतन्त्रता की सादगी भली परतन्त्रता की रंग रेलियां भली नहीं। मै राजा की दासता किसी भी अवस्था मे सहन नहीं कर सकता।

रावण ने सीता से कहा था—ये उत्तम वस्त्र और आभूषण जो मन्दोदरी लेकर आई है धारण करो और आनन्द मनाओ। वास मे यह सुकुमार शरीर ढंक कर राम के साथ जगल जगल भटकते फिरने मे क्या रखा है? मेरे साथ रह कर जीवन सफल करो।

सीता, राम के अधीन तो थी, मगर आत्मधर्म की रक्षा करते हुए स्वेच्छा से किसी की अनिवार्यता अधीनता स्वीकार करना बुरा नही है। रावण तो सीता का धर्म ही छुडाना चाहता था। तव सीता को क्या करना चाहिये था ? गरीवी मे रहना चाहिए था या अमीरी मे ?

'गरीवी मे।'

और आपको ? आपको भोजन और वस्त्रो की चिन्ता से छुटकारा नही है। आप सोचते हैं—विलायत से कपडे न आएगे तो क्या करेंगे ? आप मे आज शक्ति नही रही है। इसी कारण आप विलायती वस्त्र नही त्याग सकते। आपको धर्म का विचार नही, अधर्म से वचने की प्रवल आकाक्षा भी नही। शक्कर मे गाय की हड्डिया और केशर मे गाय की आतें भले हो, लोगो को हर्ज नही मालूम होता।

सीता मे उदात्त धर्मभावना थी। उसने रावण के दिये वस्त्रो और आभूपणो को धर्म की रक्षा के निमित्त घृणा के माथ ठुकरा दिया।

उधर राजा श्रेणिक मे भी आज नवीन चेतना और नयी स्फूर्ति आई है। उसने अभयकुमार से कहा—अभय, आज अन्त करण मे अपूर्व भावना का उदय हो रहा है। यह सुन कर अभयकुमार ने कहा—पिताजी, शालिभद्र के घर का अन्न निर्दोष है। वह किसी को सताकर, किसी को लूटकर या धोखा देकर नही कमाया गया है। उसी अन्न के प्रभाव से अन्त करण मे नवीन जागृति मालूम होती है।

इधर शालिभद्र सोचता है—घर की पतली छाछ जैसा

आनन्द देती है वैसा आनन्द पराये घर का वहीं भी नहीं दे सकता । देवलोक से आने वाले वस्त्र और आभूषण पराये घर के हैं ये मेरे काम के नहीं । मैं संयम धारण करूंगा पराधीनता स्वीकार नहीं करूंगा ।

आत्मकल्याण का जो अवसर आपको मिला है उसे खो देना उचित नहीं है । मानव-जीवन ही आत्मा के श्रेयस् का सर्वोत्तम साधन है । अतएव प्रत्येक मनुष्य को यथा-शक्ति आत्मोन्नति के कार्य में लग जाना चाहिए और अगर उच्चतम जीवन व्यतीत करने की शक्ति न हो तो भी कम से कम उसे बिताने की भावना तो रखनी ही चाहिए । रामचन्द्रजी कहते हैं—

अपूर्व अवसर एहवो क्यारे आवशे
क्यारे थईशुं बाह्याभ्यन्तर निर्ग्रन्थ जो ।
सब सबन्धनुं बंधन तीक्ष्ण छेदिने
विचरशुं क्यारे महत्पुरुषना पंथ जो । अपूर्व ।

श्रावकों की यह भावना होती है कि वह अवसर कब आयेगा जब मैं निर्ग्रन्थ बनूंगा । ठाणांग सूत्र में श्रावकों की भावनाएं बतलाई गई हैं । उनमें एक भावना यह भी है कि कब मैं बाहर से धन धान्य आदि को और भीतर से काम क्रोध आदि को त्याग करके महापुरुष के पथ पर विचरण करता हुआ आत्मस्मरण करूंगा ?

शालिभद्र के अन्तःकरण में आज यही भावना जागृत हुई है । शालिभद्र के लिए देवलोक से सम्पत्ति आती थी फिर यह विचार करता है कि सांसारिक भोगोपभोगों की सामग्री मुझे नाथ नहीं बनाती है बल्कि अनाथ बनाती है ।

इस सम्पत्ति की अपेक्षा, स्वतन्त्रता देने वाली गरीवी ही मेरे लिए भली है ।

मित्रो ! आपको त्याग की मेरी ये वाते पसन्द न होगी, फिर भी मैं आपको मुनाने जा रहा हू । मैं मानता हू कि इस पथ का अनुसरण किये विना आपका वास्तविक कल्याण नही हो सकता । कोई पराधीन होकर सुखी नही वन सकता ।

पराधीन सपनेहु सुख नाही ।

पराधीनता मे सुख मानना आत्मा की गिरी हुई दशा की सूचना है । अगर आपने इस सत्य को समझ लिया हो तो आप यह वारीक और मुलायम वस्त्र, जो आत्मा को गिराने वाले है, कभी धारण न करें ।

शालिभद्र ने स्वाधीनता का मार्ग समझा था । इसी कारण वह कहता है—मैं अपने ऊपर किसी दूसरे को नाथ नही रख सकता । मैं दूसरे की आज्ञा अपने पर नही चलने दूगा । अष्टापद का छोटा वालक भी मेघ के गरजने पर अभिमान करके कहता है कि मेरे सामने कौन गरजता है ? वह अपने पराक्रम से पर्वत मे सिर लगाकर कहता है—मैं इतना पराक्रमी हू, फिर भी मेरे सामने गर्जना करने वाला यह कौन है ? जव एक जानवर भी दूसरे की गर्जना नही सह सकता तो मैं मनुष्य होकर अपने ऊपर नाथ का होना कैसे स्वीकार करू ? मैं अनाथ रहू और राजा मेरा नाथ हो, यह न सह सकना मेरी आत्मा की स्वाभाविकता है ।

शालिभद्र अपने ऊपर नाथ न होने देना स्वाभाविकता

बतलाता है तो क्या यह अष्टापद के बालक की तरह पर्वत से सर टकराएगा ? अगर शालिभद्र श्रेणिक राजा को राज्य से च्युत करके आप राजा बनना चाहता तब तो यह कहना ठीक भी होता मगर उसने अपने लिए जो रास्ता चुना है वह सिर टकराए बिना ही स्वयं नाथ बनने का रास्ता है ।

शालिभद्र सोचता है—संयम ग्रहण करने से दो लाभ है । प्रथम तो परलोक के लिए अविचल राज्य स्थापित हो जाता है दूसरे इस भव में कोई नाथ नहीं रहता वरन् स्वतन्त्रता मिलती है । यह एक पंथ दो काज है ।

आज लोग समझते है कि देव और गुरु तो परलोक के लिए है और भैरो भवानी इस लोक के लिए है । लेकिन भगवान् में क्या भैरों जितनी भी करामात नहीं है ? अगर है तो इस लोक के भैरोजी को नाथ बनाने की क्यों आवश्यकता पड़ती है ।

शालिभद्र जब राजा के पास से अपने स्थान पर पहुचा तो उसके हृदय मे इसी प्रकार मथन हो रहा था । जब हृदय-मथन गहराई तक पहुचता है तब चेहरे पर उसकी छाप पड़े बिना नहीं रहती और दूसरी चेष्टाए भी बदल जाती है । शालिभद्र अपनी जगह आकर विचार में मग्न हो गया । उसके चेहरे पर गम्भीरता छा गई । वह सोच रहा था—संयम के सिवाय दूसरा कोई नाथ बनाने वाला नहीं है । राजा के आने से आज मुझे ससार की ठीक-ठीक स्थिति का भान हो गया । अब तक इस सम्पत्ति के कारण मैं अपने को नाथ समझता था आज मालूम हुआ कि यही सम्पत्ति तो अनाथ बनाने वाली है ।

ध्यानस्थ शालिभद्र को मूर्ति की तरह अचल बैठा देखकर बत्तीसो स्त्रिया आपस मे कहने लगी—आज क्या कारण है कि पतिदेव न हसते है, न बोलते हैं। नीचे से ऊपर आते ही मन मे न जाने क्या परिवर्त्तन हो गया है।

दूसरी ने कहा—आज स्वामी की गम्भीर मुखमुद्रा के सामने देखने की भी हिम्मत नही होती। आज उनकी आखो से हमारे प्रति स्नेह नही टपकता। आखो मे एक प्रकार का रूखापन आ गया है। कारण समझ मे नही आता।

तीसरी बोली—आज तक हम मे से कोई भी जब स्वामी के सामने जाती तो स्वामी सत्कार करके बात करते थे, बिठलाते थे और प्रेम के साथ विदा करते थे। इस मर्यादा को उन्होने कभी भग नही किया। लेकिन आज बोलते भी नही है।

चौथी पूछने लगी—क्या किसी को इसका भेद मिला है? मुझे तो कोई कारण समझ मे नही आया। सिर्फ इतना ही देखती हू कि आज उनके सामने हाथ जोडकर चार पहर तक खडी रहो तो भी वे न पूछेगे कि तुम क्यो खडी हो? क्या करोगी? कहा जाओगी? आज उन्होने अपने नेत्रो को और वचनो को भी वश मे कर लिया है। वे न देखते हैं, न बोलते हैं। आज उन्होंने मन पर भी पूरा काबू कर लिया जान पडता है।

नेत्र मन की बात बाहर प्रकट कर देते है। जब नेत्र स्थिर हो तो समझा जाता है कि मन भी स्थिर है और नेत्र जब चञ्चल होते हैं तब मन भी चञ्चल समझा

बतलाता है तो क्या यह अष्टापद के बालक की तरह पर्वत से सर टकराएगा ? अगर शालिभद्र श्रेणिक राजा को राज्य से च्युत करके आप राजा बनना चाहता तब तो यह कहना ठीक भी होता मगर उसने अपने लिए जो रास्ता चुना है वह सिर टकराए बिना ही स्वयं नाथ बनने का रास्ता है ।

शालिभद्र सोचता है—संयम ग्रहण करने से दो लाभ हैं । प्रथम तो परलोक के लिए अविचल राज्य स्थापित हो जाता है दूसरे इस भव में कोई नाथ नहीं रहता वरन् स्वतन्त्रता मिलती है । यह एक पंथ दो काज है ।

आज लोग समझते हैं कि देव और गुरु तो परलोक के लिए हैं और भैरों-भवानी इस लोक के लिए हैं । लेकिन भगवान् में क्या भैरों जितनी भी करामात नहीं है ? अगर है तो इस लोक के भैरोजी को नाथ बनाने की क्या आवश्यकता पड़ती है ।

शालिभद्र जब राजा के पास से अपने स्थान पर पहुंचा तो उसके हृदय में इसी प्रकार मंथन हो रहा था । जब हृदय-मंथन गहराई तक पहुंचता है तब चेहरे पर उसकी छाप पड़े बिना नहीं रहती और दूसरी चेष्टाएं भी बदल जाती हैं । शालिभद्र अपनी जगह आकर विचार में मग्न हो गया । उसके चेहरे पर गम्भीरता छा गई । वह सोच रहा था—संयम के सिवाय दूसरा कोई नाथ बनाने वाला नहीं है । राजा के आने से आज मुझे संसार की ठीक-ठीक स्थिति का भान हो गया । अब तक इस सम्पत्ति के कारण मैं अपने को नाथ समझता था आज मालूम हुआ कि यही सम्पत्ति तो अनाथ बनाने वाली है ।

नही । ज्ञानी पुरुप इस कहावत को दूर तक ले जाते हैं । शालिभद्र ने भी अपने-पराये की समस्या को अपने विचार का केन्द्र बनाया ।

उधर आठवी स्त्री कहने लगी—पति का ऐसा रूठना तो कभी नही देखा । आज हमारा भाग्य है कि उन्होने अपना तिरस्कार कर दिया । न मालूम हमसे क्या चूक हो गई है, अपने मे उन्हे कौन-सा दुर्गुण दिखाई दिया है ? ऐसा क्या अपराध बन गया है कि प्राणनाथ आज अपनी तरफ आख उठाकर भी नही देखते ? अपराध होता भी तो एक का होता, दो का होता । सबका तो हो नही सकता । और बिना ही किसी अपराध के ऐसा रूखा मन धारण करना कहा तक उचित है ?

नवी बोली—क्रोध का तो लेश भी उनके चेहरे पर नही जान पडता । स्वामी की मुखमुद्रा तो योगियो की तरह गम्भीर है ।

दसवी —भले ही क्रोध न हो बहिन, अगर वे सहज रीति से अपनी ओर न देखे, न बोले तो क्रोध न होने पर भी अपना जीवन तो निस्सार ही हो जायगा ।

पतिव्रता की जैसी भावना पति के प्रति होती है, वैसी परपुरुष की ओर कभी नही होती । सीता को रावण ने कितने ही प्रलोभन दिये, मगर वह अपने निश्चय पर अचल रही, तिल भर भी अपने सकल्प से नही डिग सकी ।

सीता, राम मे ही तल्लीन थी । उसे पर–पुरुप को

जाता है ।

पांचवी ने कहा—वास्तव मे ही आज पति म अद्भुत परिवर्तन दिखाई दे रहा है । यह मत समझना कि रंग दिखाने के लिए ऐसा कर रहे है । आज कोई न कोई गम्भीर बात अवश्य है देखो न उनकी चित्तवृत्ति कितनी स्थिर मालूम होती है ।

मन की एकाग्रता ही योग की सिद्धि है । चित्तवृत्ति को रोकना ही योग कहलाता है । मन की एकाग्रता प्राणायाम आदि की साधना से होती है । मगर जिन महापुरुषों ने पहले सुपात्रदान आदि किसी ऊचे कर्तव्य का पालन किया है वे किसी निमित्त को देखने मात्र से ही यह सिद्धि प्राप्त कर लेते है । उनका चित्त अनायास ही इह लोक की बाता म निकल कर परलोक की बातो म चला जाता है ।

छठी स्त्री ने कहा—सखियाँ इन सुन्दर सुकुमार शरीर और प्रभात के इशारो म समझने वाले पतिदेव की हमम से किसी ने आशातना तो नही की है ?

सातवी—ऐसा होता तो हमें देखकर कम से कम मुंह तो बिगाडते ! चेहरे पर रोष तो दिखाई देता ? पर न मुह बिगडा दिखता है न रोष ही दिखाई देता है ! हमारे प्रयत्न करने पर भी उनके चेहरे पर कोई बात नही मालूम होती ।

इधर शालिभद्र बैठा हुआ चिन्तन कर रहा है । वह सोच रहा है जिस वस्तु से आत्मा अनाथ बनती है उसे अपनी न समझना ही श्रेयस्कर है ।

कहावत है—जो अपना पराया न समझे वह मनुष्य

गई तो जीवन का स्वाद मारा जायगा। आज पतिदेव आसन जमाकर योगी बन रहे है। मगर बिना बताए कैसे पता चले कि इस समाधि का कारण क्या है! कौन जाने हमसे रूठ गये हैं या वैराग्य लिये बैठे हैं? रूठने का कोई कारण उपस्थित नही हुआ है और वैराग्य की भी सभावना नही है। न यहा कोई आया है और न यह किसी के पास गये है कि किसी का उपदेश सुनकर वैराग्य हो गया हो। अत इस उदासीनता का कारण इन्ही से पूछना चाहिए। अगर यो पूछने पर न बोलें तो हाथ लगा कर उनका ध्यान भग करना और पूछना चाहिये कि हमारी किस चूक के कारण आप इस तरह उदास बैठे हैं? कहना चाहिये कि अगर हमारी कोई भूल हुई है और उसी मे आपको कष्ट पहुचा है तो हम आग मे जलकर, पानी मे डूब कर या अपनी जीभ खीच कर मरने को तैयार है। अगर हमारी कोई भूल नही है तो आपको इस प्रकार निठुर नही बनना चाहिये। वास्तव मे पति का रूठना हमारे लिए ऐसा है, जैसे मछली के लिए पानी का सूख जाना या भ्रमर के लिए केतकी का सूख जाना।

पतिव्रता स्त्री की भावना पति के प्रति कैसी होनी चाहिये, यह यहा बतलाया गया है। पतिव्रता के इस उदाहरण को ज्ञानीजन ऊपर तक ले जाते है और यही बात परमात्मा की भक्ति के लिये मानते है। पत्नी का पति के प्रति जो गहरा अनुराग होता है, उसी अनुराग को अगर आगे बढाकर परमात्मा के साथ जोड दिया जाय तो वह वीतराग के रूप मे परिणत हो जाता है और आत्मा को तार देता है।

खबर हो नहीं थी इसी प्रकार शालिभद्र भी अपने संयम के विचार में निमग्न है। कहा भी है—

ज्यों पनिहारी कुंभ न विसरे नटवो वृत्त निधान।
पलक न विसरे हो पदमणी पिउ भणी चकवी विसरे नभाम॥

यह भावना योगियों की है। शालिभद्र की स्त्रियां केवल पिउ तक ही पहुंची है शालिभद्र ऊंचा पहुंच गया है। उसका सन्देश है—जैसा तुम मुझे प्रेम करती हो वैसा ही मैं भी अपने पति से प्रेम करता हूं।

महल में बैठी हुई शालिभद्र की सभी स्त्रियों की दृष्टि शालिभद्र पर है और शालिभद्र की दृष्टि परमात्मा पर है। उसकी स्त्रियां उन हाव भाव दिखलाकर प्रसन्न करना चाहती है। यह देखकर शालिभद्र सोचता है—यद्यपि मैं इनका नाथ नहीं हूं फिर भी ये मुझे नाथ मानकर कल्पित नाथ से इतना प्रेम करती है तो मुझे अकृत्रिम नाथ से कैसा प्रेम होना चाहिये?

देखा जाय तो एक बात में शालिभद्र की उत्कृष्टता है और दूसरी में उसकी पत्नियों की। पति से प्रेम नहीं करेगी जो सती होगी। असती पति से प्रेम नहीं करती। जैसे सीता राम में मग्न थी उसी प्रकार ये बत्तीस स्त्रियां शालिभद्र में मग्न है। इन सबका जीवन एकमात्र शालिभद्र ही है। इसी कारण शालिभद्र के न बोलने पर भी वे हाव भाव दिखला रही है।

वे सब स्त्रियां आपस में विचार करती है—मन के मुर्झा जाने से काम नहीं चलता। स्त्रियां सहित चाकस त्याग नहीं दे सकता। इसी तरह मन में अगर दुःखी रह

गई तो जीवन का स्वाद मारा जायगा। आज पतिदेव आसन जमाकर योगी बन रहे है। मगर विना वताए कैसे पता चले कि इस समाधि का कारण क्या है! कौन जाने हमसे रूठ गये हैं या वैराग्य लिये वैठे हैं? रूठने का कोई कारण उपस्थित नही हुआ है और वैराग्य की भी सभावना नही है। न यहा कोई आया है और न यह किसी के पास गये है कि किसी का उपदेश सुनकर वैराग्य हो गया हो! अत इस उदासीनता का कारण इन्ही से पूछना चाहिए। अगर यो पूछने पर न वोलें तो हाथ लगा कर उनका ध्यान भग करना और पूछना चाहिये कि हमारी किस चूक के कारण आप इस तरह उदास वैठे है? कहना चाहिये कि अगर हमारी कोई भूल हुई है और उसी से आपको कष्ट पहुचा है तो हम आग मे जलकर, पानी मे डूव कर या अपनी जीभ खीच कर मरने को तैयार हैं। अगर हमारी कोई भूल नही है तो आपको इस प्रकार निठुर नही वनना चाहिये। वास्तव मे पति का रूठना हमारे लिए ऐसा है, जैसे मछली के लिए पानी का सूख जाना या भ्रमर के लिए केतकी का सूख जाना।

पतिव्रता स्त्री की भावना पति के प्रति कैसी होनी चाहिये, यह यहा वतलाया गया है। पतिव्रता के इस उदाहरण को ज्ञानीजन ऊपर तक ले जाते है और यही वात परमात्मा की भक्ति के लिये मानते हैं। पत्नी का पति के प्रति जो गहरा अनुराग होता है, उसी अनुराग को अगर आगे वढाकर परमात्मा के साथ जोड दिया जाय तो वह वीतराग के रूप मे परिणत हो जाता है और आत्मा को तार देता है।

शालिभद्र की पत्नियां उससे कहने लगीं—प्राणनाथ ! प्रियतम ! हमारी ओर आंख उठाकर देखिए तो सही । आप गुणवान् विवेकवान हैं । अगर हमारी कोई चूक हुई हो और वह क्षमा करने योग्य न हो तो आपको हमारी अवज्ञा करने का अधिकार है । मगर बहुत विचार करने पर भी हमें अपना अपराध दिखाई नहीं देता । फिर आप महापुरुष होकर इस तरह क्यों रूठे है ? आपने हमारा हाथ पकड़ा है । हम तो आपसे रूठती नहीं उल्टे आप हमसे रूठ रहे हैं ।

मित्रो ! हथलेवा क्या चीज है ? भले आदमी जीभ से कही बात भी नहीं बदलते तो जिन्होंने पाणिग्रहण किया है वे किस प्रकार बदल सकते हैं ?

बांह बदल नारी बदल वचन बदल बेसूर ।
यारी कर क्वारी कर तिनके मुह मे धूर ॥

शालिभद्र की पत्नियां कहती हैं— अकारण ही हम अबलाओं की अवज्ञा करना क्या आपके लिए उचित है ? हम तो बिजली की तरह है फिर हमारे ऊपर इतना क्रोध क्यों ? अगर कोई भूल हो गई है तो उसे कृपा करके प्रकट तो कर दीजिये ? यह मंदिर—महल शय्या और आप हम सब वे ही हैं जो पहले थे । लेकिन आज आप और हम दो दीखते हैं । इसका कारण क्या है ? आज आपके नेत्रों में सदा जैसा प्रेम दिखाई नहीं देता । इसलिये हमें सर्वत्र सूनापन नजर आता है ।

शालिभद्र की पत्नियां कह रही हैं कि प्राणनाथ की कृपादृष्टि के बिना हमें सर्वत्र सूनापन दिखाई देता है ।

सका कुछ मर्म समझे ? आपका भी कोई प्राणनाथ है या हीं ?

धर्म जिनेश्वर ! मुझ हिवडे वसो,
प्यारा प्राण समान,
पलक न विसरे हो पद्मणी पिउ भणी,
चकवी विसरे न भान । धर्म जिनेश्वर० ।

क्या आप परमात्मा को ऐसा भी नही समझते, जैसा शालिभद्र की पत्निया शालिभद्र को समझ रही है ? यदि इससे अधिक समझते हैं तो क्या परमात्मा की कृपा विना आपको ससार सूना दीखता है ?

व्रत नियमो का यथावत् पालन होता रहे, यह परमात्मा की कृपा है । जहा परमात्मा की यह कृपा न हो, वहा मिलने वाले राज्य को भी सम्यग्दृष्टि पुरुष त्याग देने मे सकोच नही करेगा । ऐसा हो तो समझना चाहिये कि आपमे परमात्मा के प्रति पतिव्रता की-सी भक्ति है, अन्यथा आप भी गहनो के लिये पति का आदर करने वाली स्त्रियो के समान समझे जाएगे ।

सुदर्शन सेठ को नियम भङ्ग करने मे राज्य मिलता था और नियम न भङ्ग करने से सूली पर चढना पडता था । एक ओर सासारिक सुख और राज्य था तथा दूसरी ओर सूली थी । दोनो मे से एक चीज सुदर्शन को पसन्द करनी थी । सुदर्शन सेठ ने राज्य पसन्द नही किया—सूली पसन्द की, पर अपना व्रत नही तोडा । व्रत पर दृढ रहने मे अन्त मे सूली भी सिहासन वन गई । साराश यह है कि ईश्वर की कृपा प्राप्त करने के लिये अगर विश्व की समस्त

वस्तुओं को तुच्छ न समझा तो समझना चाहिये कि अभी हृदय में परमात्मा की भक्ति नहीं है।

शालिभद्र की पत्नियां बोली— अगर आप बिना बात ही हमारे प्रति निष्ठुर बने रहेंगे तो सच समझिये कि हम उसी प्रकार प्राण त्याग देंगी जैसे पानी से निकली हुई मछली प्राण त्याग देती है।

इतना कहने पर भी शालिभद्र की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला। इतना अनुनय-विनय भी शालिभद्र का हृदय नहीं डिगा सका। इसका क्या कारण है? क्या शालिभद्र इतना हठी है कि वह निष्कारण ही अपनी पत्नियों को दुःखी बना रहा है? नहीं यह बात नहीं है। वह पूर्ण कृपाभाव प्रकट कर रहा है। वह सोचता है—ये स्त्रियां मुझसे इतना प्रेम रखती है कि प्राण त्यागने को तयार है तो हे आत्मन्! तू अपने स्वामी से प्रेम करने में कहीं कच्चा तो नहीं है? ये जिस तरह मुझे चाहती है उसी प्रकार तू परमात्मा को चाहता है या नहीं? इतना अनुनय-विनय करने पर भी मैं इनका दुःख दूर नहीं कर सकता। यही तो मेरी अनाथता है। मुझे यह अनाथता हटाकर नाथ बनना है। इस प्रकार स्त्रियों की बात शालि-भद्र के विचार-रूपी अग्नि में घी की आहुति का काम कर रही है।

इधर स्त्रियां कहती है— अगर आप हमसे हंसी करते हों तो बस कीजिए। यह समय हंसी का नहीं है। पसली छाछ में अधिक पानी नहीं समा सकता। अधिक पानी डालने से वह बेस्वाद हो जाती है। हम यह सताप सहती

सहती पतली छाछ के समान तो हो गई । अव हममे और ज्यादा दु ख सहने की शक्ति नही रही है । वस, हमे जो कुछ कहना था, कह दिया है । अब कुछ कहना शेष नही रहा । अव कृपा करके पतली छाछ मे पानी मत डालिए ।'

यह सुनकर शालिभद्र विचारने लगा—'वास्तव मे पतली छाछ मे पानी का निभाव नही हो सकता । अधिक पानी डालना छाछ खराब करना है । राजा श्रेणिक के आने से और उनके सम्बन्ध की बाते सुनकर मैं पतली छाछ सा तो हो ही गया था, अब इन स्त्रियो की बातो के पानी के लिए गु जाइश नही रही ।'

उधर स्त्रिया कहती है—नाथ ! जिसने अपराध किया हो, उसे दण्ड दीजिये, परन्तु हम अबलाओ के दिल पर क्यो घाव करते हैं ? सुगुण ! आज तक हम आपके साथ आनन्दपूर्वक विलास करती रही, मगर यकायक क्या हो गया ? आपका वह बोलना, देखना और विलास करना कहा चला गया ? आपको ऐसा ही करना था तो पहले प्रीति जोडी ही क्यो थी ? आपने हमारे साथ विधिपूर्वक लग्न किया है । क्या लग्न विधि की मर्यादा का आज लोप कर देगे ? हमारी कोई चूक हुई हो तो भी आपको उदारता के वश होकर हमारा निर्वाह करना उचित था । मगर विना ही किसी अपराध के ऐसा व्यवहार करना कहा तक उचित है ?'

शालिभद्र सोचता है—'अव तक मैं जानता था कि ससार का सुख सच्चा और स्थाई है परन्तु यह तो झूठा

और अस्थाई निकला। इसलिये सांसारिक प्रेम को ईश्वर तक ले आकर समाप्त कर देने में ही जीवन की सार्थकता है। इसी में मेरा कल्याण है।

शालिभद्र की स्त्रियों का कथन यानू ही था— अगर हमसे कोई भूल हुई होती तो भी उसे सहन कर लेना आपका धर्म था लेकिन हम यह भी नहीं कहती। हमारा कथन तो यह है कि हमारी भूल बतला दें तो हम उसके लिए यथोचित प्रायश्चित्त कर लें। आपका ऐसा व्यापार भी नहीं है जिसमे घाटा लग गया हो और न घर में ही कोई काम बिगड़ा है। स्वर्ग की पेटियां भी प्रतिदिन आ रही हैं। घर का सारा काम-काज माताजी ही करती है वह भी आपको नहीं करना पड़ता। आपके पास अधिक लोग आते-जाते भी नहीं हैं हमी आती हैं। ऐसी अवस्था में सिवाय इसके कि हमसे ही कोई अपराध हो गया हो चिन्ता का दूसरा क्या कारण हो सकता है?

शालिभद्र सोचता है— मेरा काम कैसा-क्या बिगड़ा है इस बात की खबर ही इन्हें नहीं है। लेकिन मेरा जैसा काम बिगड़ा है वैसा शायद ही किसी का बिगड़ा होगा। मेरी सब आवश्यकताएं देवलोक से पूरी होती है फिर भी मेरे सिर पर नाथ क्यों? ये कहती हमारा क्या अपराध है? मगर वास्तव मे अपराध इनका भी है। मैं इनका नाथ न होता तो मेरा नाथ कोई क्यों बनता? मैं चाहता हू इनका नाथ बन कर मैं अनाथ न बनू और न इन्हें ही अनाथ रखू।

शालिभद्र की स्त्रियां अपना ही दोष देख रही हैं और उसके लिए प्रायश्चित करने को तयार है। आजकल

की स्त्रिया भी क्या ऐसा ही करती हैं ? वास्तव मे पति-व्रता स्त्री और भक्तजन अपना ही दोष देखते हैं, दूसरो का नही । अन्यथा कहावत है—

अमल पानी मे कतजी यो कहे ।
राडली, रावड क्यो करयो खारो ।।
राडला कतजी, पीस लो पोयलो ।
आप ही हाथ मुधार लो मारो ।।
धिक्क तू पापिन शखिनी जन्मनी ।
धिक्क तेरो वाप पापी हत्यारो ।।
ऊ खेंचे चोटलो, वा खेचे मू छडी ।
ऐसा-ऐसा स्वांग को धिक्क जमारो ।।

ऐसी स्त्रियो के लिए पतिव्रता का उदाहरण कैसे दिया जाय ? शालिभद्र की स्त्रिया कहती है—'अपराध दूसरे का नही हमारा ही होगा । हम यही चाहती है कि आप हमारा अपराध वता दे और हम उसके लिए प्राय-श्चित्त कर लें ।'

जो पुरुष शालिभद्र की स्त्रियो की तरह अपने ही अपराध देखता है और कहता है—'प्रभो ! अपराध मेरा ही है, इसी कारण मुझमे आपका ध्यान करते नही वनता ।' उसी का कल्याण होता है ।

शालिभद्र की स्त्रिया ज्ञानशून्य नही थी । अगर अशिक्षित होतीं तो इतना अनुनय-विनय न करती । वे स्वय रुठकर वैठ जाती । पर उन्हे शिकायत यह है कि शालिभद्र ने उनका ? कोई अपराध नही वताया और उनकी

ओर से अचानक ही मन खींच लिया है। उन्हें यही व्यथा है। इसी व्यथा के कारण वे व्याकुल है। वे कहती हैं—अगर हम सबका या हममे से किसी का अपराध है तो हमारा मस्तक चाहे काट लें हम यह सहन कर लेंगी मगर अपराध बतलाये बिना रूठना हमें सह्य नही है। वास्तव में भक्त और पतिव्रता की बात सरीखी होती है। ऐसे–ऐसे भक्त हुए है जिन्होने परमात्मा के लिए अपने प्राणों का भी उत्सर्ग कर दिया है। वे कहते थे—परमात्मा मिले अर्थात् ध्यान में आवे यदि ऐसा नही होता—परमात्मा का ध्यान नेही बनता तो इस जीवन की आवश्यकता ही नही है। शालिभद्र की स्त्रियां भी ऐसा ही कह रही है।

पति के असन्तुष्ट हो जाने पर पतिव्रता के लिए यही अन्तिम मार्ग रह जाता है ये स्त्रियां अपनी चूक के लिए सिर कटाने को तैयार है तो मैं अपने पति (परमात्मा) को प्रसन्न करने के लिये क्या करने को तैयार हू ? मैंने परमात्मा का क्या अपराध किया है जिससे श्रेणिक मेरा नाथ बना हुआ है ? मै भी अपने मस्तिष्क पर किसी को नाथ बनकर नही बैठने दू गा। मेरी पत्नियां मेरे जैसे झूठे अनाथ नाथ के लिए भी प्राण देने को तैयार है तो मैं अपने सच्चे त्रिभुवननाथ के लिए जीवन देने में क्यो सकोच करू।

इस प्रकार शालिभद्र अपने विचार में मग्न है और उसकी पत्नियां उससे प्रार्थना कर रही है। शालिभद्र और उसकी स्त्रियां अपने–अपने मन्तव्य पर पूर्ण है। बत्तीसों स्त्रियां तो अपने पतिप्रेम मे निमग्न है और शालिभद्र परमात्मप्रेम मे मग्न है।

शालिभद्र की स्त्रियां अपना अपराध जानने के लिए

उत्सुक हैं । वास्तव मे भक्ति वह नही है, जो अपने गुण पूछती फिरे । सच्ची भक्ति वह है, जो अपने दोष देखती है । भक्ति सीखना हो तो शालिभद्र की स्त्रियो से सीखो । आज के लोग अपने दोष नही पूछते, गुण पूछते हैं—वल्कि अपने गुणो का स्मरण करा कर दोषो को ढकने का प्रयत्न करते है । मगर भक्ति ऐसी नही है, वह तो सदा ही कोमल और नम्र है ।

एक विद्वान् ने भक्ति और ज्ञान की तुलना करके वतलाया है कि दोनो मे वडा कौन है ? उसका कथन है कि ज्ञान वडा है और कल्याणकारी है, लेकिन पुरुप है । भक्ति स्त्री है । ज्ञान और भक्ति के वीच मे माया नाम की एक स्त्री और है । पुरुप को तो स्त्री छल सकती, लेकिन स्त्री को स्त्री नही छल सकती । अगर ज्ञान माया द्वारा न छला जाय तो ज्ञान भक्ति से ऊचा है । अगर छला गया तो वह गिर जाता है । मगर भक्ति तो पहले से ही नम्र है और स्त्री है । माया भक्ति को नही छल सकती । इसलिये ज्ञान और भक्ति मे भक्ति ही वडी है ।

भक्त अपने गुण नही देखता, दुर्गुण देखता है । आप अगर ज्ञानी न वन सके और भक्त ही वन जाए—हृदय से भक्ति को अपना ले तो भी आपका कल्याण हो जायगा । तिलक-टीका लगाने से या मुहपत्ती वाधने मे ही कोई भक्त नही हो जाता । भक्त वनने के लिए यह देखना पडता है कि मुझमे कौन-कौन से दुर्गुण भरे हुए हैं । मैं कहा-कहा त्रुटि कर रहा हू ? इस प्रकार अपने दुर्गुण और त्रुटि को दूर करने की चेष्टा करने वाला ही सच्चा भक्त कहलाता है ।

शालिभद्र और उसकी पत्नियों का अपने-अपने दोष देखने का प्रयत्न हो रहा है। उसकी पत्नियां कहती हैं—आप हमारा अपराध हमें बतलाइए और उसके प्रतिकार के लिए उचित प्रायश्चित्त दीजिए। शालिभद्र सोचता है—इनका कथन भी मेरे लिए उपदेश बन रहा है। ये कहती हैं हमारा अपराध क्या है? और मैं भी परमात्मा से पूछता हू-नाथ! मेरा क्या दोष है जिससे मुझे अनाथ बनना पड़ा और राजा श्रेणिक मेरा नाथ बनने आया? इन स्त्रियों को मेरी उदासी का कारण मालूम ही नहीं है। मैं इनके अवगुणों के कारण नहीं वरन् अपने ही अवगुणों के कारण उदास हू। मैं सोचता हू—प्रभु मेरे प्रति उदास क्यों है? मेरी आत्मा परमात्मा के अनुकूल नहीं है यही मेरे दुःख का कारण है। मगर अज्ञान के कारण ये स्त्रियां अपने को मेरे दुःख का कारण समझ रही हैं।

शालिभद्र की स्त्रियां अपने हृदय की समस्त कोमल भावनाएं शालिभद्र के समक्ष रख चुकी। जितना सभव था अनुनय-विनय कर चुकी। अपनी दीनता प्रगट करने में भी उन्होंने कसर नहीं रखी। मगर अन्त तक शालिभद्र पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जैसे भैंस के सींग पर मच्छर के डक का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता और काले कबल पर दूसरे रग का प्रभाव नहीं पड़ता उसी प्रकार शालिभद्र के अन्तःकरण पर उसकी स्त्रियों के निहोरों का प्रभाव नहीं पड़ा।

स्त्रियां अत्यन्त निराश हुई। उनकी समझ में ही न आया कि वास्तव में इनकी उदासीनता का कारण क्या है? मगर निराशा अकेली नहीं आई। निराशा के साथ उसकी सहेलियां चिन्ता और व्यग्रता भी आ धमकी। उन्ह

किसी गम्भीर दुर्घटना की आशका होने लगी। अन्त मे उन्होने कहा—स्वामी, आज किस कारण आपका फूल–सा कोमल हृदय वज्र के समान कठोर हो गया है? आपकी प्रसन्नता प्राप्त करने के हेतु हमने अपने पेट की सब बातें कह दी है, फिर भी आपके मुख से एक बोल तक नही निकलता! न तो आप हमारा दोप बतलाते हैं, न हमे निर्दोष ही कहते हैं! फिर भी यह दड क्यो दे रहे हैं? यह न्याय नही है, अन्याय है। अगर आपके न्यायालय मे न्याय–अन्याय का विचार नही है, आरोपित को अपराध बताये बिना ही दड दिया जाता है तो हमे अपील करनी होगी। अब सासजी के पास जाने के सिवाय कोई चारा नही रहा। आपका विचार न मालूम किन उलझनो मे उलझा है और नही कहा जा सकता कि इससे क्या अनर्थ हो सकता है! अगर आप अपने मन की बात कह दें तो अच्छा है अन्यथा हमे सासजी के पास जाना पडेगा।'

शालिभद्र की स्त्रियो ने यह कह कर प्रकट कर दिया कि हम सासजी के पास जा रही है। फिर यह न कहियेगा कि माता से यह हाल कहने की क्या आवश्यकता थी? जब आप नही सुनते तो माताजी को पच बनाकर ही फैसला कराना होगा। यह नही हो सकता कि निर्दोष होने पर भी आप हमे त्याग दे।

प्राचीन काल मे पति-पत्नी का प्रेम बहुत प्रगाढ होता था। कदाचित् कभी कलह हो जाता तो सास तक को भी पता नही चल पाता था। स्त्रियो मे खूब गम्भीरता होती थी। लेकिन आजकल वह बात नही रही। आजकल दाम्पत्य प्रेम मे छिछलापन आ गया है। घर मे लड़ाई

हुई तो बाहर नमक मिर्च मिलाकर उसका समाचार पहुचाये बिना औरतों को चैन नही पड़ता। इसी कारण कहावत प्रचलित है—कुत्ते के पेट में खीर ठहरे तो स्त्रियों के पेट मे बात ठहरे। यद्यपि सभी स्त्रियां कभी समान नही होती, फिर भी आज अधिकांश में यह बात सुनी जाती है।

एक पिता ने अपनी पुत्री को ससुराल जाते समय शिक्षा दी थी—बेटी घर की आग बाहर मत निकालना। यह सीख बड़ी सुन्दर है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि कोई आग मांगने आये तो देने से मना कर देना। अर्थ यह है कि घर मे कभी कलह-क्लेश हो भी जाय तो उसे दूसरे के सामने प्रकट मत करना। जहा की बात तहा दबा देने से वह बढ़ती नही है।

प्रेममय जीवन और कलहमय जीवन में कितना अन्तर है इस बात पर गहराई से विचार करो। वाल्मीकि रामायण म लिखा है कि राम को सीता क खिलाये वन-फलो में जो आनन्द मिलता था वह आनन्द उन्हें जनक के घर नाना प्रकार के पकवान खाने मे भी नही मिला था। इसका कारण सीता का प्रेम था। राम को भीलनी ने जगली और वे भी झूठे बेर खिलाए थे लेकिन प्रेम के आधिक्य के कारण राम कहने लगे—लक्ष्मण ये बेर है या अमृत।

मतलब यह है कि अधिकांश लोग आज स्नेह की मधुरता का स्वाद नही जानते। बहिन संवर और सामायिक तो करती है लेकिन मीठे बोल मुख से निकालना कम जानती होगी। संवर और सामायिक करना भी अच्छा है परन्तु मीठी बोली हो तो उसमें बहुत गुण आ जाते है।

शालिभद्र की स्त्रियो ने सास के पास जाने की सूचना शालिभद्र को इसी कारण दी है कि पति-पत्नी की लडाई सास को मालूम हो, यह वात उन्हें लज्जास्पद मालूम होती थी। वास्तव मे पति द्वारा पत्नी की बात और पत्नी द्वारा पति की वात का प्रकट होना सभ्यता की दृष्टि से भी अनुचित समझा जाता है। जिन लोगो को यह बीमारी हो, उन्हे शालिभद्र की स्त्रियो से दवा लेनी चाहिये।

घर की कलह बाजार मे जाना ठीक नही है, लेकिन आपस मे न निबटने पर वाहर न जाना भी ठीक नही है। जब आपस मे समझौता न हो सकता हो, तब किसी हितैषी मध्यस्थ के द्वारा वात को निबटा लेना ही उचित होता है। ठाणागसूत्र मे कहा है—सह-धर्मी से कलह होने पर, जो किसी का पक्षपात न करके, तटस्थभाव से कलह को शान्त करने की चेष्टा करता है, उसे महानिर्जरा होती है।

शालिभद्र की स्त्रियो ने जब समझ लिया कि यह मामला अपने से तय नही हो सकता, तब उन्होने सास को मध्यस्थ बनाने का विचार किया।

मित्रो! आप लोग भी परमात्मा को मना लो। आप स्वय मान लो तो सर्वोत्तम है। अगर आपसे न मनें तो साधु को वीच मे रखकर उन्हे मना लो।

आखिर शालिभद्र की स्त्रिया उदास चित्त और आखो से आसू वहाती हुई भद्रा माता के महल की ओर चली।

भद्रा के समक्ष पहुचकर सबने उन्हे यथायोग्य प्रणाम किया और विना कुछ वोले चुपचाप खडी हो गई।

भद्रा ने बहुओं की हालत देखी तो उसके आश्चर्य का पार न रहा । सोचा—आज तक मैंने कभी इनकी आंखों में आंसू नहीं देखे आज आंसू क्यों ? इनकी उदासी का क्या कारण है ? क्या मेरा दुर्भाग्य उदय हो आया है कि मेरी बहुओं के नेत्र आंसूओं से भरे है ?

आखिर भद्रा ने पूछा—बेटियों आज क्या कारण है कि तुम इस स्थिति में मेरे पास आई हो ? तुम्हारे ससुर भेजते हैं और तुम खाती-पीती हो । दास-दासियां सब तुम्हारी आज्ञा में है । फिर दुःख का क्या कारण है ? शालिभद्र की ओर से कोई बात हुई जान पड़ती है । जो हो साफ-साफ बता दो ।

ज्यों-ज्यों भद्रा बहुओं को आश्वासन देती थी त्यों-त्यों उनका दुःख अधिकाधिक उमड़ता जाता था । उन्हें संकोच भी होता था कि आज पति की फरियाद लेकर उन्हें सास के पास आना पड़ा है । इस कारण पहले तो वे चुप चाप खड़ी रहीं मगर कई बार पूछने और समझाने पर उन्होंने धैर्य धारण करके कहा— माताजी आज वे (शालि भद्र) न जाने क्यों उदास हैं ! उदासी का कारण न वे बतलाते हैं और न ही हमारी कल्पना में ही आ रहा है । राजा श्रेणिक के आने पर जब आप उनके पास पहुची तभी वे उदास हो रहे थे—लेकिन लौटने के बाद तो पूछिए ही नहीं । अब वह मन ही नहीं रहा है जो पहले था । न बोलते है और न आंख उठाकर सामने देखते ही है । हम सब कह-कह कर थक गई । जब कुछ भी फल न निकला तो आपके पास आना पड़ा है ।

बहुओं की बात से भद्रा को विस्मय होना स्वाभाविक

था । एकदम अपूर्व घटना थी । फिर भी भद्रा ने सात्वना देकर कहा—अच्छा, चलो । मैं साथ चलती हू । देखू , क्या वात है ?

२० : माता का संबोधन

भद्रा चिन्ता करती हुई वहा पहुची, जहा शालिभद्र ध्यान मे मग्न बैठा था । शालिभद्र की अपूर्व मुद्रा देखकर भद्रा ने साश्चर्य विचार किया—आज यह किस ध्यान मे डूबा है ? जान पडता है, आज सुआ पिजरे मे नही है मगर कारण क्या हो सकता है ? खान-पान और परिधान मे तो कोई त्रुटि होने की सभावना है नही । कोई गडबड हुई होगी तो वहुओ की तरफ से ही हुई होगी ।

इस प्रकार विचार कर भद्रा ने कहा—वेटा शालिभद्र ! क्या आज मेरा सत्कार करना भी भूल गये ? ऐसे कैसे वैठे हो ? ये वत्तीसो हाथ जोडकर खडी हैं । इनकी ओर आख उठा कर भी नही देखते ? ये नम्र हैं, विनीत है और क्षमाशील हैं । कभी तुम्हारी आज्ञा का उल्लघन नही करती । मैंने कई वार इनकी परीक्षा की है और उसके वाद तुम्हे इनके भरोसे छोडा है । ये तुम्हारे मन के अनुसार चलती हैं । रूपवान् हैं, कुलवान् हैं, सहजसलौनी हैं । तुम्हारे ऊपर इनका प्रेम दिखावटी-वनावटी नही । ऐसी हालत मे आज ये दु खी क्यो हैं ? आसू क्यो वहा रही हैं ? ये घर की लक्ष्मी हैं । लक्ष्मी को अप्रसन्न करना विचार-शील पुरुप को योग्य नही है ।

माता भद्रा की वात सुनकर शालिभद्र को कुछ

उत्तर तो देना ही चाहिये था फिर भी वह मौन है। उसके हृदय में क्या भावना उत्पन्न हुई होगी यह बात तो कोई योगी ही जान सकता है फिर भी अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ कहना योग्य है।

शालिभद्र जानता है कि माता का अविनय करना ठीक नहीं है। माता के उपकारों से वह दबा है। फिर भी वह बोला नहीं। इसका कारण यही जान पड़ता है कि विनय की भी सीमा होती है। शिष्य गुरु के आने पर बैठा रहे खड़ा न हो तो अविनीत समझा जायगा। हां अगर वह कायोत्सर्ग करके ध्यान में लीन हो तो बैठा रहने पर भी अविनीत नहीं कहलाएगा। शालिभद्र अपनी माता का जी नहीं दुखाना चाहता। इसीलिए तो इच्छा न होने पर भी वह राजा श्रेणिक के पास गया था। मगर इस समय वह लोकोत्तर विचार में डूबा है।

शालिभद्र सोचने लगा—माता! ये स्त्रियां ठीक क्यों ही हैं जैसी तुम समझती और कहती हो। पर मैं नहीं जानता इनके दुःख का क्या कारण है? न मैंने इनसे कुछ कहा है न इनका कुछ छीना है। अगर मेरी उदासी के कारण ही ये उदास हैं तो इसका अर्थ हुआ कि अपने सुख में बाधा पड़ने से ये उदास हैं। ये कहती हैं—निष्कारण हमारा त्याग करना उचित नहीं है। परन्तु अगर मैं इनका त्याग कर दूसरी स्त्री से विवाह करता तो यह कहना ठीक होता है। मैं तो सच्चे नाथ की खोज करना चाहता हूं फिर भी मैं उलाहने का पात्र कैसे? जब ये मुझे नाथ मानती हैं तो फिर भय क्यों मानती हैं? नाथ मान लेने पर भी भय बना हुआ है तो समझ लेना चाहिए

कि मैं इनका सच्चा नाथ नही हू । इसी घटना से ससार की असली स्थिति का पता चल जाता है ।

भद्रा कहती है—शालिभद्र ! स्त्रिया तुम्हारे पसीने के बदले अपना खून बहाने को तैयार हैं । सदा तुम्हारे साथ रहती हैं । तुम्हारे कहने पर चलती हैं । फिर इनकी इतनी उपेक्षा करने का क्या कारण है ।

शालिभद्र सोचता है—अगर ये मेरे कहने पर चलती हैं तो मैं कहता हू कि ये कभी वृद्धा न हो, कभी मरे नही, इनकी इन्द्रिया कभी शिथिल न हो, इन्हे कभी रोग-शोक न हो । क्या ये ऐसा कर सकेंगी ? मैं चाहता हू, ये उदास न हो, फिर ये उदास क्यो हुई हैं ? उदास होने के लिये क्या इन्होने मुझसे आज्ञा ली है ? माताजी, व्यावहारिक दृष्टि से तो इनमे वे सब गुण विद्यमान हैं, जो तुमने बतलाये हैं । ससार व्यवहार मे मैं इन्द्राणी को भी इनसे बढकर नही मानता । यह मेरा जितना विनय और सत्कार नही करती है, उतना शायद इन्द्राणी भी इन्द्र का न करती हो ? वास्तव मे स्त्री कहलाने की अधिकारिणी ये ही हैं । फिर भी ये आज उदास हैं, क्योकि मैं अपनी मूल और असली स्थिति पर आ गया हू । अब न मैं इनका स्वामी हू और न ये मेरी पत्निया हैं । मैं तो इनके आसू भी नही पोछ सकता । जो स्वय अनाथ है वह किसी के आसू कैसे पोंछ सकता है ?

भद्रा कहती है—ये बेचारी तुम्हारी आज्ञा की प्रतीक्षा मे खडी हैं और तुम आख उठाकर भी इनकी ओर नही देखते । तुम ऐसे बैठे हो जैसे कोई भक्त भगवान् का

जप कर रहा हो और उसे किसी दूसरे विषय में जबान हिलाने का अधिकार न हो।

भक्त अपनी जीभ परमात्मा को समर्पित कर देते हैं। सिर जाने पर भी वे किसी और का गुण नहीं गाते।

कहते हैं—श्रीपति एक कवि था। वह परमात्मा के सिवाय किसी दूसरे का गुणगान नहीं करता था। लोगों ने बादशाह अकबर से उसके विषय में कहा। बादशाह ने उसे अपने दरबार में बुलाया और एक समस्या पूर्ण करने को दी। समस्या थी—

करो मिल आस अकब्बर की।

इस समस्या की पूर्ति कवि श्रीपति ने इस प्रकार की—

प्रभु को यश छांडि औरनि को भजै
जिभ्या को काटो उस लब्बर की।
अब की दुनिया गुनिया को रटे
सिर बांधत पोट अटब्बर की॥
श्रीपति एक गोपाल रटे नहीं
मानत शंक कौउ जब्बर की।
जिनको हरि की परतीति नहीं
सो करो मिल आस अकब्बर की॥

श्रीपति के इस सवैये से अकबर उसकी भावनाओं को समझ गया और पारितोषिक देकर प्रसन्नता के साथ उसे विदा किया।

भद्रा कहती है—जैसे भक्त परमात्मा के सिवाय और किसी के गुण नही गाता, इसी तरह ये बत्तीसो तुम्हारे सिवाय किसी के गुण नही गाती। ये तुम्हारी मधुर वाणी सुनने के लिये लालायित हैं। फिर तुम सकोच करके क्यो बैठे हो ? मैंने तुम्हे पहले कभी उलाहना नही दिया था। राजा श्रेणिक के आने पर एक वार उलाहना देना पडा था और अव दूसरी वार देना पड रहा है। मैं समझती थी—तू वडा ही वुद्धिमान् है। आज मालूम होता—तू विचार-शून्य है।

शालिभद्र सोचता है—वास्तव मे मैं विचारवान् नही हू। ऐसा होता तो श्रेणिक मेरा नाथ वन कर क्यो आता ? और ये वत्तीसो मेरे ही गुण गाती हैं सो यही तो इनका अज्ञान है। इसी अज्ञान के कारण आज ये दुखी हो रही हैं। इसमे मेरा क्या दोष है ? मैं स्वय अनाथ हू तो दूसरो का नाथ कहलाने का दभ क्यो करू ? पहले मैं भी अज्ञान मे डूबा था, तव अपने को नाथ समझता था। श्रेणिक के आने पर मेरा भ्रम भग हुआ और वह नाथ वनकर आया तो मैं समझ गया कि मैं अनाथ हू। इसलिए अब मैं उसी की शरण लू गा जो वास्तव मे नाथ है और जिसकी शरण ग्रहण करने पर मैं स्वय नाथ वन सकता हू। मैं उसी नाथ की खोज करना चाहता हू। क्या यही मेरा अपराध है, यही मेरी विचार-हीनता है ? ऐसा हो तो मेरी विचारहीनता मुझे मुबारिक है।

यहा एक वात ध्यान रखने योग्य है। भद्रा ने शालि-भद्र को समझाने के उद्देश्य से जो कुछ भी कहा है, वह अपने को आगे करके नही, अपनी वहुओ को आगे करके

कहा है। पुत्र के प्रति माता के उपकार असीम हैं फिर भी भद्रा शालिभद्र के समक्ष अपने उपकारों का बखान नहीं करती। वह चाहती तो कह सकती थी—"मैं तेरी माता हूँ। मेरी कूख से तेरा जन्म हुआ है। तेरे लिए मैंने अगणित कष्ट सहन किये हैं। फिर भी तू मेरी बात नहीं सुनता! आज मुझसे बोलना भी नहीं चाहता!" मगर भद्रा ने ऐसा नहीं कहा। वह गंभीर है। उसका आशय महान् है। अपने किये का उपकार जतलाना अपनी क्षुद्रता प्रकट करना ही है। महान् आशय वाले कभी ऐसा नहीं करते। वे समझते हैं मैंने जो किया है अपना कर्त्तव्य समझ कर किया है। इसमें किसी पर एहसान क्या? और फिर अपने किये उपकारों का अपने ही मुख से बखान करना उसका मूल्य घटा देना है।

यह सोचकर भद्रा अपनी बहुओं की ओर से वकालत कर रही है। वह कहती है—'बेटा! इनके सामने देख। ये तेरी प्रसन्नता की भिखारिनें हैं। इन्हें अप्रसन्न मत कर। दिल खोलकर बात कह। इनके किसी व्यवहार से अगर तेरे दिल को चोट पहुँची तो उसे सम्भाल कर छिपा रखने से कोई लाभ नहीं होगा। मैं नहीं कहती कि ये निर्दोष हैं मगर जो दोष हो उसे इन्हें बतादो। इसी में सबका कल्याण है।'

भद्रा कैसी आदर्श माता है! आज भद्रा सरीखी माता होती तो लोग देवी मानकर उसकी पूजा करते। शालिभद्र पर पिता की अपेक्षा भी माता का अधिक उपकार है। माता ने ही पुत्र के बिना अपना स्त्रीजन्म निष्फल समझा था और उसी की आशा पूर्ण करने के लिये गोभद्र

ठ के हृदय मे तडफ पैदा हुई थी। उसके वाद भी माता ने
स पर वडे-वडे उपकार किये है। आज उनका स्मरण
रके वह गर्व कर सकती है। शालिभद्र के आगे उनका
खान कर सकती है। वह कह सकती है कि तुम पडे-पड़े
मौज करते हो, फिर भी रूठने की हिमाकत किये बिना नहीं
रह सकते ? मगर नही, भद्रा ने ऐसा नही कहा। उसने सिर्फ
यही कहा है कि इन वेचारी वहुओ को क्यो दुखी कर
रहा है ?

मातृ-प्रेम के समान ससार मे कोई प्रेम नही। मातृ-प्रेम इस ससार की सर्वोत्तम विभूति है, ससार का अमृत है। इसी कारण शास्त्रो मे माता को देव-गुरु के समान वतलाया है। फिर भी भद्रा अपना उपकार न जताकर यही कह रही है- तुझे वडे-वडे सद्गृहस्थो ने अपनी-अपनी बेटिया दी है। उन्होने अपनी वेटिया मुझे सौंपी हैं। उन्हे उदास न रहने देना, तेरा और मेरा कर्त्तव्य है। आज ये सव उदास हैं। मैं कहती हू—तू मेरा पक्ष चाहे न ले, पर इन्हे उदास मत कर। यह सब छाया की भाति तेरे साथ रहने वाली है। फिर इन पर कोप क्यो ? उठकर इन्हें सतोष दे। कदाचित् इनसे कोई अपराध हुआ हो तो भी तू अपने धर्म का स्मरण कर। तेरा धर्म यह है कि कभी इनकी त्रुटि प्रत्यक्ष देखी हो तो उस देखी को भी अनदेखी कर जा। नारी जाति को मत सता। ये वडे घरो की लडकिया अपने साथ लाखो का धन लाई है और तेरी दासी वनी हुई हैं। इन पर इस प्रकार कोप करना उचित नही है।

भारतवर्ष ही ऐसा देश है जहा पत्नी, पति की दासी वनी रहती थी, किन्तु पति स्वय स्वामी होता हुआ भी

अपनी स्त्री को स्वामिनी मानता था। और देशों में यह बात नहीं देखी जाती। यूरोप में स्त्रियां पुरुषों की हर बात में बराबरी करना चाहती हैं अपने अधिकारों के लिए लड़ाई करती हैं मगर भारत की प्राचीन संस्कृति के अनुसार पति और पत्नी मिलकर दम्पति हैं। दोनों में एकरूपता है। यहां अधिकारों को लेने की समस्या ही नहीं पैदा होती वरन् समर्पण की भावना ही प्रधान है। यही कारण है कि प्राचीनकाल का भारतीय दाम्पत्य जीवन अतिशय मधुर होता था। मगर धीरे-धीरे दाम्पत्य जीवन का यह आदर्श नीचे गिरता गया और आज हालत यहां तक आ पहुंची है कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपना गुलाम समझ लिया है। अपने आधे अंग को गुलाम बनाने का नतीजा पुरुषों को भी भोगना पड़ा। उन्हें स्वयं विदेशियों की गुलामी स्वीकार करनी पड़ी।

आज लोग स्त्री को गहने और कपड़े देकर ही अपने कर्त्तव्य की इति समझ लेते हैं और मानते हैं कि इससे अधिक और कुछ देने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन धर्म-शास्त्र का कथन है कि स्त्री अर्द्धांगिनी है धर्मपत्नी है। अगर स्त्री को धर्म न सिखाया और समय पर उसकी रक्षा न की तो समझना चाहिए कि अभी धर्म का स्वरूप ही नहीं समझा।

भद्रा शालिभद्र से कहती है—स्त्री को इस प्रकार दुःखी करना पुरुषों का धर्म नहीं है। भद्रा का कथन सिर्फ शालिभद्र के लिये नहीं है सभी पुरुषों के लिये है। आप कभी अपनी पत्नी को सताते तो नहीं हैं? बहुत-से पुरुष रौब गांठने के लिये अपनी स्त्री को सताते हैं। स्वयं

दुराचार मे प्रवृत्त रहते है और पत्नी अगर उनकी उस प्रवृत्ति मे वाधा पहुचाती है तो उसे बुरी तरह मारते-पीटते हैं। नारी जाति का इस तरह अपमान करने वालो को धिक्कार के सिवाय और क्या कहा जा सकता है ?

भद्रा फिर कहती है मैं वहुओ का दुख नही देख सकती। फिर कान पास मे करके कहती है—अगर इनका दोष इनके सामने कहने मे सकोच होता हो तो ले, मेरे कान मे कह दे। मगर शालिभद्र चुप है। भद्रा के कान मे कोई आवाज नही पडती।

भद्रा फिर कहती हैं—शालिभद्र समझदार होने के कारण अपनी पत्नियो का दोप खुलकर नही कहना चाहता। विवेकवान् व्यक्ति अपने घर की वात दुनिया पर जाहिर नही करते, जिससे लोक-हसाई न हो। मगर इतने पर भी शालिभद्र का मौन भग न हुआ, तब भद्रा ने कहा—मैं नही जानती थी कि मेरे इतना कहने पर भी तू मूर्ति बना बैठा रहेगा! आज मालूम हुआ कि या तो तेरे हृदय नही है या हृदय मे प्रेम नही है। तेरी उदासी से घर सूना-सूना लग रहा है। वह झोपडी अच्छी है, जहा सज्जन प्रसन्न रहते हैं। वह महल भला नही, जिसमे सज्जन उदास हो। स्त्रियो को इस प्रकार परेशान करना क्या पुरुष का धर्म है ? तेरे सिवाय इन्हे किसका सहारा है। देवर, जेठ, छोटा, वडा, जो समझा जाय, एकमात्र तू ही तो है। इस घर मे दूसरा है ही कौन ? मनमोहन नाथ या नगीना तू ही तो है। फिर क्यो स्वय उदास हो रहा है और क्यो दूसरो को मुसीवत मे डाल रहा है ?

आज सास को वहू का इतना ध्यान हो तो क्या घर मे

अपनी स्त्री को स्वामिनी मानता था। और दर्मों में यह बात नहीं देखी जाती। यूरोप में स्त्रियां पुरुषों की हर बात में बराबरी करना चाहती हैं अपने अधिकारों के लिए लड़ाई करती हैं मगर भारत की प्राचीन संस्कृति के अनुसार पति और पत्नी मिलकर दम्पति हैं। दोनों में एकरूपता है। यहां अधिकारों को लेन की समस्या ही खड़ी नहीं होती वरन् समर्पण की भावना ही प्रधान है। यही कारण है कि प्राचीनकाल का भारतीय दाम्पत्य जीवन अतिशय मधुर होता था। मगर धीरे-धीरे दाम्पत्य जीवन का यह आदर्श नीचे गिरता गया और आज हालत यहां तक आ पहुंची है कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपना गुलाम समझ लिया है। अपने आधे अंग को गुलाम बनाने का नतीजा पुरुषों को भी भोगना पड़ा। उन्हें स्वयं विदेशियों की गुलामी स्वीकार करनी पड़ी।

आज लोग स्त्री को गहने और कपड़े देकर ही अपने कर्त्तव्य की इति समझ लेते हैं और मानते हैं कि इससे अधिक और कुछ देने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन धर्म-शास्त्र का कथन है कि स्त्री अर्द्धांगिनी है धर्मपत्नी है। अगर स्त्री को धर्म न सिखाया और समय पर उसकी रक्षा न की तो समझना चाहिये कि अभी धर्म का स्वरूप ही नहीं समझा।

भद्रा शालिभद्र से कहती है—स्त्री को इस प्रकार दुःखी करना पुरुषों का धर्म नहीं है। भद्रा का कथन सिर्फ शालिभद्र के लिये नहीं है सभी पुरुषों के लिये है। आप कभी अपनी पत्नी को सताते तो नहीं हैं? बहुत-से पुरुष रौब गांठने के लिये अपनी स्त्री को सताते हैं। स्वयं

दुराचार मे प्रवृत्त रहते हैं और पत्नी अगर उनकी उस प्रवृत्ति मे बाधा पहुचाती है तो उसे बुरी तरह मारते-पीटते हैं। नारी जाति का इस तरह अपमान करने वालो को धिक्कार के सिवाय और क्या कहा जा सकता है ?

भद्रा फिर कहती है मैं बहुओ का दुख नही देख सकती। फिर कान पास मे करके कहती है—अगर इनका दोष इनके सामने कहने मे सकोच होता हो तो ले, मेरे कान मे कह दे। मगर शालिभद्र चुप है। भद्रा के कान मे कोई आवाज नही पडती।

भद्रा फिर कहती है—शालिभद्र समझदार होने के कारण अपनी पत्नियो का दोष खुलकर नही कहना चाहता। विवेकवान् व्यक्ति अपने घर की बात दुनिया पर जाहिर नही करते, जिससे लोक-हसाई न हो। मगर इतने पर भी शालिभद्र का मौन भग न हुआ, तब भद्रा ने कहा—मैं नही जानती थी कि मेरे इतना कहने पर भी तू मूर्ति बना बैठा रहेगा! आज मालूम हुआ कि या तो तेरे हृदय नही है या हृदय मे प्रेम नही है। तेरी उदासी से घर सूना-सूना लग रहा है। वह झोंपडी अच्छी है, जहा सज्जन प्रसन्न रहते हैं। वह महल भला नही, जिसमे सज्जन उदास हो। स्त्रियो को इस प्रकार परेशान करना क्या पुरुष का धर्म है ? तेरे सिवाय इन्हे किसका सहारा है। देवर, जेठ, छोटा, बडा, जो समझा जाय, एकमात्र तू ही तो है। इस घर मे दूसरा है ही कौन ? मनमोहन नाथ या नगीना तू ही तो है। फिर क्यो स्वय उदास हो रहा है और क्यो दूसरो को मुसीबत मे डाल रहा है ?

आज सास को बहू का इतना ध्यान हो तो क्या घर मे

क्लेश हो।

नहीं।'

भद्रा भी अपनी बात न कहकर बहुओं की ही बात कहती है। भद्रा की यह उदारता सासों के लिए अनुकरणीय है। सच्ची सास वही है जो अपनी बहू को बेटी से भी अधिक चाहती है।

शालिभद्र अपने ध्यान में मग्न है। वह चाहता है कि मैं सबका नाथ बनूं और भद्रा चाहती है कि वह अपनी बत्तीस स्त्रियों का ही नाथ बना रहे। भद्रा कहती है तू बहुओं को दु:खी मत कर। शालिभद्र सोचता है—मैं इन्हें क्या दुःख दे रहा हूं! ये बत्तीसों स्त्रियां सुकुमारी हैं सुखनिवासी हैं नम्र हैं आज्ञाकारिणी हैं मेरे पसीने के बदले अपना खून बहाने को तैयार हैं माता–पिता को छोड़ कर मेरे आश्रय में आई हैं। फिर मैं इन्हें दु:खी क्यों रखूं? जब ये निरपराध हैं तो मैं इन्हें दासी बनाकर क्यों रखूं? इन्हें दासी बना कर रखने का मुझे क्या अधिकार है! मैं मर जाऊं तो ये विधवा हो जाएंगी और रूठ जाऊं तो तड़फड़ाएंगी। लेकिन विधवा बनाने या तड़फाने का मुझे क्या अधिकार है! इनका अपराध ही क्या है? क्या मैं इन्हें विधवा बनाने के लिए नाथ बना हूं? पति पत रखने वाला है या पत गमाने वाला है? मैं अमर नाथ हूं तो इन्हें अखण्ड और अक्षय सौभाग्य प्रदान करना मेरा कर्त्तव्य है।

मित्रो! शालिभद्र के इस मूक कथन पर आप विचार करें। आप लोगों को क्या यह अधिकार है कि आप स्त्रियों को दासी बनाकर रखें? कदाचित् आपका यह

खयाल हो कि हम खाने-पीने और पहिनने-ओढ़ने के साधनो की व्यवस्था करते हैं और हमारी वदौलत ही स्त्री मौज करती है तो क्या शालिभद्र ऐसा ही विचार नही कर सकता था !

शालिभद्र आगे सोचता है—मोह राजा ने इन स्त्रियो को भी गुलाम बना रखा है और मुझे भी। मोह न होता तो जिस तरह ये मेरी सेवा करती हैं, वैसे परमात्मा की सेवा क्यो करती ? जैसी मेरी दासी बन रही है, वैसे परमात्मा की दासी क्यो न बनती ? मगर मोह राजा ने परमात्मा से इन्हें मिलने ही नही दिया। मैं स्वय मोह का मारा हू, फिर इन्हे किस मुह से दोष दू ! वास्तव मे मैं इन्हे दुखी नही कर रहा हू, मोह ही इन्हे सता रहा है।

आप किसे अच्छा मानते हैं—मोह राजा को या परमात्मा को ?

'परमात्मा को।'

अगर कोई मोह के पजे से निकल कर ईश्वर भक्त बने तो आप प्रसन्न होगे या अप्रसन्न !

'प्रसन्न !'

लेकिन कदाचित् आपका ही लडका मोह त्याग कर साधु बनने को तैयार हो जाय तो आप क्या करेंगे।

'गालिया देने लगेंगे !'

तभी तो कहते हैं कि आप लोग मोह मे फसे हुए है।

शालिभद्र मन ही मन सोचने लगा—'माता' इन

सुशीला स्त्रियों ने मेरा कुछ भी अपराध नहीं किया है और न मैं इन्हें पीड़ा पहुंचाना चाहता हूं बात इतनी ही है कि मैं परमात्मा मिलना चाहता हूं और ये मोह के पाश में जकड़ी हैं तथा आगे भी जकड़ी रहना चाहती हैं। इसी कारण इन्होंने तुम्हारे सामने मेरी फरियाद की है। लेकिन न तो ये मुझे सुगति में पहुंचा सकती हैं और न मैं इन्हें पहुंचा सकता हूं। मोह का सम्बन्ध तो यहीं समाप्त हो जायेगा आगे जाने का नहीं है। यह सांसारिक सुख मोह की सीमा है और हम सब भ्रम में पड़ कर इसे सुख समझ लेते हैं।

शालिभद्र ने प्राय भोगों की असलियत समझ ली है। वह जान गया है कि भोग तो मोह के हैं मेरे नहीं। मैं बीच में पड़कर वृथा ही इनमें सुख मानता हूं। भर्तृहरि कहते हैं—

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता ।

अर्थात्—भोगों को हमने नहीं भोगा वरन् भोगों ने ही हमें भोग लिया है।

शालिभद्र कहता है—मोह हमें भोग रहा है। उसने इन्हें मेरा और मुझे इनका दास बना रखा है।

जो रक्षा करता है वही पति कहलाता है। आपकी स्त्री का सिर दुखने लगे तो क्या आपमें दर्द दूर कर देने की शक्ति है? अगर नहीं तो आप पति कैसे!

शालिभद्र मन ही मन कहता है—माताजी! यह सब मोह का चमत्कार है। अज्ञान के वश होकर जीव मोह

का पोपण करता है और फिर भी आनन्द मानता है। मगर ये संसार बढाने का ही मार्ग है। माता ! यद्यपि तू मेरा हित चाहती है लेकिन तुझे मेरे अन्त करण की बात मालूम नही है। तू नही जानती कि मैं क्या करना चाहता हू ? मैं इन स्त्रियो को रुला नहीं रहा हूं इनका असली स्वरूप इन्हे समझाने का प्रयत्न कर रहा हू। मैं इन्हे अपनी ओर से स्वाधीनता दे रहा हू और कहता हू— तुम गुलाम मत बनी रहो। परमात्मा के चरणो का आश्रय लो। वही आश्रय सच्चा आश्रय है। इनकी और मेरी आत्मा समान है। फिर इन्हे गुलाम रहने की क्या आवश्यकता है ?

अब शालिभद्र ने अपना ध्यान भग किया। भद्रा फिर पूछने लगी—तूने यह क्या कर रखा है ?

शालिभद्र—कुछ नही आनन्द था।

भद्रा—लेकिन यह आनन्द तो अच्छा नही लगता।

शालिभद्र—क्यो ?

भद्रा - इसलिए कि यह नया खेल है।

शालिभद्र—असली खेल यही है मा, और सब तो इन्द्रजाल है।

भद्रा—सो कैसे !

शालिभद्र—श्रेणिक के आने पर आपने कहा था— उठो, नाथ आया है। वह चाहेगा तो तुम्हे तुच्छ बना देगा। माता क्या तुम यह चाहती हो कि तुम्हारा बेटा ऐसा हो कि एक राजा भी उसे तुच्छ बना सके ! इसके अतिरिक्त

मैं इन स्त्रियों को अपनी दासी कैसे बनाये रख सकता हूं ? जो दूसरों को तुच्छ बनाएगा वह स्वयं तुच्छ है। मैं तुच्छ बनना नहीं चाहता।

माता मैं तो स्वय अनाथ हू। मैंने मध्यलोक में रहकर देवलोक के भोग भोगे है। इससे मुझ अनाथता आ गई है ? जब मैं स्वय अनाथ हू तो दूसरों का नाथ कैसे हो सकता हू। मैं अपनी अनाथ अवस्था को त्यागना चाहता हू। इसी कारण तुम और तुम्हारी बहुए घबरा रही हैं। यह सब मोह का ही प्रताप है। क्या श्रेणिक के आने पर तुम्हीं ने नहीं कहा था कि चलो नाथ आया है। ऐसी अवस्था में मुझे अपना अनाथपन दूर करना होगा और वह तभी दूर होगा जब मैं स्वय किसी का नाथ होने का दावा नहीं करूगा।

जननी जब मनुष्य पर के पाश मे बद्ध होता है तभी उसमे अनाथता आती है और अनाथता दूर करने के लिये पर-पदार्थों के सयोग का त्याग करना आवश्यक है। मैंने ऐसा ही करने का निश्चय कर लिया है।

२१ प्रभु का पदार्पण

शालिभद्र भद्रा से यह बाते कह ही रहा था कि इसी समय वहां वनपाल आ पहुचा। !

प्रश्न हो सकता है—आज वनपाल क्यों आया ? अगर वह पहले कभी नहीं आया था तो आज ही उसके आने का क्या कारण है ?

जो लोग कथा के चमत्कार को नहीं जानते वे कथा

का मर्म भी नही समझ सकते । लोग समझते हैं कि शालिभद्र भोग मे ही डूबा रहता था। उसे दीन-दुनिया का कुछ पता ही नही था । मगर ऐसा होता तो आज वनपाल बधाई लेकर क्यो आता ? वास्तव मे यह खयाल गलत है कि शालिभद्र भोग के सिवाय और कुछ समझता ही नही था । वह सब कुछ समझता था । धर्म की सब बातो से भी वह परिचित था । उसे ये भी मालूम था कि नगर मे कौन बडा है और कौन छोटा है ।

आप कह सकते हैं—अगर शालिभद्र इतना जानकार था तो उसने श्रेणिक राजा को, जो प्रसिद्ध सम्राट था और राजगृह ही जिसकी राजधानी थी, क्यो नही जाना ? इसका उत्तर यह है कि वह राजा श्रेणिक को भी जानता अवश्य था, मगर देवलोक के भोगोपभोग भोगने के कारण उसकी यह धारणा हो गई थी कि वह सर्वथा स्वाधीन है । उसे राजा से कोई वास्ता नही है । भद्रा ने जिस प्रकार से श्रेणिक का परिचय दिया, उससे शालिभद्र की धारणा को अचानक ही चोट पहुची । उसे यकायक अपनी अनाथता का बोध हुआ और यह बात उसके दिल मे खटक गई । उसने सोचा—मध्यलोक की वस्तुए छोड कर दिव्यलोक की वस्तुएं भोगने पर भी मैं अनाथ ही बना रहा तो फिर भोग मात्र का त्याग करना ही योग्य है । जब भोग मात्र का त्याग कर दूंगा तो अनाथता के लिए कोई अवकाश ही न रह जायेगा । यह विचार उसके हृदय मे उत्पन्न हुआ और तत्काल ही सकल्प के रूप मे पलट गया ।

वनपाल ने शालिभद्र से निवेदन किया—आप जिन नाथ के दर्शन करना चाहते है, वे ही महाप्रभु महावीर भगवान्

आज उद्यान में पधारे है ।

वनपाल की बात सुनते ही शालिभद्र अतिशय प्रसन्न हुआ और सोचने लगा आज मेरा मनचाहा पासा गिरा । आज मेरे यहाँ अमृत की वर्षा हो गई ।' शालिभद्र ने वन, पाल की प्रशसा करते हुए कहा— आज तू ने बहुत सुन्दर बधाई दी है । इस बधाई का बदला किसी भी वस्तु को देकर नही चुकाया जा सकता । परन्तु तुम ससारी हो और अभी मैं भी ससारी हू । अतएव सिर्फ बातों मे ही रख लेना योग्य नहीं है । इतना कह कर शालिभद्र ने अपने शरीर के समस्त आभूषण उतार कर उसे पारितोषिक में दे दिये ।

वनपाल खुशी-खुशी लौटा । उसके चले जाने के बाद शालिभद्र ने अपनी माता से कहा माताजी आप मेरे इस प्रश्न का उत्तर नही दे सकी कि मैं अनाथ कैसे बना ? मगर इसका सही उत्तर देने का सौभाग्य से आगमन हुआ है । उसकी सेवा मे मैं भी चलता हूं तुम भी चलो और इन बत्तीसों को भी साथ चलो । उन्ही से अपने प्रश्न का समाधान होगा और तब अनाथता मिटाने का उपाय भी विदित हो जायगा ।

भद्रा गभीर विचार मे डूब गई । उसने समझ लिया कि पुत्र अब माया के जाल मे फसा नही रहेगा । अब पछी उडना चाहता है । शालिभद्र सिंह है । यह अब तक अपने स्वरूप को भूल कर गाडरा मे रहता आया है । अब इसे अपने असली स्वरूप का भान हो गया है । अब यह गाडरा मे नही रहेगा । इसके पिता ने सिंहवृत्ति धारण की थी तो यह कैसे रुक सकता है ? इस एक उदाहरण से समझो —

एक सिंह के बच्चे की मा मर गई। बच्चा बहुत छोटा था। उस बच्चे को गडरिया उठा लाया। अपनी भेडो के साथ वह उस बच्चे का पालन करने लगा। सिंह का वह बच्चा भेडो का ही दूध पीता, भेडो मे ही रहता और भेडो की तरह सिर नीचा करके चलता था। वह अपने को भेड समझता था और भेडो को ही अपना परिवार मानता था।

एक बार की बात है। भेडे जगल मे चरने गई। वहा अचानक सिंह की घोर गर्जना सुनाई दी। सिंह-गर्जना सुनते ही भेडो ने भागना आरम्भ किया। उन्हीं के साथ वह शेर-बच्चा भी भागा परन्तु उसने हिम्मत करके सिंह की ओर देख लिया और फिर भाग कर भेडो के झुड में मिल गया।

एक दिन भेडो के साथ वह पानी पीने गया। उसने स्वच्छ पानी मे देखा तो उसे अपनी शक्ल दूसरी और भेडो की शक्ल दूसरी दिखाई दी। उसने सोचा—मेरी सूरत तो उस दिन के सिंह सरीखी है। मगर उस सिंह की पूछ तो उसके सिर तक आ जाती थी। देखू, मेरी पूछ आती है या नही। उसने देखा तो पूछ सिर पर आ गई। पचा सिंह के समान उठ गया। इसके बाद वह सोचने लगा—सिंह के गरजने से उस दिन भेडें भाग खडी हुई थी। देखना चाहिये मेरे गरजने मे भी ये भागती हैं या नही? यह सोचकर शेर के बच्चे ने जो गर्जना की तो भेडें पानी पीना छोडकर प्राण लेकर भागी। समझ गया, मैं भेड नही, सिंह हू।

भद्रा कहती है—शालिभद्र की स्थिति भी यही है।

अब तक अपने स्वरूप को भूल कर यह हमारे साथ रहा। अब उसने अपना स्वरूप समझ लिया है, इसलिये मुनि-सिंह के साथ ही रहेगा! अब यह हमारे साथ रहने का नहीं।

भद्रा ने प्रकट में कहा— अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो बसो। मैं तुम्हारी इच्छा पूरी होने में विघ्न नहीं डालना चाहती।

माता की स्वीकृति पाकर शालिभद्र प्रसन्न हुआ। उसे संदेह था कि माता मुझे भगवान् के समीप जाने की आज्ञा देंगी या नहीं? मगर सरली स्वीकृति पाकर उसके हर्ष का ठिकाना न रहा। शालिभद्र सोचने लगा—मैंने अपनी धनाढ्यता को नष्ट करने का विचार तो पक्का कर लिया था परन्तु उसके नाश का मार्ग निश्चित नहीं किया था। अब भगवान् के आगमन से यह समस्या सहज ही सुलझ जाएगी। भगवान् का इस समय आना ऐसा ही है जैसे बिल्ली के भाग्य से छींका टूटना।

शालिभद्र बड़ी सज धज के साथ प्रभु के दर्शन करने के लिये रवाना हुआ। माता और पत्नियां साथ ही थी। नगर में सबत्र खबर फैल गई कि जिस शालिभद्र को देखने के लिये राजा श्रेणिक स्वयं उसके घर गये थे फिर भी जो अपना घर छोड़ कर उनके सामने नहीं गया था वही शालिभद्र भगवान् के समीप जा रहा है।

प्रश्न हो सकता है—भगवान् महावीर में ऐसा कौन सा आकर्षण था कि शालिभद्र उनकी ओर अनायास ही खिंचकर चला गया? जो पुरुष महान् मगध-सम्राट् श्रेणिक के राजमहल तक नहीं जाना चाहता था और जिसने अपने

घर पर भी उनसे मिलने मे अपने गौरव की क्षति समझी, वह किस चुम्बकीय शक्ति से आकर्षिक होकर चला जा रहा है ? भगवान् के पास न भेंट देने को फूटी कौडी है, न राज–मुकुट है और न दर्शनीय वेशभूषा है। मुडा हुआ सिर है, मलिन शरीर है और वह भी तपस्या से सूखा है। उनमे दर्शनीयता क्या है ! इधर शालिभद्र स्वर्गीय सम्पत्ति का स्वामी है। वह असाधारण सौन्दर्य से सम्पन्न है। फिर भी वह भगवान् की शरण मे जा रहा है।

लोग समझते हैं कि हम अपने से अधिक ठाठ–बाठ वाले के पास जाएगे तो लाभ होगा। आज के राजा लोग भी यही विचार करते हैं कि जिस साधु के पास हाथी–घोडे चामर-छत्र आदि ठाठ हो, उसी के पास जाना अच्छा है। अनगार और भिक्षु के पास धरा ही क्या है ? मगर ऐसा सोचने वाला भ्रम मे है। न ऐसा भक्त भक्ति का मर्म समझते हैं और न ऐसे साधु-साधुता के रहस्य को ही समझ पाए हैं।

शालिभद्र भली-भाति समझता था कि जिसने जगत् के समस्त पदार्थों की मोह-ममता तज दी है और जो निस्पृह जीवन व्यतीत करता है, वही मेरा नाथ हो सकता है, वल्कि उसी की उपासना करके मैं नाथ बन सकता हू।

शालिभद्र उसी गुणशील उद्यान मे पहुचा, जहा भगवान् विराजमान थे। दूर से ही भगवान् को देखकर उसने पाच अभिगमन किये। अभिगमन इस प्रकार हैं—

⊛ (१) सचित्ताइ दव्वाइ विउस्सरणियाए —
(२) अचित्ताइ दव्वाइ अविउस्सरणियाए
(३) एगसाडी— उत्तरासंग
(४) चक्खुफासे अंजलिपग्गहेण
(५) मणसा एगत्तीकरणं

एक पने वस्त्र का उत्तरासंग करने का पहला कारण यह है कि ऐसा वस्त्र मांगलिक समझा जाता है। दूसरे वस्त्र बुनने की कला तो प्राचीन है किन्तु वस्त्र सीने की कला प्राचीन नहीं है। प्राचीन काल के लोग सिला वस्त्र नहीं पहनते थे। यही प्राचीनकाल की परिपाटी थी। इसी परिपाटी के अनुसार एक पने वस्त्र का उत्तरासंग बतलाया गया है।

शालिभद्र पांचों अभिगमन करके विनीतभाव से भगवान् के निकट आकर बैठा। भगवान् ने धर्मदेशना देना आरम्भ किया। धर्मदेशना में उन्होंने इसी प्रकार जागृति उत्पन्न करने वाले शब्द कहे होंगे—

थाने भाई है अनादि जीव जरा टुक जोवो तो सही
जरा टुक जोवो तो सही चेतनजी, जोवो तो सही।
थाने सुमति कहे कर जोड़ सन्मुख होवो तो सही।

जरा आगे-पीछे का भी विचार करो। वर्तमान में ही मत भूले रहो। जब आत्मा अनादि काल से है और

⊛ आशय यह है—(१) सचित्त द्रव्यों को त्याग देना। (२) अचित्त द्रव्यों को नहीं छोड़ना। (३) एक पन्ने वस्त्र का उत्तरासंग करना। (४) दृष्टिगोचर होते ही हाथ जोड़ लेना। (५) मन को एकाग्र कर लेना।

भस्म बनने वाला है, उसे सजा रहा है और जो साथ जाने वाला है उसकी ओर ध्यान ही नहीं है ।

गाफिल ! किसके भरोसे बैठा है ? कौन तेरी रक्षा करेगा ! फौज ? फौज रक्षा करने में समर्थ होती तो चक्रवर्ती क्यों उसे त्यागते ? परिवार तेरी रक्षा करेगा ? ऐसा होता तो कोई मरता ही क्यों ? सभी के परिवार वाले मरने वाले को बचा न लेते ? किसी भी रक्षा नहीं कर सकता । सुन—

कोटि-कोटि कर कोट ओट में उनकी तू छिप जाना
पद-पद पर प्रहरी नियुक्त करके पहरा बिठलाना ।
रक्षण हेतु सदा हो सेना सजी हुई चतुरंगी
काल बली से जाएगा देखेंगे साथी संगी ।

✿ ✿ ✿

अक्षय धनपरिपूर्ण खजाने चरण जीव को होवे
धो अमावि के धनी सभी इस भूतल पर होवे ।
पर न कारगर धन होता है बन्धु ! मृत्यु की बेला
राज-पाट छोड़ चला जाता है जीव अकेला ।

✿ ✿ ✿

अम्बर में पाताल लोक में या समुद्र गहरे में
इन्द्र भवन में शैलगुफा में सेना के पहरे में ।
वज्र-विनिर्मित गढ़ में या अन्यत्र कहीं छिप जाना
पर भाई ! यम के कर में अन्त पड़ेगा आना ।

✿ ✿ ✿

देखो देखो खोजो अपनी दृष्टि जरा फैलाओ,
कण-कण अणु-अणु देख तर्क के तीखे तीर चलाओ।
ऊपर नीचे दक्षिण उत्तर पश्चिम पूर्व निवारो,
यदि रक्षक हो कही शरण लो उसकी, मृत्यु निवारो।

तात्पर्य यह है कि ससार की कोई भी शक्ति ऐसी नही हैं जो मनुष्य को मृत्यु का ग्रास होने से बचा सके। काल इतना बलवान् है कि लाख प्रबन्ध करने पर भी आ ही धमकता है। इसलिये निर्भय और अमर बनने का वास्तविक उपाय करो। ऐसा करो कि तुम्हे काल से न डरना पडे। वरन काल ही तुमसे डरे। अगर तुम चेत जाओगे और ज्ञान प्राप्त कर लोगे तो तुम्हारे अन्त करण मे यह भावना उत्पन्न होगी—

मरने से जग डरत है, मो मन परमानन्द।
कब मरिहौं कब भेटिहौं, पूरन परमानन्द॥

हे भद्र पुरुष! काल के आने पर ससार का धन, जन आदि कोई नही बचा सकता।

केवलज्ञान ही अमरता प्रदान करता है। अतएव ज्ञान प्राप्त कर। ज्ञान के प्राप्त हो जाने पर सन्मार्ग पर चलने की अभिरुचि उत्पन्न होगी और तब तू ऐसे स्थान पर पहुच जायगा, जहा काल का वश नही चलता। इस प्रकार सम्यक्-ज्ञान और सम्यक् आचरण ही तेरी रक्षा कर सकते हैं।

भगवान् की देशना सुनकर शालिभद्र को अतिशय सतोष हुआ। उसने कहा—'भते! अनुग्रह करके ऐसा मार्ग बतलाईये कि मेरे सिर पर कोई नाथ न रहे।'

भगवान् ने कहा—जब तक तुम ससार की किसी भी

वस्तु के नाथ बने रहोगे तब तक तुम्हारे सिर पर भी नाथ रहेगा ही। अगर तुम्हारी इच्छा है कि कोई तुम्हारा नाथ न रहे तो तुम किसी के नाथ मत रहो। अर्थात् जगत् की वस्तुओं से अपना स्वामित्व हटाओ। ममत्व त्याग दो यह समझ लो कि न तुम किसी के हो न कोई तुम्हारा है। सब प्रकार के संयोग से मुक्त हो जाओ। यही स्वाधीन बनने का मार्ग है।

शालिभद्र—अर्थात् मुनि बने बिना यह सम्भव नहीं कि सिर पर नाथ न हो?

भगवान्—हां भद्र ! सत्य यही है।

२२ दीक्षा

मेरे भाई शालिभद्र को संसार से वैराग्य हो गया है और वह मेरी बत्तीसों भौजाइयों में से नित्य प्रति एक एक को समझा कर त्यागता जा रहा है' यह समाचार शालिभद्र की बहिन सुभद्रा ने भी सुना। सुभद्रा को इससे बहुत दुःख हुआ। मेरे जिस भाई ने जीवन भर आनन्द ही आनन्द भोगा है जो बहुत कोमल शरीर वाला है और जिसे यह भी मालूम नहीं कि दुःख कैसा होता है वह संयम में होने वाले कष्ट किस तरह सहेगा! भिक्षा किस तरह करेगा? आदि विचारों ने सुभद्रा के हृदय में उथल पुथल मचा दी। इतने में ही उसका पति स्नान करने के लिये आया। अपने पति धन्ना को सुभद्रा अपने हाथ से ही स्नान कराया करती थी। धन्ना को स्नान करने के लिये आया देख कर सुभद्रा क्षण भर के लिये अपने हृदय का दुःख दबा कर धन्ना को स्नान कराने गई।

सुभद्रा धन्ना को स्नान कराने लगी परन्तु उसके

हृदय मे बन्ध-वियोग का दु ख उथल-पुथल मचा रहा था। सहसा उसे विचार आया कि मेरा भाई जब सयम ले लेगा तब मेरी भौजाइयो को कैसा भयकर दु ख होगा! मेरी भौजाइयो को कभी एक दिन के लिए भी पति-वियोग का दु ख नही सहना पडा है। वे मेरे भाई के आसपास उसी तरह बनी रही हैं, जिस तरह जीभ के आसपास दात बने रहते हैं। ऐसी दशा मे सहसा उन पर पति-वियोग का जो दु ख आ पडेगा, उसे सहकर वे किस तरह जीवित रहेगी। जिस तरह मुझे मेरे पति प्रिय हैं, उसी तरह उन्हे भी मेरा भाई प्रिय है।

इस प्रकार विचारती हुई सुभद्रा के हृदय का धैर्य छूट गया। दु ख के कारण उसकी आखो से गरम-गरम आसू निकल पडे। उस समय सुभद्रा, धन्ना का शरीर मलती हुई शीतल जल से स्नान करा रही थी। इसलिए उसकी आखो से निकले हुए गरम आसू धन्ना के शरीर पर पडे। अपने शरीर पर गरम-गरम बूद गिरा जानकर, धन्ना चौंक उठा। ये गरम बूद कहा से गिरे, यह जानने के लिए इधर-धर देखते हुए धन्ना ने सुभद्रा के मुह की ओर देखा तो उसे सुभद्रा की आखो से आसू गिरते दीख पडे। अपनी प्रिय पतिव्रता पत्नी की आखो मे आसू गिरते देखकर धन्ना को आश्चर्य हुआ? वह निश्चय न कर सका कि आज सुभद्रा की आखो से आसू क्यो गिर रहे हैं?

धन्ना ने सुभद्रा से कहा प्यारी सुभद्रा, आज तुम्हे ऐसा क्या दु ख है कि आसू बहा रही हो? मैंने दु ख के समय भी तुम्हारी आखो मे आसू नही देखे, फिर आज तुम्हारी आखो मे आसू क्यो! आज तुम्हे ऐसा क्या दु ख

है ? जहाँ तक मैं समझता हूँ तुम सब तरह से सुखी हो। तुम पितृगृह की ओर से भी सुखी हो और मेरी ओर से भी। तुम धनिक शिरोमणि शालिभद्र की अकेली तथा लाड़ली बहन हो और मेरी पत्नी हो। यद्यपि तुम्हारी सात सौत हैं परन्तु उन्होंने तुम्हें अपनी स्वामिनी मान रखा है तथा वे स्वेच्छापूर्वक तुम्हारी दासियां बनी हुई हैं। फिर समझ में नहीं आता कि तुम्हें किस दुःख ने आ घेरा है, जिससे तुम आंसू बहा रही हो! यदि अनुचित न हो तो तुम अपना दुःख मुझे भी सुनाओ।

धन्ना का कथन सुन कर सुभद्रा का हृदय दुःख से और भी उमड़ पड़ा। अपने दुःख का आवेग रोककर उसने करुण स्वर में कहा—नाथ मेरा भाई शालिभद्र संसार से विरक्त हो रहा है। वह संयम लेने की तैयारी कर रहा है। वह मेरी एक-एक भौजाई को एक दिन में समझाता और त्यागता जा रहा है। अब वह मेरी बत्तीसों भौजाइयों को समझा चुकेगा तब घर त्याग कर संयम ले लेगा। मेरा एक मात्र भाई-जिसने कभी कष्ट का नाम भी नहीं सुना है—संयम लेगा और पितृगृह की ओर से मैं भी सुख रहित हो जाऊंगी। इसी दुःख के कारण मेरी आंखों से आंसू निकल पड़े हैं।

सुभद्रा का कथन समाप्त होने पर धन्ना हंस पड़ा। उसने सुभद्रा के कथन का उपहास करते हुए कहा—तुम्हारा भाई शालिभद्र वीर नहीं कायर है। यदि वह कायर न होता तो अपनी एक-एक पत्नी को समझाने में एक-एक दिन क्यों लगाता? संसार से वैराग्य होने के पश्चात् स्त्रियों को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने की क्या आवश्य

कता थी ? क्या बत्तीस पत्नियों को एक ही दिन में और कुछ ही समय मे नही समझाया जा सकता ? वैराग्य होते ही जो ससार-व्यवहारो से अलग नही हो वह वीर नही कायर है।

सुभद्रा को यह आशा थी, कि मेरे पति मेरे भाई को किसी प्रकार समझा कर ससार-व्यवहार मे रुके रहने और इस प्रकार मुझे दु ख मुक्त करने का प्रयत्न करेंगे। लेकिन उसको अपने पति की ओर से ऐसी बात सुनने को मिली, जो आशा के विरुद्ध होने के साथ ही भाई का अपमान करने वाली भी थी। सुभद्रा को पति के मुख से यह सुनकर बहुत ही दु ख हुआ कि तुम्हारा भाई कायर है। यह बात सुभद्रा के हृदय मे छिद गई। उसने धन्ना से कहा—नाथ ! बत्तीस स्त्रिया एव स्वर्गीय सम्पदा त्यागना क्या कायरता है ? आप कहते है कि बत्तीस स्त्रियो को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने को क्या आवश्यकता है ? लेकिन इस समय मे ऐसी सम्पदा और बत्तीस स्त्रिया त्याग कर सयम लेने की तैयारी करने वाला, मेरे भाई के सिवाय दूसरा कौन है ? इस तरह की भोग-सामग्री वर्तमान मे किसने त्यागी है। ऐसा त्याग सरल नही है। अपन तो सासारिक भोगो मे ही पडे रहे और जो त्यागता है, उसे कायर कहकर उसकी निन्दा करें यह उचित तो नही है। भोगियो को उन लोगो की निन्दा न करनी चाहिए, जो भोगो को त्याग चुके हैं अथवा धीरे-धीरे भी त्याग रहे हैं।

सुभद्रा के इस कथन से धन्ना सहसा जागृत हो गया। वह सुभद्रा का कथन सुनता जाता था और अपने हृदय मे सोचता जाता था कि वास्तव मे सुभद्रा का कथन ठीक है।

मैं स्वय तो विषय भोग में पड़ा रहूं और जो एकदम म नही परन्तु धीरे-धीरे भी भोगों को त्याग रहा है उसको कायर बताऊं, यह अनुचित ही है। शालिभद्र को कायर बताना तभी ठीक हो सकता है जब मैं एकदम से भोगों को त्याग दू और यदि मैं ऐसा न कर सकू तो फिर मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि शालिभद्र कायर नही किन्तु वीर है और मैं कायर हू। मुझको सुभद्रा के कथन से बुरा नही मानना चाहिये किन्तु सुभद्रा के कथन को सदुपदेश रूप मान संसार-व्यवहार से निकल कर सयम स्वीकार करना चाहिए और सुभद्रा को यह बता देना चाहिए कि वीरता ऐसी होती है।

जिस प्रकार सोता हुआ सिंह बाण लगने से जागृत हो जाता है और आलस्य त्यागकर बाण मारने वाले की चुनौती स्वीकार कर लेता है उसी प्रकार धन्ना भी सुभद्रा के वचनों से जागृत हो उठा तथा सयम लेने के लिए तैयार हो गया। उसने सोचा कि मेरी प्रधान पत्नी ने मुझे अप्रत्यक्ष रूप से सयम लेने की स्वीकृति दे दी है इसलिए अब मुझे और किसी से स्वीकृति लेने की आवश्यकता नही रही है। इस प्रकार सोचकर धन्ना अपने शरीर पर से भद्रा का हाथ हटा कर उठ खड़ा हुआ और बाहर जाने लगा। धन्ना का कथन सुनकर तथा उसे जाता देख कर सुभद्रा हक्की-बक्की हो गई। वह दौड़ कर धन्ना के सामने आ उसके पैरो पर गिर पड़ी तथा हाथ जोड़कर कहने लगी— नाथ आप कहा जा रहे है? बात ही बात मे आप यह क्या करने के लिए तैयार हुए है? हो सकता है कि मैंने भ्रातृ-वियोग के दु ख में कोई अनुचित बात कह डाली हो।

इसलिए अपने कथन के विपय मे मुझे पश्चात्ताप है और मैं आप से बार-बार क्षमा मागती हू । आप मेरा अपराध क्षमा करिये । आप पुरुष है । आपको स्त्रियो की बात पर ध्यान देना उचित नही है । यदि आप भी स्त्रियो का अपराध क्षमा न करेंगे, स्त्रियो के प्रति उदारता न रखेंगे तो फिर पुरुप लोग किसका आदर्श सामने रख कर स्त्रियो का अपराध क्षमा करेंगे ? मैं भाई के विरक्त होने से पहले ही दु खी हू । मैं सोचती थी कि आप मेरे भाई को समझाकर मेरा दु ख मिटाएगे, लेकिन आप तो मुझे और दु ख मे डाल रहे है । जब कोई यह सुनेगा कि सुभद्रा की बातो के कारण उसके पति-गृह ससार त्याग कर सयम ले रहे है, तब वह मुझे भी क्या कहेगा और आपको भी क्या कहेगा ? यदि अपराध किया है तो मैंने, मेरी सात बहनो ने कोई अपराध नही किया है । फिर आप उन्हे कैसे त्याग सकते हैं ? यदि मैं अपराधिन हू तो मुझे त्याग दीजिये । मैं वह सब दण्ड सहने को तैयार हू जो आप मुझे देंगे, लेकिन मेरे अपराध के कारण मेरी सात बहनो को दण्ड मत दीजिये । मेरे और मेरी सात बहनो के जीवन आप ही है । आपके सिवा हमारा कौन है ? यदि आप भी हमे तुच्छ अपराध के कारण त्याग जाएगे, तो फिर हमारे लिए किसका सहारा होगा ? इसलिए मैं प्रार्थना करती हू कि आप मेरा अपराध क्षमा कर दीजिए और गृह त्याग का विचार छोड दीजिये । यह प्रार्थना करने के साथ ही मैं यह भी निवेदन कर देती हू कि हम सब आपको किसी भी तरह न जाने देंगी । स्त्रियो का बल नम्रता एव अनुनय-विनय करना है । हम आपको रोकने मे अपना यह सारा बल लगा देंगी, लेकिन आपको कदापि न जाने देंगी ।

सुभद्रा का कथन सुनकर धन्ना समझ गया कि सुभद्रा मोह के कारण ही मुझे रोकना चाहती है और साथ ही यह भी सोचती है कि उसकी बातों से रुष्ट होकर मैं संयम ले रहा हूं। उसने कहा बहन सुभद्रा तुम यह क्या कह रही हो ? तुमने मुझ अभी अपने वीरतापूर्ण शब्दों द्वारा इस ससार जाल से निकाला है और अब फिर उसी में फसाने का प्रयत्न करती हो। तुम्हारे वचनों से ही मेरी आत्मा जागृत हुई है और मैं संयम लेने को तयार हुआ हूं। इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं तुम से रूठ कर संयम ले रहा हूं। तुमने मेरा उपकार किया है अपकार नहीं किया है। वास्तव मे तुम मेरी गुरु बनी हो। तुमने मेरी आत्मा को घोर दु खमय ससार से निकालकर कल्याण-मार्ग पर आरूढ़ किया है। थोड़ी देर के लिए अपनी स्वार्थ भावना अलग करके विचार करो कि मेरा हित ससार-त्याग कर संयम लेने मे है या विषय–भोगों में फसे रहने म है ? क्या विषय भोगों मे फसे रहने पर आत्मा का कल्याण हो सकता है ? यदि नहीं तो फिर मेरा संयम लेना क्या अनुचित है ? आज मैं स्वेच्छा से संयम ले रहा हूं परन्तु यदि मेरी मृत्यु हो जाए तो उस दशा म तुम्हे पति–सेवा से वचित रहना पड़ेगा या नहीं ? तब मुझे कल्याण मार्ग से रोकने का यही अर्थ हुआ कि तुम क्षणिक एवं नाशवान सुख के लिए मेरा अहित करना चाहती हो। सुभद्रा जरा विचार करो। यदि तुम्हे मुझसे प्रेम है तो उसका बदला मेरे अहित के रूप म न दो। अपने स्वार्थ के लिए मुझे भवभ्रमण म मत डालो। नीतिकारो न कहा ही है कि—

यौवन जीवित चित्त छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता।
चंचलानि षडेतानि ज्ञात्वा धर्मरतो भवेत् ॥

अर्थात्—जवानी, जीवन, मन, शरीर की छाया, धन और प्रभुता ये छहो चञ्चल है, यह जानकर धर्म-रत होना चाहिए।

तुम्हारे कथन द्वारा इस बात को जानकर भी क्या मैं इन्ही मे उलझा रहू और धर्म मे रत न होऊ ? सासारिक विषय-भोग चाहे जितने भोगो, तृप्ति तो होती ही नही है और अन्त मे छूटते ही है। फिर स्वेच्छा से उन्हे त्याग कर सयम द्वारा आत्म-कल्याण क्यो न किया जावे ? 'यह मनुष्य-शरीर बार-बार नही मिलता। न मालूम कितने काल तक दु ख भोगने के पश्चात् यह मनुष्य-भव मिला है। क्या इसको विषय-भोग मे ही नष्ट कर देना बुद्धिमानी होगी ? क्या फिर ऐसा अवसर मिलेगा कि मैं स्वेच्छापूर्वक विषय-भोग से निवृत्त हो सयम द्वारा आत्मा का कल्याण करू ? यदि नही, तो फिर मेरा मार्ग क्यो रोक रही हो ? मुझे जाने दो। मैंने तुम्हे अपनी बहन कहा है। इस पवित्र सम्बन्ध को तोड कर फिर अपवित्र सम्बन्ध जोडने का प्रयत्न मत करो। तुम नीतिज्ञो के इस कथन की ओर ध्यान दो—

> यावत्स्वस्थमिद कलेवरगृह यावच्च दूरे जरा,
> यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुष ।
> आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्य प्रयत्नो महान् ?
> प्रोद्दीप्ते भवने च कूपखनन प्रत्युद्यम कीदृश ?

अर्थात्—जब तक शरीर रूप गृह बिगड़ा नही है, वृद्धावस्था दूर है, इन्द्रियो की शक्ति मारी नही गई है, और आयुष्य नष्ट नही हुआ है, तब तक बुद्धिमान् को

आत्मा के कल्याण का पूरा प्रयत्न कर लेना चाहिये। जब ये सब बातें न रहेगी तब आत्मकल्याण के लिये प्रयत्न करना वैसा ही निरर्थक होगा जैसा निरर्थक प्रयत्न घर में आग लगने पर कुआ खोदने का होता है।

धन्ना को समझाने तथा रोकने के लिये सुभद्रा ने बहुत प्रयत्न किया। उसकी सातों सौतें भी आ गईं और उन्होंने भी धन्ना से बहुत अनुनय–विनय की परन्तु वैराग्य के रंग से रंगे हुए धन्ना पर दूसरा रंग न चढ़ सका। उसने सब को इस तरह का उत्तर दिया और ऐसा समझाया कि वे सब अधिक कुछ न कह सकी। बल्कि धन्ना के समझाने का सुभद्रा पर तो ऐसा प्रभाव हुआ कि वह भी संयम लेने के लिए तैयार हो गई। उसने धन्ना से कहा कि आपके समझाने का मुझ पर जो प्रभाव हुआ है उसके परिणाम स्वरूप मैं भी वही मार्ग अपनाना चाहती हूं जो मार्ग आप अपना रहे हैं। इसलिए आप कृपा करके मुझे भी संयम मार्ग पर चलने के लिए साथ ले लीजिये। आप थोड़ी देर ठहरिए, मैं अभी आपके साथ चलती हूं।

सुभद्रा को संयम लेने के लिए तत्पर देख कर धन्ना को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सुभद्रा से कहा—तुम्हारे विचारों का मैं अभिनन्दन करता हूं। तुम तयार होओ तब तक मैं शालिभद्र से मिलकर उसकी दबी हुई वीरता जागृत करने का प्रयत्न करूं।

सुभद्रा से इस प्रकार कहकर तथा अपनी शेष पत्नियों को समझा-बुझा कर धन्ना शालिभद्र के घर गया। उसने भद्रा से पूछा कि शालिभद्र कहां है? अपने जामाता को अनायास आया देखकर तथा उसके शरीर पर पूरी तरह

वस्त्राभूषण न देखकर भद्रा आश्चर्य मे पड गई, लेकिन उसने यह विचार कर अपना आश्चर्य दवा दिया कि सभवत यह शालिभद्र के वैराग्य का समाचार सुनकर एकदम शालिभद्र को समझाने के लिये आये हैं। वह, धन्ना का स्वागत करके उसे शालिभद्र के पास ले गई। शालिभद्र ने भी धन्ना का सत्कार किया। धन्ना ने शालिभद्र से कहा— आप मेरे स्वागत सत्कार की वात छोड कर यह वताइए कि आपका क्या विचार है? मैंने सुना है कि आप सयम लेने वाले है? शालिभद्र ने कहा—आपने जो कुछ सुना है वह ठीक ही है। यह सामारिक सम्पदा मुझे अनाथ वनाये हुये है परतन्त्रता मे डाले है, इसलिये मैं इसको त्याग कर सयम लेना चाहता हू। स्त्रियो को समझा रहा हू, जो मुझे अपना पति मान रही हैं, परन्तु वास्तव मे न तो मैं ही इन्हे स्वतन्त्र वना सकता हू, न ये ही मुझे स्वतन्त्र वना सकती हैं।

धन्ना ने कहा—ससार त्यागने की वीरता का आवेश आने पर भी स्त्रियो को समझाने के लिए अधिक समय तक रुक कर उस आवेश को ठण्डा पडने देना ठीक नही है। जव सयम लेना ही है और इसके लिये पूरी तरह विचार कर चुके है, तव अधिक दिनो तक रुके रहने की क्या आवश्यकता है? वीर रस से भरा हुआ व्यक्ति भविष्य की चिंता नही किया करता और जो अपने भविष्य के सम्वन्ध मे चिंता करता है, उसके लिए यही कहा जा सकता है कि वह अभी गृह-ससार त्यागने मे पूरी तरह समर्थ नही है। इसलिए मैं तो यह कहता हू कि सयम लेने जैसे शुभ कार्य मे विलम्व करना अवाञ्छनीय है।

सुभद्रा को धन्ना की ओर से यह आशा थी कि ये

शालिभद्र को संयम न लेने के लिए समझाएंगे लेकिन उसने अब यह देखा कि ये तो शालिभद्र को शीघ्र संयम लेने के लिए उपदेश दे रहे हैं तब उसे बहुत ही आश्चर्य और दुःख हुआ। उसने धन्ना से कहा कि आप शालिभद्र को यह क्या उपदेश दे रहे हैं? क्या आप भी शालिभद्र को संयम न लेने की सम्मति न देंगे?

सुभद्रा के इस कथन के उत्तर में धन्ना ने कहा—शालिभद्र जी से मेरा जो सम्बन्ध रहा है उसे दृष्टि में रख कर मैं उन्हें वही सम्मति दे सकता हूं जिससे इनका हित हो। हितैषी सज्जन ऐसा ही किया करते हैं। जो इसके विरुद्ध करते हैं वे हितैषी नहीं हैं। मैं चाहता हूं कि शालिभद्र ने जो वीरतापूर्ण विचार किया है उस विचार को वीरतापूर्ण रीति से ही कार्यान्वित करें। इसी विचार से मैं शालिभद्र के पास आया हूं। तुम्हारी पुत्री के उपदेश से मैं भी वही मार्ग अपनाने के लिए तैयार हुआ हूं जिस मार्ग को शालिभद्र अपनाना चाहते हैं। तुम्हारी पुत्री केवल मुझे ही उपदेश देकर नहीं रही है किन्तु वह भी संयम लेने की तैयारी कर रही है। मैंने सोचा कि जिनके कारण हम लोगों ने संयम लेने का विचार किया है वे शालिभद्र हम लोगों से पिछड़े हुए न रह जावें। यह सोचकर मैं शालिभद्र को उसी प्रकार ललकारने आया हूं जिस प्रकार वीरता बताने के लिए सिंह को ललकारा जाता है।

धन्ना का यह कथन सुन कर भद्रा को तो—पुत्र पुत्री जामाता तीनों ही संयम ले रहे हैं इस विचार से—दुःख हुआ परन्तु शालिभद्र को प्रसन्नता हुई। उसके हृदय में संयम का अंकुर तो उत्पन्न हो ही गया था। धन्ना के

कथन-रूपी जल से वह अकुर बढ गया और वह भी धन्ना के साथ ही दीक्षा लेने के लिये तैयार हो गया । शालिभद्र को दीक्षा लेने के लिये तैयार करके धन्ना अपने घर आया । उधर सुभद्रा अपनी सौतों को समझा-बुझा कर दीक्षा लेने की तैयारी कर रही थी । राजा श्रेणिक ने जब यह सुना कि शालिभद्र और धन्ना दोनो ही ससार से विरक्त हो गये हैं तथा सयम लेने की तैयारी कर रहे हैं, तब वह भी धन्ना के यहा आया । उसने दीक्षोत्सव की तैयारी कराई । अन्त मे सुभद्रा सहित धन्ना पालकी मे बैठ कर शालिभद्र के यहा चला । उधर शालिभद्र भी अपनी पत्नियो को समझा-बुझाकर दीक्षा लेने के लिये तैयार हो गया था और धन्ना की प्रतीक्षा कर रहा था । इतने मे वह पालकी शालिभद्र के यहा पहुच गई, जिसमें सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था । इन दोनो को देखकर शालिभद्र प्रसन्न हुआ, परन्तु भद्रा का दुख बढ गया । वह कहने लगी यदि मुझे धैर्य देने के लिये सुभद्रा रही होती तब भी ठीक था, परन्तु वह भी तो जा रही है ! भद्रा को विफल देखकर सुभद्रा ने उसे समझा-बुझाकर धैर्य दिया ।

राजा श्रेणिक ने शालिभद्र के दीक्षोत्सव की भी तैयारी कराई । शालिभद्र भी एक पालकी मे बैठा । शालिभद्र के साथ उसकी माता भद्रा रजोहरण पात्र आदि लेकर बैठी । एक पालकी मे सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था और दूसरी मे भद्रा सहित शालिभद्र । धन्ना की शेष सात पत्नियां धन्ना की पालकी के आस-पास थी और शालिभद्र की बत्तीस पत्नियां शालिभद्र की पालकी के आस-पास थी । राजा श्रेणिक तथा नगर के और सब लोग भी साथ थे ।

उत्सवपूर्वक सब लोग भगवान् महावीर की सेवा में उपस्थित हुए। शालिभद्र धन्ना और सुभद्रा पालकियों से उतर कर भद्रा के आगे-आगे भगवान् महावीर के सामने गये। आंखों से आसू गिराती हुई भद्रा ने भगवान् से प्रार्थना की—प्रभो मेरा पुत्र शालिभद्र मेरी पुत्री सुभद्रा और मेरे जामाता धन्नाजी ये तीनों ससार के दुःख से घबरा कर आपकी सेवा में उपस्थित हुए है और सयम स्वीकार कर ससार के जन्म-मरण रूपी दुःख से मुक्त होना चाहते हैं। मैं आपको शिष्य रूपी भिक्षा देती हूं। आप मेरे द्वारा दी गई यह भिक्षा स्वीकार कीजिये।

भगवान् से इस तरह प्रार्थना करके भद्रा ने शालिभद्र सुभद्रा और धन्ना से कहा—तुम तीनों जिस ध्येय को लेकर गृहसंसार त्याग रहे हो तथा सयम ले रहे हो वह ध्येय पूरा करना संयम का भलीभांति पालन करना सयम में होने वाले कष्ट को वीरता के साथ सहना तप करना सन्तों की सेवा करना और सब के कृपापात्र बन कर ऐसा प्रयत्न करना कि जिससे फिर इस ससार में जन्म लेकर किसी माता को दुःखी न करना पड़े।

भद्रा की आज्ञा एव शालिभद्र धन्ना और सुभद्रा की प्रार्थना से भगवान् ने धन्नाजी शालिभद्रजी और सुभद्रा को दीक्षा दी। भगवान् ने दीक्षा देकर सुभद्रा को सती चन्दन बाला के सुपुर्द कर दिया। दीक्षा—कार्य समाप्त होने पर शालिभद्र एव धन्नाजी की त्यक्त पत्नियां भद्रा और राजा श्रेणिक सब लोग अपने-अपने घर गये तथा भगवान् महावीर भी सन्त सतियों सहित राजगृह से विहार कर गये।

२३ : संथारा

रम्य हर्म्यतल न कि वसतये श्राव्य न गेयादिकं,
किं वा प्राणसमा समागमसुखं नैवाधिक प्रीतये ।
किन्तूद्भ्रान्तपतत्पतङ्गपवनव्यालोलदीपाङ्कुरा—
च्छायाचचलमाकलय्य सकलं सन्तो वनान्त गता ॥

अर्थात्—क्या रहने के लिए उत्तमोत्तम महल और सुनने के लिए उत्तमोत्तम गीत न थे तथा क्या उन्हे प्यारी स्त्रियो के समागम का सुख न था जो सत लोग जगल मे रहने गये ? उन्हे ये सब कुछ प्राप्त था, लेकिन उन्होने इन सबको उसी प्रकार चचल समझ कर छोड दिया, जिस प्रकार पतग के पखो की हवा से हिलने वाले दीपक की छाया चचल होती है और इसी कारण वे वन मे रहते हैं ।

महात्मापुरुष गृह-ससार त्याग कर वन मे निवासी करते है, सो इसलिए नही कि ससार मे उन्हे विषयजन्य सुख प्राप्त न थे । किन्तु इसलिए रहने लगे है कि यह ससार स्वय को विषय भोग की आग से नष्ट कर रहा है । इसलिए यदि हम इसमे रहे तो ससार के लोगो की तरह हमारा भी विनाश होगा । इस तरह स्वय को सासारिक विषय-भोगो की आग से बचा कर अपूर्व शान्ति मे स्थापित करने के लिए ही महात्मा लोग गृह त्याग कर वन मे रहते हैं । जो लोग घर, स्त्री प्रभृति न होने के कारण अथवा ससार का भार वहन करने की अयोग्यता के कारण या गृह स्त्री आदि नष्ट हो जाने के कारण ससार से विरक्त हो जाते है, उनकी विरक्ति श्रेष्ठतम नही कही जा सकती ।

प्राप्त सांसारिक सुख भी स्वेच्छापूर्वक त्याग देना श्रेष्ठ विरक्ति है ।

शालिभद्र मुनि और धन्ना मुनि ने श्रेष्ठतम वैराग्य ज्ञान से ही गृह त्याग कर संयम लिया था । भगवान् से दीक्षा लेकर दोनो मुनि संयम का पालन करने लगे । दोनों मुनियों ने मास-मास खमण की तपस्या प्रारम्भ कर दी । इस तरह की तपस्या करते हुए उन दोनो को बारह-बारह वर्ष बीत गये । बारह वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् वे दोनों भगवान् के साथ फिर राजगृह आए । वह दिन दोनों मुनियों के पारणे का था । इधर राजगृह नगर में भगवान् के पधारने की खबर हुई । भद्रा ने भी सुना कि भगवान् पधारे हैं और उन्हीं के साथ मुनिव्रतधारी मेरे पुत्र तथा जामाता का भी आगमन हुआ है । यह जानकर भद्रा एवं उसकी पुत्रवधुओं को बहुत ही आनन्द हुआ । वे सब दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी करने लगी ।

भद्रा के यहां तो भगवान् एवं उनके साथ की मुनि मण्डली का दर्शन करने के लिए प्रयाण की तैयारी हो रही थी और उधर शालिभद्र मुनि तथा धन्ना मुनि भिक्षा के लिए नगर में जाने की स्वीकृति प्राप्त करने को भगवान् की सेवा में उपस्थित हुए । भगवान् ने दोनो मुनियों को भिक्षा के लिए नगर में जाने की स्वीकृति देकर शालिभद्र मुनि से कहा—शालिभद्र आज तुम्हारी माता के हाथ से तुम दोनों का पारणा होगा ।

भगवान् से स्वीकृति प्राप्त करके धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि भिक्षा के लिए नगर में गए । दोनो ने विचार

किया कि जब भगवान् ने पारणा होने के विषय मे निश्चय कर दिया है, तब भद्रा के ही घर चलना चाहिए । किसी दूसरे के घर जाना व्यर्थ है । इस तरह विचार कर दोनो मुनि भद्रा के यहा आए लेकिन भद्रा के यहा तो भगवान् का दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी हो रही थी । तप के कारण दोनो मुनियो की आकृति एव उनके शरीर मे भी ऐसा अन्तर पड गया था कि भद्रा के यहा उन्हे किसी ने भी न पहिचाना । अवसर न देखकर दोनो मुनि भद्रा के घर से लौट पडे । उन्होने किसी को अपना परिचय भी नही दिया ।

भद्रा के घर से निकल कर दोनो मुनि आपस मे कहने लगे—भगवान् ने कहा था कि तेरी माता के हाथ से पारणा होगा, लेकिन भद्रा के यहा से तो खाली लौटना पडा ! कदाचित् सूर्य-चन्द्र तो बदल सकते हैं, परन्तु भगवान् ने जो कुछ कहा वह कदापि मिथ्या नही हो सकता । इसलिए एक बार फिर भद्रा के घर चलना चाहिये । सम्भव है कि इस बार भिक्षा मिले ।

इस प्रकार विचार कर दोनो मुनि फिर भद्रा के घर गए लेकिन इस बार भद्रा के गहरक्षक सेवको ने उन्हे द्वार पर ही रोक दिया, भीतर नही जाने दिया । दोनो मुनि लौट गये । उन्होने निश्चय किया पारणा हो या न हो, अब आज फिर भद्रा के यहा न जाना चाहिये । यह सोच कर वे भगवान् की सेवा मे लौट चले ।

दोनो मुनि चले जा रहे थे । जाते हुए दोनो मुनियो को एक दूध बेचने वाली वृद्धा ने देखा । मुनियो को देख

कर वृद्धा बहुत ही हर्षित हुई। उस इतना हुए हुआ कि उसके स्तनों से दूध की धारा छूटने लगी। वृद्धा ने दोनों मुनियों के सम्मुख खड़ होकर प्रार्थना की—हे प्रभो, मेरे पास दूध है। कृपा करके थोड़ा दूध लीजिये। आपने मेरे हाथ से दूध लेने की कृपा की तो मैं अपने को बहुत सद्‌भागिनी मानूंगी।

वृद्धा की प्रार्थना सुनकर दोनों मुनियों ने विचार किया—इस वृद्धा की प्रार्थना कैसे अस्वीकार कर दें? एक ओर तो भद्रा के घर का अनादर और दूसरी ओर इसके द्वारा की जाने वाली यह विनम्र भावना! दोनों में कितना अन्तर है! यद्यपि भगवान् ने यह कहा था कि तुम्हारी माता के हाथ से पारणा होगा लेकिन भगवान् की इस बात का आशय भगवान् ही जाने। भगवान् की सेवा में पहुंच कर इसका निर्णय करेंगे।

इस प्रकार विचार कर दोनों मुनियों ने वृद्धा के सम्मुख अपने पात्र रख दिये। वृद्धा ने हर्ष तथा उत्साह के साथ पात्र दूध से भर दिये। वह हर्षित होती हुई तथा अपना जन्म सफल मानती हुई अपने घर गई।

दोनों मुनि पारणा करके भगवान् की सेवा में उपस्थित हुए। दोनों को देख कर भगवान् ने उनसे कहा—तुम दोनों पहले दो बार भद्रा के यहां गए थे परन्तु तुम्हें भद्रा के यहां से भिक्षा नहीं मिली। जब तुम लौट कर आ रहे थे तब तुम्हें दूध बेचने वाली एक वृद्धा मिली। उसने तुम्हें दूध की भिक्षा दी। तुम सोचते होओगे कि भगवान् के कथनानुसार हमारा पारणा हमारी माता के हाथ से नहीं

हुआ । परन्तु हे शालिभद्र, वह दूध बहराने वाली वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है । उस वृद्धा के प्रताप से ही तुझे इस भव मे सासारिक सम्पदा प्राप्त हुई और फिर उस सासारिक मम्पदा को त्याग कर तू यह सयम रूप सम्पत्ति प्राप्त कर सका है ।

यह कह कर भगवान् ने शालिभद्र के पूर्वभव का वृत्तान्त उसे सुना दिया । कहा कि—'हे शालिभद्र, पूर्वभव मे तू एक ग्वाले का बालक था । तू जब बालक था, तभी तेरा पिता मर गया था, इसलिए तेरी वह दूध देने वाली वृद्ध माता तुझे लेकर इस राजगृह नगर मे ही रहने लगी थी । तेरी माता लोगो के यहा मेहनत मजदूरी करती थी और तू लोगो की गायो के बछडे चराया करता था । उस समय तेरा नाम सगम था । एक दिन, दूसरे लडको को खीर खाते देख कर तूने अपनी मा से खीर मागी । तेरी मा ने इधर-उधर से दूध, शक्कर, चावल आदि लाकर तेरे लिए खीर बनाई । तू खीर ठडी होने की प्रतीक्षा मे थाली मे खीर लेकर बैठा था, इतने ही मे एक तपस्वी साधु भिक्षा के लिए आये । यद्यपि तूने पहले कभी खीर नही खाई थी, फिर भी उन मुनि को देख कर तुझे हर्ष हुआ तथा तूने प्रसन्नता—पूर्वक थाली मे की सब खीर मुनि को वहरा दी । मुनि के जाने के पश्चात् तू थाली मे लगी हुई खीर चाटने लगा । इतने मे ही तेरी माता आ गई । उसने तुझे खीर दी । तू ने इतनी अधिक खीर खाई कि जिसे पचाना तेरी शक्ति से बाहर था । इस कारण तुझे सग्रहणी हो गई और अन्त मे उसी रोग से तेरी मृत्यु हो गई, परन्तु तेरे हृदय मे उन मुनि का ध्यान बना ही रहा, जिन्हे तूने खीर का दान दिया था ।

खीर का दान देने एव अन्त समय में मुनि का ध्यान करने के कारण ही इस भव म तुझे इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख-सामग्री प्राप्त हुई। इस प्रकार जिसने तुझे दूध का दान दिया वह वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है।"

भगवान् का कथन सुनकर शालिभद्र मुनि को बहुत ही आनन्द हुआ व सोचने लगे—भगवान् ने पूर्वभव का वृत्तान्त सुनाकर हमारी आंख खोल दी है। भगवान् ने यह बता दिया है कि पूर्वभव में कसे-कैसे कष्ट सहने पड़े और किस कार्य के परिणाम स्वरूप इस भव में संयम का यह अवसर मिला है। इस सयोग के प्राप्त होने पर भी क्या अपन ऐसा प्रयत्न न करेंगे कि जिससे अपन को फिर जन्म-मरण न करना पड़े और कष्ट न सहना पड़े। यदि अपन ने ऐसा प्रयत्न न किया तो यह अपनी भयंकर भूल होगी। अब अपना शरीर भी क्षीण हो गया है इसलिये अपन को पंडित मरण द्वारा शरीर त्याग कर जीवनमुक्त हो जाना चाहिए।

इस प्रकार विचार कर शालिभद्र मुनि तथा धन्ना मुनि ने भगवान् से सथारा करने की आज्ञा मागी। भगवान् ने दोनो को सथारा करने की स्वीकृति दे दी। दोनों मुनि पर्वत पर चढ़ गये। वहा उन्होने एक शिला पर विधिवत् पादोपगमन सथारा कर लिया।

भद्रा तथा उसकी पुत्रवधुएं एव धन्ना की सातो पत्निया भगवान् को वन्दना करने के लिए गई। भगवान् को वन्दना कर चुकने के पश्चात् भद्रा ने भगवान् से कहा—प्रभो! धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि क्यो नही दीखते? भद्रा के इस प्रश्न के उत्तर मे भगवान् न कहा—वे तुम्हारे घर

गये थे, परन्तु तुमने उन्हे नही पहचाना, न तुम्हारे यहां से उन्हें भिक्षा ही मिली। वे दोनो मुनि तुम्हारे यहा से लौटे आ रहे थे, इतने मे ही मार्ग मे शालिभद्र मुनि की पूर्वभव की माता मिल गई, जिसने दोनो मुनियो को दूध वहराया। पूर्वभव की माता द्वारा प्राप्त दूध से पारणा करके दोनो ने अपना-अपना शरीर अशक्त जानकर और अवसर आया देख कर, मेरी स्वीकृति ले वैभारगिरि पर्वत पर सथारा कर लिया है।

भगवान् से यह सुन कर, भद्रा एव धन्नाजी और शालिभद्रजी की पत्नियो को खेद हुआ। भद्रा अपनी मडली के साथ मुनियो के अन्तिम दर्शन करने के लिए वैभारगिरि पर गई। दोनो मुनि परम समाधि मे मग्न थे, आत्मध्यान मे लीन थे। भद्रा आदि ने एक वार नही किन्तु कई वार यह प्रयत्न किया कि धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि एक वार हमारी ओर देख कर हमसे कुछ कहे, लेकिन वे अपने एक भी बार के प्रयत्न मे सफल नही हुई।

देवलोक की प्राप्ति

कई लोगो का कहना है कि धन्ना मुनि तो सथारे मे अविचल रहे परन्तु शालिभद्र मुनि ने तो भद्रा का रुदन सुन आख खोल कर भद्रा आदि की ओर देख लिया था। परिणामत सथारा समाप्त होने पर धन्ना मुनि तो सिद्ध, वुद्ध एव मुक्त हो गए, लेकिन शालिभद्र मुनि सिद्ध-मुक्त होने के वदले सर्वार्थसिद्ध विमान मे गए। किन्तु ऐसा कहना ठीक नही है। वास्तविक वात यह है कि शालिभद्र मुनि

का आयुष्य सात लव कम था इसमें धन्ना मुनि तो सिद्ध हो गये और शालिभद्र मुनि सर्वार्थसिद्ध विमान में गये।

सर्वार्थसिद्ध विमान में सर्वोत्कृष्ट सुख भोगकर वहां से च्युत होने के पश्चात् मनुष्यभव धारण करके शालिभद्र भी सिद्ध बुद्ध और मुक्त होंगे।

जवाहर-साहित्य

	किरण		किरण
दिव्य दान	१	दिव्य जीवन	२
दिव्य सन्देश	३	जीवन धर्म	४
सुबाहुकुमार	५	रुक्मिणी विवाह	६
जवाहर स्मारक	७	सम्यक्त्वपराक्रम भाग-१	८
सम्यक्त्वपराक्रम भाग-२	६	” ” ” ३	१०
” ” ” ४	११	” ” ” ५	१२
धर्म और धर्मनायक	१३	राम वन गमनभाग-२	१४
गम वन गमन भाग-२	१५	अजना	१६
ाण्डव चरित्र भाग-१	१७	पाण्डव चरित्र भाग-२	१८
कानेर के व्याख्यान	१६	शालिभद्र चरित्र	२०
ारवी के व्याख्यान	२१	सम्वत्सरी	२२
जामनगर के व्याख्यान	२३	प्रार्थना प्रबोध	२४
उदाहरण माला भाग-१	२५	उदाहरणमाला भाग-२	२६
उदाहरण माला भाग-३	२७	नारी जीवन	२८
अनाथ भगवान भाग-१	२६	अनाथ भगवान भाग-२	३०
गृहस्थ धर्म भाग-१	३१	गृहस्थ धर्म भाग-२	३२
गृहस्थ धर्म भाग-३	३३	सती राजमती	३४
सती मदनरेखा	३५	हरिश्चन्द्र तारा	३६
सकडाल पुत्र श्रावक	३७	जवाहर ज्योति	३८
जवाहर विचार सार	३६	सुदर्शन चरित्र	४०
सती वसुमति भाग-१	४१	सती वसुमति भाग-२	४२

(किरण ४३ से ५० भगवती सूत्र के भाग १ से ८)